



# नल्ल द्मान

१२

प्रधान संपादक

डा० विश्वनाथ प्रसाद



संपादक

डा० वासुदेव शरण अग्रवाल

श्री दौलतराम-श्याल

१० मु० हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ

आगरा विश्वविद्यालय

प्रकाशक  
संचालक,  
ड० मुं० हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ  
भायरा विश्वविद्यालय भायरा ।

प्रथम संस्करण १९६१ ई०  
मूल्य ७)

मुद्रक १  
हरिकृष्ण कपूर  
भायरा यूनिवर्सिटी प्रेस  
भायरा ।

## नलदमन

### अनुक्रमणिका

	पृष्ठ
१ प्राक्कथन	१-२
२ प्रतिपों के चित्र	३-६
३ श्रेय की प्रतिपों	१-६६
४ नल दमन	१-१६३
५ साप्ताहिकमजिका	१-२



## प्राक्कथन

संस्कृत के नैपथ्य महाकाव्य में कोसलदेश के राजा नल और निपथदेश के राजा की कन्या समयन्ती की कथा जिस विस्तार और लासिय के साथ बर्णित है उसका जोड़ नहीं। यों नल-समयन्ती का धारण भारत में घनेक रूपों में इतना घबिक प्रचलित है कि साधारण से साधारण जन भी नल की कथा को कहने-सुनने में रस सता है।\* नैपथ्य की कथा-माधुरी से प्राकृतित होकर ही फँसी ने उसका फारसी में अनुवाद किया था। फँसी का नल-समयन्ती-बर्णित प्रथम समय में बड़े बाव से पढ़ा मुना जाता था। काव्य-प्रवाह से धार उसकी चर्चा भी नाम सेव रह गई है। फँसी की धारा पर धावे चलकर सखनऊ के मूरदास ने नल-समन नामक काव्य की रचना पुरबी भाषा में की।

प्रथम देव में न जाने कब से यह परिपाटी चली घा रही है कि जहाँ नेत्रों की पयोति गई कि 'मूरदास' की उपाधि मिली। और फिर जितने भी मूरदास मिलें, यदि उनके नाम से कोई रचना मिलती है तो बिना किसी सोच-विचार के बहु तुरंत प्रसिद्ध प्राक्यापी मूरदास के साथ जोड़ दी जाती है। यही कारण है कि इस समय मूरदास के रचयिता पल्ल शिरोमणि मूरदास की जीवनी का सही रूप खोज निकालना बुरह हो गया है।

यही बटना इस ग्रंथ के लेखक मूरदास के साथ भी बटी। इनका प्रथ तो लोगों के सामने धाया नहीं। प्रथ की नाममात्र की चर्चा से लोगों ने यही समझा कि जन्ही बिक्यात मूरदास ने नल-समन नामक प्रथ की रचना की है। इती प्राक्यम क बर मोलोकवासी मार्लेहु इतिचंद्र ने प्रथने कविचरनमुधा नामक पत्र में इस ग्रंथ को खोज निकालनेवाले को एक हजार रुपये का पुरस्कार देने की धायणा कर बी वी। परन्तु किसी भी प्रकार उन समय इस ग्रंथ का पता नहीं चल सका। किवन्ती क धार पर स्वर्णाय भी राधाकृष्णदास जी ने प्रथने मूरदास के जीवनचरित में लिख दिया कि "मूरदास जी ने नल-समयन्ती नाम का एक काव्य प्रथ भी बनाया था पर वह प्रथान्य है।" यह किवन्ती कोरे प्रथ पर ही प्रथनलबित वी जो कमी या बेसी धमी तक जाता घा रहा है। उदाहरणार्थ इच्छर है डा० प्रेमनयन टंडन का दोब प्रथ 'मूर की मापा' (हिंदी साहित्य मंडार, गंगाप्रसाद रोड, लखनऊ, संन् १९१७ ई०) पृष्ठ ६११। इन प्रथ का निराकरण प्रथम प्रथम तब हुमा जब कि सं० १९०५ की नापरी प्रचारिणी पत्रिका वर्ष ४३, भाग १९ अंक २ में प्रिण प्राक बेसु म्युनियम बर्बई के संघहाय्य डा० मोठीचन्द्र ने मूरदास के नल-समन की नस्तामीक पद्यों में सिखी प्रति का विवरण प्रकाशित किया।

\* बर प्रदेश में बोला नाम से जिस संवे कथा-पोथ का प्रचलन है, उसमें वस्तुतः नल की कथा ही धाई जाती है।

† "सिख कारन यह प्रेम कहानी मूरदास की मापा विष धानी।"

इस ग्रंथ की रचना सखनऊ के सूरदास ने सन् १०१८ हि० = १९२७ ई० में की थी। प्रथम में उन्होंने अपना प्रीर साहूदेव का पूरा परिचय दिया है तथा सुफियों की महनबी पद्धति का पूरा निर्याह करते हुए इरक हकीमी का बड़ी बारीकी के साथ कथन किया है। काव्य-शैली तो जैसे उनकी कसम से नू नू पड़ता है, बिद्यकी बातचीत रसम पाठक स्वयं स्थान-स्थान पर पावेंगे। मैं अपनी ओर से उसके भास्वादन में ब्यवधान उपस्थित करना उचित नहीं समझता।

ग्रंथ की प्रतिमें प्रीर काव्यगत विद्यपदाओं की बर्नी सुविज्ञ सम्पादकों ने अपने कथन में विद्यरूप से किया है। मैं समझता हूँ कि उनकी इस भूमिका से पाठकों को रचना का पूरा समं समझने में क्वचित् भी कठिनाई नहीं होगी। उपर्युक्त हस्तलिखित प्रतिमें के लिखित रूप को स्पष्ट करने के लिए दोनों प्रतिमें के धारि प्रीर ग्रंथ के पर्थों के फोटो इसमें प्रकाशित क्रिमे जा रहे हैं, बिद्यसे उनका वास्तविक रूप सामने आ सकेगा।

ग्रंथ का परिचय तो सम्पादकों ने दिया ही है। मेरा कर्तव्य उन सोयों का साधुबाध करना है जिन्होंने अपनी बहुमुख्य सामग्री देकर हमें इस ग्रंथ के प्रकाशन का अवसर दिया है। उनमें सर्व प्रथम हम डा० मोठीकर के प्रति अपनी ओर से तथा समस्त हिंदी जनत् की ओर से कृतज्ञता ज्ञापन करते हैं, जिन्होंने ग सिर्फ अपनी बोधित प्रति प्रीर बंदई संप्रहालय की प्रति की प्रतिनिधि प्रदान की है बल्कि मूल के दो पुस्तों को प्रकाशित करने की अनुमति भी दी है। इसके अतिरिक्त मुनि काव्यसागर भी ने अपने द्वारा संवृहीत बहुमुख्य हस्तलिखित प्रति को विद्यापीठ की देकर जित सदारता का परिचय दिया है, उसके लिए हम उनके बहुत ही आभारी हैं। यह धन तक की प्राप्त सूचना के अनुसार नागरी सभारों में लिखी हुई एकमात्र प्रति है।

विद्यहर डा० वासुदेव शरण प्रप्रवास ने इस समस्त सामग्री का उपयोग करके श्री बीलज राम ज्योति के साहाय्य से इस ग्रंथ की सम्पादित किया है जिससे एक चिरकालिक प्रभाव की पूर्ति हुई है। इसके लिए के शूरि शूरि साधुबाध के पात्र हैं।

धागरा संदल इस समय अष्टस्रापी सूरदास की बयस्ती का आयोजन कर रहा है। आयोजकों के अनुसार उनका जगत्स्थान यही धागरे के पास पास का साही बनि है। अतएव इस अवसर पर विद्यापीठ इन सखनबी सूरदास की यह रचना प्रकाशित करके उक्त आयोजन में अपना सक्रिय योगदान दे रहा है। इस ग्रंथ के प्रकाशन से सूरदास के नाम पर अटकने वाले दोष-कर्ताओं को यही मार्ग-दर्शन होगा ऐसा मेरा विश्वास है।

क मु० हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ,  
धागरा विश्वविद्यालय धागरा।  
अस्य तृतीया सं० १०१८ वि०

विद्यवाप प्रसाद  
संभासक

॥६॥ स्वस्ति श्रीसर्वज्ञाय नमः ॥ अथ नलद  
 मनसरदासकृतमारभ्यते ॥ सुमरुं आदिअ  
 नादजुकोई ॥ आदिअंतिपुनैके सोई ॥  
 जाहि नवसर्नरूपनरेषा ॥ अवगतिगति  
 अषेषबहुषेषा ॥ रासिथलनचपलवमा  
 नछोटा ॥ तरुणानबृहालघानमोटा ॥ बहु  
 तनथोडासचानफूटा ॥ मिलानबिचरछ  
 राननदटा ॥ ४ ॥ ज्योकुछत्योकानां ववताप  
 वं ॥ नां वजुंधरै धरै तिहिनां ॥ पा ॥ नाउं धस  
 तिषिनसरगुणहोई ॥ जोनिर्गुणतिहिनां  
 वेनकोई ॥ ६ ॥ नाउं एहीजोकहेसनाउं  
 ॥ ६ ॥ कहितपरशषतनाउं ॥ ७ ॥ वोदुजु  
 रूपवाकोअनकह्या ॥ वचननेचलेतहां  
 थकिरह्या ॥ ८ ॥ जहावचनकहिगवनन  
 होई ॥ तहांकोराविधबसैकोई ॥ ९ ॥ दोह  
 रा ॥ आपनवनानवनैबिनाआपनवनांव  
 नाव ॥ ज्योसबनात्यांहीबनाकहितनव  
 नैबनाव ॥ १० ॥ जअपिज्योत्यांकेनजाई ॥ पेघ  
 टऔघटरह्यासमाई ॥ जहांनवोहिसोवोर  
 नकोई ॥ वोरवोरमेएकेसोई ॥ अपुनछेद



उपनिषत्प्रमाणपरिच्छेदः

विष्णुसंहिता

१५३ ॥ अथ ॥ विश्वं विश्वानां तन्मयं ॥ १ ॥  
 ह्रियेव भुवना अवजुभागसेहभयमोरा मोरैहा  
 यकात्तभयतोस कातोरेश्रौणवक्तिश्रामु काय  
 माधुश्मसोनु जोहोतोसैकुरुदुराई तैतुमो  
 अतमिदुसाईदो ॥ भलीबुरीअतस्वरी जभला  
 त्तहृत्कीरित नवेनजधिपपुरीमुदेकेकेटअनीत  
 ॥ वै ॥ कृहियेवचनदीनदेयेगामु भोजनवसजव  
 लेनिहियंअपितुकरुन्दुतबहुतुमुभमाना अस्तु  
 तकरतकरतनअघाना माहाराजतुसुनोतिवी  
 दीप्ता जहियेनप्रतयावनकाह्ना तुलैसैमैतुस  
 नहिजाना मायाकमदमातभुलाना तुलसेतुल  
 हीदीनदियाला अधमऊधारअधनप्रीतपाला  
 सोमायसुनभईनमोरी जाकारनभेतुमसुतोरीमा  
 योमैअवचलेकेजानी सोकराजायोहाथविजानी  
 कामनिदानपरातुलताईसेतुलराधीलीनदो  
 साई नोसरकेउअधनरणा तुलसोअधमऊधा  
 रनदूजा ॥ ये ॥ करस्तुततमराजजिदेविदाभयोगहि  
 पाईमनीयाहोउजहंको सोताहोपरोयोजई  
 पैमीकथसुचैसुनायेमोईहोरेवेकुंठीपावे आत्म  
 जानकपायहृकृदि मुनिपिहितहृदेमेलही कर  
 न्यौमुनैयोवहृतविनानहरिकथासुनातेवहृतकि  
 स्पानइस्कमास्फतयोगमैकह्यावलजानकेपरस  
 लहा मनठातिसोईयहृपावे अतरलंयेसोईप्रलयुत  
 पावे चैगपिरसाटेस्पहिवमिलैतोवीजाम्बस्फन दे  
 हृदेहिदोईउगगीअधरमौतनिदानाम्यत११५पत्र  
 वृहज्ज्ञानकोपाइके पावेपदनिरचाना ॥

विष्णुसंहिता



समुद्रों आदि आदि को कहते हैं  
 समुद्रों आदि आदि को कहते हैं  
 समुद्रों आदि आदि को कहते हैं  
 समुद्रों आदि आदि को कहते हैं  
 समुद्रों आदि आदि को कहते हैं  
 समुद्रों आदि आदि को कहते हैं  
 समुद्रों आदि आदि को कहते हैं  
 समुद्रों आदि आदि को कहते हैं  
 समुद्रों आदि आदि को कहते हैं  
 समुद्रों आदि आदि को कहते हैं

...  
 ...  
 ...



نام است سعید اقرای ثوق اکثر مجموعہ عم روای لطافت امیر  
 لرد و مار بیج حقیقت دوی از و ص کس لدا اب ثوق با ص ده اصوات  
 با ص جہدم ثور شمال بدیکسہ بوقت طہر موافق امر ما صلادہ والحد  
 صیحت لبدن معاصر اطلاق سولت لسان رسم وقت خام روان  
 کسید صوت و دروت طلوع مہرمان مطلقے مان ولیر خان سلطہ اللہ تعالیٰ  
 احقان س ما رمد اساتہ ولد سید محمد راجہ حسن الحسین الخاں  
 کسید و کیمند و دہموی و پہل بر ستون علم و لوس محی ثلث بلور کس  
 ہا و بادشاہ عاری حلاکت مکہ و سلطہ و امان رہہ و اص  
 ایک ہس ایک سکر ایک و نا کا کھ حوت سور ہینے  
 صے لکھ کتے کتے سور تہ نل خام کسہ کسہ ام  
 سپورن کہو ہدی کتہ او کسہ جو با کسہ  
 امد دای کھ ا نظار کیاں کسہ  
 اگر بر کسہ سورس با ری سہ و  
 دو باغ کسہ اساتہ و سول  
 کسہ رالرد و مہر ثور  
 کسہ کسہ کسہ  
 کسہ کسہ کسہ  
 کسہ کسہ کسہ

## ग्रन्थ की प्रतियाँ

प्रस्तुत संपादन ग्रंथ की दो प्रतियों के आधार पर हुआ है। प्रथम ति सभा (काशी मागरी प्रचारिणी सभा बाराबंसी) की है जिसका संकेत 'स०' है और दूसरी प्रति जयपुर के श्री मुनि कानिशागर जी की है जिसका संकेत 'का०' है। 'स०' प्रति बम्बई के प्रिन्टिंग प्रेस म्यूजियम की फारसी प्रति की मागरी प्रकरणों में गई मरुम है और यह टंकित है। उक्त म्यूजियम के क्यूरेटर डा० श्री मोतीचरजी प्रस्तुत ग्रंथ के विषय में कवि सुरदास कृत 'नलरमन काव्य' शीघ्र से मागरी प्रचारिणी पत्रिका (वर्ष ४३-सं० १९९३, नवीन संस्करण भाग १६—अंक २) में एक अध्याय। उक्त लेख में फारसी प्रति के संबंध में उन्होंने इस प्रकार लिखा है —

'इस लेख से मैं बम्बई के प्रिन्टिंग प्रेस म्यूजियम का क्यूरेटर नियुक्त हुआ, जहाँ की संपूर्ण फारसी पुस्तकों की विस्तृत सूची बनाने का प्रयत्न मिला। उन पुस्तकों में 'नलरमन' नामक एक विचित्र पुस्तक भी थी जिसे पहले की सूची में प्रचारिणी ने फँसी कृत 'नलरमन' की परबो रे रची थी। पहले तो मैंने समझा कि शायद फँसी कृत 'नलरमन-चरित्र' का यह फारसी अनुवाद हो क्योंकि प्रकरण के बरबारी विषयों का बनाया 'नलरमन' प्रख्यात है। पर म्यूजियम के नलरमन काव्य के एक पत्र पर पढ़ते ही मुझे पता लग गया कि यह नलरमन नाम का प्रेमचरित्र काव्य ग्रंथों में सुरदास नामक कवि का सिद्धा हुआ है। इन सुरदास का सब सुरदास की रचियता सुरदास से कुछ भी नहीं, बस प्रायः पता लगया। जान पड़ता है, सुरदास के नाम-साम्य के कारण नलरमन की रचना सुरदास के सुरदास के जिम्मे कर दी गई।

—प्रस्तुत पुस्तक फारसी लिपि में लिखी हुई है। इस पुस्तक में १६३ उक्त पृष्ठ हैं। जिस पर बिना नुमाँ बने हैं उन पृष्ठों पर १२ सतरे हैं। पूरे पृष्ठ की माप २३ × ३६ तथा लिखित भाग की माप ७३ × ४४ है। कातिब न पृष्ठ-संख्या नहीं दी है, बाद में किसी ने पंक्ति से भर दी है। बहुधा बिना पूरे पत्र के नहीं है। पृष्ठों के बीच में या निचले भाग में एक दूसरे का पत्र पर लिखकर अपना दिष्ट पत्र है।

—पुस्तक फारसी के मुहर नस्तालीक प्रकरणों में लिखी हुई है। पृष्ठ के बीचों बीच हाथिया छूटा हुआ है जिसके दोनों ओर पाठ अंकित हैं। पाठ की हर मुहर सात बाने मोने सपा मुनहरे अर्थों से बाँप दी गई है। बोहे मुनहरे प्रकरणों में बीच में पकी पट्टियों में, लिखे हुए हैं। पुस्तक धीरे-धीरे कमजोर की जिन्दा में बंधी हुई है।

'पुस्तक के अंत में इस प्रति के लेखक का नाम बाबुस्ता यह मुहम्मद म. दिया हुआ है। इस प्रति की नकल दिल्ली सन १११० यानी बादशाह औरंगजेब राज्यकास के ३३वें वर्ष में समाप्त हुई। यह प्रति निर्वा विरार का नामक किसी घरवा के लिए तैयार की गई थी। ये विरार का कौन न इसका ठीक-ठीक पता नहीं चलता ये औरंगजेब के प्रसिद्ध सिपहसालार विसेर का नहीं हो सकते क्योंकि इनकी मृत्यु सन् १६८२ यानी इस किताब के सिखे जाने के सोसह वर्ष पहले हो चुकी थी। बिर्वा की धमी से यह पुस्तक हैबराबाद की किसी मानुस होती है और प्रायः निर्वा विसेर का नहीं के कोई जमरा या रईस रहे होंगे।

'पुस्तक का धारनिक पृष्ठ मुम्बय जगनाम और सोने के पुबारे से अलंकृत है। तीन तरफ हासियों में बाइकम की बनें हरे नीले सात तथा मुलाबी रंगों से बनी हैं पंचारंभ बिसमिलताह रहमानुरहीम से होता है। बाव में इस प्रार्थना शुरू होती है—।

सामा की इंकित प्रति फस्केप आकार के आधुनिक सखेब कायज पर है। आकार है— १३ १/२ × ८ १/२। ऊपर से इस पर सादी जिहब बंधी है। इसमें पंचारंभ का अंध होने की सूचना अग्रमय भी गई है। इसमें समस्त १६१ पत्र हैं। प्रथम पत्र में २३ पंक्तियां हैं और अंत के पत्र में ४ पंक्तियां। शेष पत्रों में किसी में २७ पंक्तियां हैं और किसी में २६। इसमें बोहे की संख्या ३८३ है तथा प्रत्येक बोहे के सात बीपाइयों की ६ अर्थात्तियां हैं। प्रति कब टंकित हुई इसका जश्मेत नहीं किया गया है पर 'अठाछहें पोज विबरम' (का० ना० प्र० स०) के अकार पर यह सन् ११४१ के लयनम टंकित हुआ जान पड़ती है। उक्त पोज विबरम (पृष्ठ ९) में इतका जश्मेत है।

'का० प्रति नापरी अक्षरों में है और बहु पुराने बेसी कायज पर लिखी हुई है। इसमें समस्त १२४ पत्रे अंकित हैं परन्तु विनने पर १२३ निकलते हैं। यह सबिख है जिस पर सात कपड़ा लगा है। जिहब धब अग्रमय ही गई है। ऐसा विहित होता है कि इसकी दो बार जिहबबंधी हुई। दूसरी बार जिहब से अग्रमय हुए पत्रों को ठीक किया गया। पत्रों का आकार ८ १/२ × ६ १/२ है। लिखित अंध का आकार ६ १/२ × ४ १/२ है। लिखित अंध उक्तके दोनों ओर (बाहिने और बाएँ) हासिया सौंठ कर चौबी गईं। लातरपाही की बो-बो रेताओं से अर्थात्तित है। प्रत्येक पत्र के पृष्ठ के नीचे बाहिनी ओर हासिए पर पत्र संख्याएँ अंकित हैं। प्रति पृष्ठ में २१ पंक्तियां हैं। इतमें समस्त ३६७ बोहे ह और 'स० प्रति की प्रति प्रत्येक बोहे के सात बीपाइयों की ६ अर्थात्तियां ह। बोहे और बीपाइयों को संख्यांकित करने का भम हो रहा था, पर बहु प्रथम बोहे तक ही सीमित रहा। प्राये जसका निर्वाह न हो सका। प्रति सबत १८१४ की लिपी हुई है। पंचारंभ का अंध इस प्रकार है —

॥६०॥ स्वरिउ धी सर्वज्ञाय नम ॥ अय नम इमन मूरदास कृत मारम्यते ॥  
 गुमक प्रादि अतार नु कोई। प्रादि अति पुनि एरुं सीई ॥१॥  
 बाहि न बर्न न रूप न रेसा। अकपति गति अग्रमय बहु भेया ॥२॥

पुल्पिका तिम्नसिचित रूप में है—

‘संबत १=१५ तत्र वर्षे माहा मागस्थ मासे । चत्र मासे शुक्ल पक्षे तिथौ १२ पृष विन सि० मिम चेताराम सिवाब एवो पूज्य आत्मा ऋषि श्री शुभ मस्तु मंगल बदातुः पुस्तक सिपि विद्याना जोप पसेते ॥

यह प्रति भी किसी फारसी प्रति की नकल है अथवा उसकी नकलों की परंपरा में है । अनेक शब्द फारसी लिपि के कारण झुड़ रूप में नहीं हैं । कहीं कहीं तो कुछ के कुछ हो गए हैं जिनके झुड़ रूप का पता समाना ही कठिन हो जाता है । कुछ उदाहरण दिए जाते हैं —

१—सिचित न अपल बड़ा न छोटा । तत्र न बूड़ा लया न मोटा ॥

—बोहा ॥१॥

इसमें ‘अपल’ को ‘अंजम’ होना चाहिए । इससे चौपाई की मात्राएँ पूरी १६ हो जाती हैं । कहना नहीं होगा कि फारसी प्रति में ‘अंजम’ के ‘नून’ अक्षर को ठीक ठीक पढ़ने में अम न हो सका और आप ‘जे’ अक्षर को ‘ये’ पढ़ लिया गया । इससे अर्थ तो ठीक बँठा, पर मात्राएँ गड़बड़ हो गई ।

२—बहुत न सबा न फूटा । मिला न बिछरा जुरा न दूटा ॥४॥

—बोहा

इसमें ‘सबा’ शब्द कोई अर्थ नहीं रखता । होना चाहिए, ‘सबा’ लिखने वाले ने ‘बीम’ को ‘ये’ पढ़ लिया और लिख दिया ‘सबा’ । इसी प्रकार ‘बिछरा’ को ‘बिछरा’ कर दिया; क्योंकि ‘ये’ लिख का पता न लगा ।

३—राता बिरछ करे बिन पाता । दुंइनि पात करे बहु राता ॥

—बोहा ॥६॥

यहाँ उत्तर पर होना चाहिए—दू ठ निपात करे बहु राता ॥

४—ओ रसना सत होतिहि कथा । जिहि तो गुप सत होतिहि सया ॥

भूमि अकास कापर सम होई । सरबर धी मिस सापर सोई ॥

सेबन अत सरबर तिन डारा । तो गु सिपिन जाइ विस्तारा ॥

—बोहा ॥११॥

ऐर्जाकित पर फारसी लिपि के कारण अशुद्ध पढ़ लिए गए । ये चौपाइयाँ झुड़ रूप में इस प्रकार हैं—

ओ रसना सब होतिह कथया । जहं मी कर सब हींतिह निर्लया ॥

भुई अकास कापर सब होई । सरबर धी सापर मति सोई ॥

सेबनि सब सरबर तिन डारा । तऊ सो सिति न जाइ विस्तारा ॥

विषय स्पष्ट करने के लिये इतने ही उदाहरण बहुत हैं। कहने का उत्तर्य का कि प्रति इस प्रकार की भ्रमश्रितियों से भरी पड़ी है जिससे उसके फारसी प्रति की ग होने का पूरा प्रमाण मिलता है।

### प्रतियों में भ्रम

प्रस्तुत प्रतियों में भ्रम है। का०' प्रति उस प्रति की परंपरा में है जिसका प्रकार रचयिता द्वारा रचना समाप्त होती ही हो गया। 'स०' प्रति उस प्रति की परंपरा में है जिसमें रचयिता अपने जीवनपर्यंत संशोधन परिवर्द्धन करता रहा। इसलिये यह संशोधित-परिवर्द्धित रूप में है यद्यपि फारसी प्रति की नकल होने के कारण इस पाठों को भी बड़ी बसा है जो 'का' प्रति के पाठों की है। प्रस्तुत संपादन में इसमें परिवर्द्धित ग्रंथ यथास्थान पाठ दिव्यविधियों में से लिए गए हैं। वे प्रसिद्ध नहीं हैं।

### प्रतियाँ एक दूसरी की पूरक

दोनों प्रतियाँ एक दूसरी की बहुत कुछ पूरक के रूप में हैं। यदि इनमें से एक ही प्रति के आधार पर संपादन किया जाता तो वह निश्चित रूप से असफल सिद्ध होता। इसका यह तात्पर्य नहीं कि प्रस्तुत संपादन सब तरह से शुद्ध है और जतने पूर्ण नहीं है। प्रतिप्राय यह है कि एक प्रति में जो पाठ भ्रमश्रितिकता का साधारणतया दूसरी प्रति में या तो शुद्ध पाठ के रूप में प्राप्त हुआ अथवा उसका पाठ भ्रम के अधिक निकट पाया गया जिससे मुसलमान पाठ निश्चित करने में सहायता मिली। यहाँ जोड़े से उदाहरण 'का० स०' और 'स०' (प्रस्तुत संपादन) के क्रम से दिए जाते हैं जो शीर्षों के अनुसार हैं—

बो० ॥२॥

जो पुन खैर भेद कछ माहीं । सिधत समाय रह्या सब माहीं ॥ (का०)  
 ऊ बिन हरि हर कछ माहीं । समत समाय रहा सब माहीं ॥ (स०)  
 जो पुनि खैर भेद कछ माहीं । सिमित समाइ रहा सब माहीं ॥ (सं०)

बोहा ॥३॥

तिहि धेतन बिन कछु न होई । वी करवुत न साथ कोई ॥ (का०)  
 निह्न बिगते बिन कुषी न होई । वी करवुत न साथ कोई ॥ (स०)  
 तिहि धेतन बिन कछु न होई । वी करवुत न साथ कोई ॥ (सं०)

बो० ॥८॥

कनक ग्रंथ हूइ रह्या बनका । कारण टट एक को एका ॥ (का०)  
 एक बनक होइ रहा बनका । कारि बूट एक को एका ॥ (स०)  
 एक कनक होइ रहा बनका । कारण टूट एक को एका ॥ (सं०)

शो० ॥१७ (स०) ॥ १६ (का०)

जे मंगल सोहन के मांगा । तिहु धन फिर आतिनि सपि मांगा ॥ (का०)  
 जे मंगल बुकन के मांगा । तिहु धन फिरहि रतनय मांगा ॥ (स०)  
 जे मंगल लोहन के मांगा । तिहु धन भरहि रतन नग मांगा ॥ (स०)

शो० ॥१८ ॥

जे मंगल धन दर दर दोसै । सो दर पग हरे बिन दोसै ॥ (का०)  
 जा मंगल धन पर पर दोसै । सो दर पग न परे बिन दोसै ॥ (स०)  
 जा मंगल धन दर दर दोसै । सो दर पग न परे बिन दोसै ॥ (स०)

शो० ॥२१ (स०) ॥ २० (का०)

क पीब महब पाठ सो छूटी । जइ बेतन हुने जबर दूटी ॥ (का०)  
 कहा और मोह पाठ सो छूटी । जइ बेतन हुत जबर दूटी ॥ (स०)  
 के पीब महब पाठ सो छूटी । जइ बेतन हुत जबरि दूटी ॥ (स०)

उक्त बोहा इस प्रकार है

माया मोहि मिलाप सो पीब भयो इपि जीब ।  
 सति गुरु केरि मयान मन काडि बिषायो पीब ॥२०॥ (का०)  
 माया मही मिलाप स्यो पिब जो भयो इबि जीब ।  
 संकर करि मयान मन काट देखा यह पीब ॥ (स०)  
 माया मही मिलाप स्यो पिब न भयउ इपि जीब ।  
 सतगुरु करि मयानि मन काडि रिषायो पीब ॥ (स०)

धर्म की जात प्रतिपा

मंत्रि पंच की चार प्रतिपा जात ह । इनमें से एक तो बंबई प्रिन्स प्राय-वेल्स स्पूजियम की फारसी प्रति है और दो (दूसरी-तीसरी) उसी की भाषी प्रसरी में की गई प्रतिपा है जिनमें से एक काजो नागरी प्रचारिणो सभा में सुरक्षित 'स०' प्रति (दंष्ट्रित) है तथा दूसरी उक्त स्पूजियम के अपरेटर डा० श्री मोताचंद की की प्रति है । चौथी 'का०' प्रति श्री भूमि वातिनागर की की प्राचीन हस्तलिखित देवनागरी प्रति है । डा० श्री मोतीचंद की की प्रति का भी जोड़ा बहुत उपयोग किया गया है ।

आभार प्रबन्ध

जैसा कि आरम्भ में लिखा जा चुका है मसहमन के संबन्ध में सब प्रथम विरहसमीप बुचना देन का धर्म शो० डा० मोतीचंद की की है । उन्होंने पंच के विषय में एक सौ से भी भाषी प्रचारिणी पत्रिका में लिखा । उक्त सध से प्रस्तुत संपादन में सहायता न लेना



प्रस्तावनाबिन्दु बात होती। अतएव उस के कथ्य घंटा का इस रत्न में उद्धार सहित उपयोग किया गया है। बनकी निजी नकल की हुई प्रति से भी थोड़ी बहुत सहायता ली गई है। इसके लिये हम उनके विधाय अनुग्रहीत हैं। श्रीमणि कांतिसागर जी की ठी महुषी कृपा हुई कि जन्होंने मसबमन की प्रथमी प्रति अपेक्षित समय तक के लिये प्रदान कर दी। वास्तव में इस प्रति के मिल जाने से ही प्रस्तुत संपादन संभव हुआ है। इसके लिये हम उनके भार्यत कृतज्ञ हैं। इस प्रति को सर्वप्रथम श्री बाबुरेव शरण जी ने जयपुर में श्री मुनि कान्ति सागर जी के पास देखा था और तभी यह इच्छा प्रकट की थी कि इसके आधार पर 'मसबमन' का सम्पादन हो जाना चाहिए। श्री मुनिजी ने अवसरतावत् इस प्रस्ताव को स्वीकार किया और प्रथमी प्रति न केवल सम्पादन कार्य के लिये ही सुलभ कर दी बल्कि प्रप्रधान जी के अनुरोध को स्वीकार करते हुए उस प्रति को प्रागरा हिन्दी विद्यापीठ के संपादन के लिये प्रदान कर दिया। प्रस सम्पादन कार्य के समाप्त हो जाने पर यह प्रति हिन्दी विद्यापीठ प्रागरा में श्री मुनि कान्ति सागर जी की ओर से बग्यबाव पुर्बक सुरक्षित कर दी जाएगी। काशी मायरी प्रचारिणी सभा का ससम्मान उल्लेख करते हुए उसके प्रधान मंत्री डा० श्री राजबन्सी को पार्षद और पुस्तकाम्यस भी बिजपेट जी घास्मी के प्रति आभारी हैं जिन्होंने सभा में सुरक्षित प्रबंध की प्रति देकर इस कार्य में हमारी बड़ी सहायता की।

### कवि परिचय

पहले यह जन-भूति की कि महाकवि सुरदास (सूर सागर के रचयिता) ने 'जल व्रमयंती' नाम से भी काव्य रचना की। श्री राधाकृष्णदास ने उक्त जनभूति का उल्लेख महाकवि सुरदास की बीचमी में किया और चार्लेडु बाबू श्री हरिश्चंद्र ने 'कवि जलम सुधा' में काव्य को खोज निकालने के निमित्त एक हजार रुपये पारितोषिक की घोषणा की। परन्तु काव्य का पता न बना। जन भूति का कथ्य न कुछ आधार होता प्रथम है। इस बात को ध्यान में रखते हुए अब यह कहा जा सकता है कि प्रस्तुत 'जलव्रमन' काव्य ने ही उक्त जनभूति को जन्म दिया। इसके रचयिता सुरदास को अब से महाकवि सुरदास समझ लिया गया। वास्तव में ये सुरदास महाकवि सुरदास से नितांत भिन्न सुषी बिचारधारा से प्रभावित कवि हैं। अब तक केवल दो हिन्दू कवि ऐसे विदित हुए हैं, जिन्होंने सुषी बिचारों से प्रभावित होकर प्रेमोत्पानक काव्य रचे। इनमें से एक हैं कुसहरण जिन्होंने सं० १७२६ में 'सुष्ठुपावति' की रचना की और दूसरे हैं प्रस्तुत कवि सुरदास। प्रस्तुत कवि सुरदास ने प्रपत्ता को बूत दिया है उसके अनुसार इनके पिता का नाम योर्द्धनदास (गोरधनदास) था। ये कंबो गोत्रीय और माणिस (मुद्गल?) जाति के थे। इनके पुरजें कलागीर (मुद्गलपुर पंजाब) में रहते थे जहाँ से इनके पिता पुरज को घार पत्ने गए और बहुत समय तक उपर ही रहे। इनका जन्म लखनऊ में हुआ जिसकी इन्होंने र्बकुंड के समान सुंदर बताया है। कलागीर ये कभी नहीं गए। पछपि ये परदेस में ही रहते थे तो भी कलागीर का निरप प्रति स्मरण करते थे। संभवतः स्मरण साहाय्य के अनुसार इन्हें विश्वास था कि जयवान् कभी न कभी इनकी कलागीर

१—देतिए काशी नामकी प्रचारिणी सभा द्वारा संपादित खोज विवरण (सन् १९४१-४३ में संख्या, १०५)। पुस्तक को एक खोर्ब प्रति लना में है।

देखने की प्रतिज्ञाया पूरी करेंगे। यह धामा इनकी धामे पूरी हुई कि नहीं यह जानने का कोई सुत्र इस समय उपलब्ध नहीं —

सुरदास निज नामें बताईं । गोरपनदास पिताकर नामें ॥  
 कंबू पोत माधिन तासु । कसानूर पुरछन कर नामु ॥  
 दास हमार तहाँ सों धामा । पुरब बिसा कोऊ दिन छावा ॥  
 मपर लखनऊ बड़ा सो धामु । बबिह ठीर बकुठ समामु ॥  
 मेरो जनम यहै ठी समयऊ । कसानूर कबहुँ नहि गयऊ ॥१॥  
 बछपि ही प्रबहुँ परबेसा । पै नित प्रति सुमिरी सौ बेसा ॥  
 जैसे पंथी बस सराई । महुँ बिदेस एही तिन्हु नाई ॥  
 धारि ठीर बिसरा में नाहीं । सोई सबा रहै मन माहीं ॥  
 सुमिरन करी नाम हर स्वासा । महुँ जो बिनि पुरबें सो धामा ॥

श्री०

बिन निज ध्या दयाल के, देस न पहुँचा जाय ।  
 जब लग सोई बाहु गहि लेइ न बेइ पहुँचाय ॥२४॥

### पंथ और गुह परंपरा

इन्होंने प्रबिध पंथ का उत्पत्त किया है जिसके ये अनुयायी थे —  
पुत्र प्रबिध को पंथ धग बहु बल तरनी नाब ॥  
पहुँचन हार जो पारकी, सो राते तहें पाब ॥  
 पुत्र परंपरा इस प्रकार है —

प्रबिध प्रमु > रंगबिहारी > स्वामिदयाल > सुरदास

रंगबिहारी का बड़ा ही बिलक्षण बिबरन दिया है। उन्हें प्रबिध प्रमु सिद्ध पुत्र के रूप में मिले थे। प्रत्येक पंथ के शास्त्रिक प्रबर्तक वही (रंगबिहारी) थे। वे साहोर के रहने वाले थे। जाति के करछड़ थे। वे चार भाई थे जिनमें बड़ी सबसे बड़े थे। त्रिगुण से ही वे विद्यावान पुत्र थे और तानु सिद्धों की सेवा में अधिक मन लगाते थे। परन्तु एक दुःखी और बड़े दयावंत थे। प्रति दिन सुपौरय होते ही नदी में स्नान करते और कुछ समय तक धर्राड़े में बालकों की कुत्ती (सरी) देखकर मन बहुलाते थे। निरय प्रति बालकों को बिजल\* जाने को देते थे। बालक बिजल पाकर बहुत प्रसन्न रहते और अपिच्छाधिक कौतुक बिसाकर उन्हें भी तथा प्रसन्न रखते। एक दिन जब

\* यह देवत तार मूल्य 'धूल' है। प्रबपी में जिनका धर्य होता है जाने की प्रिगोई कई बालक । परंपरागत में प्रिगोई ...

बे बालकों का खेल देख रहे थे तो उन्हें एक सिद्ध पुत्र्य प्राप्त हुई। सिद्ध पुत्र्य का अद्भुत भय था। न सुखी ही वे घोर न सेवका ही। सन्ध्यासी भी नहीं बहने जा सकते थे। ब्रह्मचारियों को बंसी बति भी नहीं पाई जाती थी। अयम घोर जोषियों में से भी ब कोई नहीं थे। पठ बर्सी भी अथवा बियोया बंसी का भय भी नहीं था। माथे पर तिलक घोर हाथ में अयमाला भी तथा पते में सींसी एवं कांथे पर मृगछात्ता पड़ी थी। पलकों नहीं भगती थीं, अरोर पर मन्दिष्या नहीं बैठती थीं, अंग की परिछाई भी नहीं पड़ती थी घोर बरती से ऊपर (अवर में) ही पाव रहते थे। उन्होंने देखते ही सिद्ध पुत्र्य को जान लिया। सिद्ध पुत्र्य के प्रति उनके हृदय में प्रीति उत्पन्न हुई घोर गोब से दिव्य (भीये हुए जाने) निकाम कर सिद्ध पुत्र्य को दिए। सिद्ध पुत्र्य ने हंसकर दिव्य से लिए कुछ अपने मूंह में रखे घोर जो बचे उन्हें उनके मूंह में डाल दिया। सिद्ध पुत्र्य का हाथ उनके मूंह में पड़ते ही उनकी बुद्धि के कपाट खुल गए। जैसे ही सिद्ध पुत्र्य प्राग बड़े जैसे ही थे भी पीछ-पीछे चल दिए। नाम पूछने पर सिद्ध पुत्र्य ने अपना नाम प्रकृत बताया घोर उनका नाम 'बहोरा' (अरेमू नाम) के अन्वय रंगबिहारी रखा। उत्पन्नात् सिद्ध पुत्र्य बहोरा के लक्ष्मी मूल्य हो गए। अस्तु रंगबिहारी को सिद्ध पुत्र्य का पुत्र के रूप में इतना ही साक्षात्कार प्राप्त हुआ। परन्तु अस्तमज्ञान को उन्हें उसी समय उपलब्ध होगई घोर पीछे सिद्ध महारामा के रूप में भी प्रसिद्ध हुएः—

अथ पुत्र्येव केर पुन गाढे । रंगबिहारी जिनकर गाढे ।

× × × ×

घादि नगर बहोरा जिहि गाढे । अन्त भूमि उम्ह के तिहि ठाढे ॥  
 छत्री ककर जात कहाए । मंम्या चारहि भने बिजाए ॥  
 पहिल कहियत नाब बहोरा । अस्तन बहोरे नाब बहोरा ॥  
 पीरी बंस बहुत मति धर । सिद्ध धामु के सेवा कर ॥  
 इमारत बुझी बर बुझी । देख न सके धात्मा मूखी ॥  
 अरमी अरम पंम पय चारं । कथा अरता मुने बिचार ॥  
 रहै पबिन भजन सों कामु । मुमिरन करे सरा हरि नामु ॥

साथ सिद्ध संगत कर साधुन सों ध्योहार ।

पुन न उरहि समुझा बहु अस्तम अय बिचार ॥

नित प्रति प्रात उठे अस्त भामु । आइ सलित अस्त कर अस्तानु ॥  
 बालक लही सरो पुनि लेखे । निपदहि मिरहि बंड मिति देखे ॥  
 तिगह कौतुक धिन मन बिदुराबहि । नित प्रति तिगह देखत जिबोबहि ॥  
 देखत पाइ बालक मुस पाबं । पियकी कौतुक करि बिचाराबं ॥  
 इक दिन देरत हुठे तमासा । सिद्ध एक धावा उन पासा ॥  
 अद्भुत भय पर अचगती । सुखी घी न सेवका अती ॥  
 सन्ध्यासी पुनि बहा न जाई । ब्रह्मचरज गति जाइ न पाई ॥  
 अयम बहा न जाइ न जोगी । पठ बरसन सों भेत बियोपी ॥

भायें तिनक हाथ जपमासा । सींगी परे काँध मुमझाला ॥  
मन केँ सुरति पिठ सों जागी । भ्रम मिटि पा संका सब भागी ॥

पसक न साथ प्रीखिन, माझे निरुठ न जाइ ।

श्री न भंग परिछीहिहर्से, अघर भुईं सों पाइ ॥

इन बहु पुरख दिगिठ महुँ घाना । बेसत सिद्ध पुण्य पहिचाना ॥  
सिद्ध पुण्य इग्ह तन पुनि पेसा । भई परस्पर बेसी बेसा ॥  
तब इन बिजस मोर सों काइ । तँ ताके सनमुख भए ठाई ॥  
हँस केँ पुकळ हाथ गह सौण्हे । तँ रंकक अयने मुख बीगहे ॥  
कर जो रह इनके मुख डारे । डारत बुद्धि किवार उपारे ॥  
क बेसा अस भय गुठ घागे । ये गुठ के पीछ उठि सागे ॥  
बूनी बचन जो घना पाऊं । वही कही तुम घापन नाऊ ॥  
कहा अचित नाम मुन मोरा । रंग बिहारी राखी तोरा ॥  
कह सो बचन पुनि बिस्ति न घावा । पुदक जहाँ कर तहाँ समावा ॥

उपही घरी कृपा भई, क्या करी मर बेध ।

घातम रूप सना प्रगट रहा न अतर भेध ॥

×

×

×

जापति कला भई जयजानी । रंगबिहारी सिद्ध बसानो ॥  
सिद्ध बचन जो कही सो होई । अविचल बचन न बिचल कोई ॥

×

×

×

अब जद्यपि ते आप समाने । सिमट जोति मिलि प्रपटि हिरान ॥  
वै गुठ जप तिग्ह की जो बानी । बीज मज ठहराइ पजानी ॥  
सो मुन संत रंप मों घाबै । जो घाबै सा अमर पर पाबै ॥  
पंच प्रतापवंत उजियारा । जिगहन गहा सो र्छा न बारा ॥

गुठ अचित को रंप जप बहु जल तरनी नाब ।

पहुँचनहार जा पार को सो राखें तह पाब ॥

स्वामदयाल जाति के भद्रमायर कायस्थ च । उन्हें दौदाबावस्था में ही जब वे  
पाद में बे, रंपबिहारी का मूढ मंत्र प्राप्त हुआ । साथ ही साथ उन्हें भयल होने का  
घासीबाँध भी मिला—

तिग्ह के तिय कायब भद्रनामर । स्वामदयाल प्यान गुन सागर ॥  
गोब हते अब बास अमान । तबही सों दिग्घा महुँ घाने ॥  
भाये हाथ घरा मुख बेबा । क अति कृपा सगाई सेवा ॥  
घायनु भा एहि सिधत हमारा । होइ है मयत जयत अजियारा ॥  
ते अब महपुण्य विद्यानो । मुख ऊपर म्यान निधि जानी ॥  
जिग्ह को नाम तिर्पे कुरा जाही । बरतन दिर्पे तजि पाप पराही ॥

जो काहू कर सबर सुनाय । ताहि तेहि छिम असब सयाय ॥  
 मोहि तिन्है यह पंथ सयावा । हुपा कीन्ह गुरू जाप सिजावा ॥  
 भूसं भटके बाहू गहि, मारण बिमो सयाइ ॥  
 लोहा कंबल के तियो, पारस पग परसाइ ॥

यह निश्चित पता नहीं चलता कि स्वामदयाल कहां के रहने वाले थे । किन्तु भी अनुमान से जान पड़ता है कि वे पूरब के ही—सखनऊ या उसके पास पास कहीं के निवासी थे । सूरदास सखनऊ में ही रहते थे पंजाब की ओर चल का उन्होंने कोई जस्मन नहीं किया, इसलिये बहुत कुछ संभावना इसी बात की है कि उन्हें सखनऊ में ही स्वामदयाल से गुरु संब प्राप्त हुआ ।

सूरदास ने 'मलवमत' की रचना साहजहाँ बादशाह के राज्यकाल (सं० १६८५-१७१५ वि) की समाप्ति के एक वर्ष पूर्व संवत् १७१४ वि० (सन् १०६७ हिजरी) में प्रारंभ की—

एक सहस्र सतसठ सन ग्रहा । संवत् छठरह से चौबहा ॥  
 के प्ररंभ सब कथा बसानी । कीर्ण प्रपठ प्रेम निधि बानी ॥

### बादशाह की प्रशंसा

शाहजहाँ की इन्होंने बड़ी प्रशंसा की है । उसके तेज, यद्यत्त बल-विक्रम बल-प्रभाव बाबलीलता करणा दया व्याप प्रियता राजनीति और युद्ध संचालन आदि का शोकपूर्व भाषा में बड़ा ही भव्य बचन है । कुछ अंश उद्धृत किया जाता है—

साह जहाँ गुलताम बकता । मानु समान राज इक छता ॥  
 दिन्नी जबा सुरज उजियारा । जहाँ ओर जस किरन पसारा ॥  
 राजन के मुघ रह्य न पानी । मनी बेनि रबि तेज मुरानी ॥  
 हुते जो गड़ मेट ज्यों जाड़े । कार नवाइ नीर क काड़े ॥  
 किये समान सब प्रतिमानी । मान छोड़ सब करहि किसानी ॥  
 सीता नवाइ रखा सो बीबा । जो उकसा सो काल मुप लाबा ॥  
 रहा न कतहें जुड कर मानू । घट रिड़ होइ बीठा गुस्तानू ॥  
 छत्री छत्रपार जो कहाए । ते जूहार कीं बार न पाए ॥  
 पंड पंड के राजा राज । ठाड़े रहत ओर कर पाऊ ॥

जे राजा तरवार बर कटक देत हूं तार ।

सोर सोर तरवार तिह फार गड़ाए फार ।

साज काज सब करं बड़ाई । महि मंडल हय मय हीइ जाई ॥  
 बतहि पयंठ ठाठ जहुं घोरा । मेघन छनी कीन्ह मनु जोरा ॥  
 धन पिन संग न बार न पाए । महि पई सहि न थाइ सो भाए ॥  
 कीर्ण परनि मेह पस जाई । कनठहि धानि बनी कठिनाई ॥  
 बामुदि हुने हींई कतमनी । पर पताम सोक शतवसी ॥

परबत चूर चूर होइ जाहीं । घसल मसल होइ पूर उड़ाहीं ॥  
इइ सोक पहुँचें सो पूरी । धंषकार उपनै तिहि पूरो ॥  
सुरज प्रकाश न देख रिखाई । बासर भाइत रैन होइ जाई ॥  
बन संड दूठ बोंह मिल जाहीं । सरबर मापर सतिन मुसाहीं ॥

घसने उग्रस जल विने विछने रबर छानि ।  
ता विछने रूप खने तब पावें ते पानि ॥

म्याब नीउ जो पुरानन गाई । सो पूषमीपति के रिपरराई ॥  
गऊ तिय एक घाट दियाए । राब एक सर क दिखराए ॥

× × × × ×

बता कहियत एके सोई । ता सरवर कहें घोर न कोई ॥  
एक बार तिहि सोँ जिन माँगा । पुनि भर जनम न काहु पाँगा ॥  
जे मसल दूहन क माँगा । तिम्ह धन-दिरें रतन नय माँगा ॥  
जा मंगत धन दर दर डोलै । सो दर पा न घर जिन डोलै ॥

× × × × ×

सहजहाँ इतार डर परें पतार बुराइ ।  
बहि मुकता तो ना बच देइ कड़ाइ सुटाइ ॥

### भाया विवाद

'सं०' प्रति (का० भा० प्रा० स० में पुरहित) से बिदित होता है कि 'नसबनन' की भाया के संबंध में कुछ विवाद बस पड़ा था। यह विवाद पंजाबी और ब्रजपि की लेकर उठा था। मुरबास पंजाबी ने धन प्रांतवापियों का उनके प्रति बिनाय रीय रहा होना। हो सकता है यह भाया बिबाह पंजीर रूप में प्रतीतिता को लेकर न रहा हो, परंतु इसमें सीधता भी प्रबन्ध। इसलिये मुरबास को कहना पड़ा—

'इरक किराक' (मेन बिरह) के कारण पुरबी भाया (मसिया) में मेरी प्राँच कुछ रो पड़ी है। परंतु इसे पुरबी बतकहा (बतहा) मात्र न जानें। मसे ही इतका रेशा पुरब है पर इसमें ध्यक्त किया गया मन (मनहा) पंजाबी ही है। मुझे अपनी भाया का मय प्रबन्ध है और मैं उसे मुकता-नकता करके बहजानता हूँ। भाया के बीच-बीच में घने होर धा सकते हैं पर मेरी प्राँच 'इरक हकीको में रंपो हुई है (इसलिये पुरबी भाया के घर रसन की ओर मेरी प्रवृत्ति नहीं हुई)। इस प्रकार अपनी भाया और जवान में (यह इति) बनी तो ममा है पर उसे रबेकार करने में दिसा संकेत (पुरब की भाया में है) किया जाता है। अब इसमें निहिन प्रध्यक्त रजनि को पूरने ह तो उसका मर्म (महूम) ही को रैने हूँ। इस प्रकार जने लने उससे भी नहीं बचा जाना। (बे) पंजाबी पीड़कर और भाया नहीं जानने। रतों का पारसी ही रतों को जान सकता है। उपर सब कोई भाया (पुरबी भाया ब्रजपि) के ममज (महूरम) हूँ। (जमें से) जो कोई पढ़गा। बही बततब समझगा। इसलिये यह प्रम कर्नाती परब की भाया में लिखी गई है।

बाय बगीचा बड़ी बरबदा होता है जिसमें सबका सामा हो। इसी तरह बायी भी बड़ी बोसनी बरबदी है जिसे सब कोई समझ सकें—

या रोबा यह कहूँ म बंझिया । अरु किराक पुरबी भञ्जिया ॥  
 मत जानहुँ यह पुरब बतहा । पुरब बेस पंजाबी मतहा ॥  
 हूँ अपने भाया मम जानो । मुकता मुकता सब पहिचानो ॥  
 भाबसि भाया बच शर घनेरी । अरु हुकौकत भाँसे मेरी ॥  
 अस अपनी भाबा प बनानी । बनी मती प कोब सहरानी ॥  
 कोब भरमह कन बी पूसे । अस कस तासोँ बाय न वसे ॥  
 बच पंजाबी होर न जानी । रतन पारकी रतन समानी ॥  
 उत भाया महुरम सब कोई । पड़ जो मतनब समझ सोई ॥  
 तिस कारण यह प्रेम कहानी । पुरब ही भाषा बिच घानी ॥

बाय बगीचा सो ममा जो सबही साँझा होइ ।

जानी तस भासे भली दिगु समझ सब कोई ॥

सूरदास को संभवत स्वयं में भी इसका भाग नहीं था कि उनकी कृति को लेकर भाया विवाद भी उठेगा। उनकी भाँसे तो 'इरक हुकौकी' में रंगी थीं। समझ्यों पुत्रय के चर्हें अपना 'इरक हुकौकी' व्यक्त करना था जिसके लिये तिसी उपपुत्रन भाया चुनने के उनके सामने कोई प्रयत्न नहीं था। जन्म से ही अरबी प्रांत में रहने के कारण अरबी उनकी अपनी भाया थी। इसलिय अरबी में रचना करना उनके लिये स्वाभाविक था। इसके अतिरिक्त अरबी के साथ मर्मत थी। 'उत भाया महुरम सब कोई' से यह स्पष्ट होता है। इस दृष्टि से उनका दृष्टिकोण पक्षपात रहित और संतोषित था। फिर भी अरबी में लिखन के लिये उनको मुँहो बिभारधारा ने भी जर्हें प्रेरित किया ऐसा मान जा सकता है। उनके समय तक ऐसे सभी मुँहो काव्य अरबी में थे। अरबी में सुर्ष काव्य रचनाओं की बिदिष्ट परंपरा ही बल निरुसी थी। अतएव सूरदास जन्म परंपरा के बिदिष्ट नहीं हो सकते थे। फलन जर्होंने अपना प्रेमाटयातक काव्य अरबी में रचा।

बैना पूर्ण में कह जा अरब है भाया संबंधी इ। विवाद का उल्लेख केवल स. प्रति में है। वह भी उसक अंत में। यह प्रति प्रस्तुत संपादन में संशोधित परिबद्धित का में मानी गई है। इससे बिबित होता है कि भाया विवाद का सामना सूरदास को पीर करना पड़ा जब उनकी इस कृति का प्रचार हो गया। जर्हें संशोधन परिबद्धन कर समय इस विवाद के निराकरण करन की मुँहो। अतएव उपय बत बरतव्य बिया श्री हाय ही साथ यह दिगान के लिये कि उनके दृश्य में पंजाबी के प्रति पूर्ण सम्मान है जन्म परवन्ध में पंजाबी की पुट भी है—

नित कारण यह प्रेम बहानी । पुरब ही भासा बिच घानी ।

## काव्य-कथा

जसा पीछ लिखा जा चुका है तत्परमन सूखी प्रमाख्यानक काव्य है। इसकी रचना प्रबन्धी भाषा में अग्य सूखी प्रमाख्यानक काव्यों के अनुकरण पर हुई है। इसमें भी बिना सवों या अम्पार्यों के उपयोग किए कथा का बलन है। प्रधार्म में परमात्मा की स्तुति की गई है फिर समसामयिक शासक साहजही बादसाह की प्रशंसा है और तत्पश्चात् गुरु और कवि परिचय बतित है। शासक और गुरु का सविस्तर उल्लेख 'कवि परिचय' स्तंभ में ही हुआ है। कथा का आधार महाभारत बताते हुए काव्य रचने का कारण इस प्रकार प्रकट किया है —

एक दिवस भोरे मन धाई । भारत पहुँ लाग बित साई ॥  
 तेहि के परब पड़त जब धाबा । मन की कथा लोच हिय लाबा ॥  
 मुना जो नर भारी कर पैम् । बितरा बेह मेह कृत नम् ॥  
 मुनि मन डार पात फल धाबा । बिट्ठ बुझ इगहन अनु साबा ॥  
 बिकल भयी तन छुट कबाई । बिबपर इस सहुर अनु धाई ॥  
 मन मोरै तन के मुच कोई । मीर जाइ धरत पर सोई ॥  
 लुपा तिरान न मीप नीरा । भुल धपाइ बैठ होइ तीरा ॥  
 पावक पुत्र भयी तन मोरा । वेम पीन घर घर भकभोरा ॥  
 बिहू के वेम कथा न जारा । धन ते बिगह भेली सो मारा ॥

कथा अगिम होइ हिय परी बरै कई ज्यों बेह ।

जो जत मन न डारते भई हती जरि राह ॥२२॥

रचना का कारण —

प्रेम बिन मन न मुनि धाई । बबो धमिनि यहु सोहें धपाई ॥  
 वेम उमात पीन सो बाई । बार बिरह धाती पृत डाफ ॥  
 प्रपट कहे उधाता जग जानै । जो प्रमी मुनि के मुप धारै ॥  
 वेम पीन लै पीप जगाई । रक्त सोबि कमधारि धगाई ॥  
 धनधन बरन पुहुप उदबान् । प्रति वेमी जन तिगृहि रिम्याई ॥  
 एहि बिबि वेम सात हिय धोम् । धबिध धमोल बोल नय लोम् ॥  
 बिरह बेह जानो मर धान् । सानि प्रेम सो वेम धपान् ॥  
 धो उर भाठी मर वेम धपाई । नल के कथा मुनल के साई ॥  
 देना वेम धमी मपु धारी । जागो दिमा वेम मय धारी ॥



जा तन सागि जान परि सोई । धन जानत कीं बुझ न होई ॥  
जिन्हु के बात जाब उपजाई । जो छन कहै सो जन कहि होई जाब ॥

वेम पीउतहार के बासत खिन छकि जाहि ।

एक पियाला किरि पिबे गुमर बेहि जंघाहि ॥२६॥

बीज रूप में कथा का वर्णन यों है —

नर वामन का वेम बखाना । मया मिलाप सोमंबर ठाना ॥  
कमजुग मम सों जुबा खोलाबा । मन हुराइ बनबाता बेबावा ॥  
श्री बन में बिछुरे नर नारी । पुनि मिलाप छू जए एक ठारी ॥  
जुबा खोल जोता पुनि राजू । घ्राइ जुवा सब बहै समाजू ॥  
भारय में जो कथा बलानी । घ्रावि घंत बानी महं घामो ॥  
वात वात में जुमति बनाई । कथा पुरात मय सौ बिचाररई ॥

पुत्री मर्म (प्रकटार्थ के साथ-साथ गुप्तार्थ) के प्रति भी संकेत किया है —

बहुत ठौर निज घरच बुरावा । सब काहू पै जाइ न पावा ॥

बहुत लोब बोहित बड़े बधि पर घ्राबे जाहि ।

मुकता पारं नरजिया बसि खोरे ता माहि ॥२७॥

कथा इस प्रकार है :—

राजा नर उज्जैन में राज्य करता था । वह धर्मपति राजा था । घनेक रत्ने राव  
तिर मबाकर उसकी आज्ञा का पालन करती थे । उसका तेज सूर्य के समान था । राज्य धीर  
शांति उसमें विराजमान रहते थे । राजकाज करते समय राज्य धीर मर्म का पूरा बिचार  
रखता था । मर्म की रसा तो प्रापण्य से करता था । वह बड़ा बुद्धिमान, पंडित,  
धर्मात्मा सर्वपुण संपन्न, उज्जैनधर धीर तेज एवं ब्या का सरोवर था । वह रूप में भी  
धर्मप्रतिम था । संसार में कोई बसके रूप की होड़ करने वाला नहीं था । उसके स्वभाव  
धीर बाजो से प्रेम छलकता था । सर्वत्र प्रेम मार्ग का अनुसरण करता था । किसी को प्रेम  
में डुकी देता स्वयं भी बड़ा दुःखी होता था । सोय उसके प्रेमपुत्र मयूर ध्वजहार से मुग्ध  
हो जाते थे । राय रंग की घोर यह भविष्य बधि रहता था । रात दिन मुषियों की चरचा  
करता था । एक मुषी जाता तो दूसरा घाता था । उसकी लम्बा बिहानों कबियों, संपीतकों,  
बागिचों घोर प्राय घनेक मुषियों से भरी रहते थे । उसमें सदा प्रसार धीर घर्ष पर बिचार  
विमर्श चलता करता था । एक दिन राजा जब समा में बैठा हुआ था धीर पुत्री लोग  
घरने-घरने मुषों का प्रदर्शन कर रहे व तो अकस्मात् प्रम की घर्षा जस निकली जिसके  
कमलरूप रूप पर बिचार तिड़क पड़ा । प्रम हुआ 'सोसह कला पुमं उज्ज्वल रूप किल  
स्त्री में होता है धीर बहु कहीं पाई जाती है ?' सबने एक स्वर से उत्तर दिया कि ऐसा  
रूप पंचिनी त्रिपों में ही संभव है धीर पंचिनी त्रिपों त्रिपल द्वीप में होती है । जैसे राजा  
धीर रंठ में कोई भर नहीं इसलिये घर घर की त्रिपों को भी पंचिनी सब्दा ही समझना

हिए; उनका रूप भी अनुपम है। सभा में एक भाटिन भी कहीं से आकर बठी थी।  
 व यावन में निपुण (अतुर) और अनुभवी। वह भी उठकर विनयपूर्वक बोसो  
 महाराज। यह सत्य है कि सिंधु नदी में ही पद्मिनी स्त्रियाँ होती हैं। परंतु भयवान्  
 भीमा अनरंवार है; वह चाहे तो तात तलैया में भी मोती उत्पन्न कर सकता है।  
 बुद्धि में भी पद्मिनी स्त्री विद्यमान है। यह बात न सुनी हुई नहीं, देखी हुई कहती हैं।  
 हलें मने भी सुना ही था और उस पर विश्वास नहीं किया था। परंतु जब धर्मों से  
 जा तब विश्वास हुआ। बलिभ विद्या में वह कन्या के रूप में है। संयोग से उसके योग्य  
 गीतक कोई बर नहीं मिला। वही कुडनपुर नाम का अनुपम नगर है। न लमस्त  
 बुद्धि में फिर बुकी हूँ और उसके देश देश और नगर नगर से भ्रष्टी तरह परिचित  
 परंतु उस जंघा नगर मने कहीं नहीं पाया। बंक्रुठ के विषय में जता सुना जाता  
 है, वह नगर सबभुब बसा ही रमणीक है। वही के राजा का नाम भीमसेन है। वह  
 क्षत्रपति राजा है और उसके समान उस मंडल में और कोई राजा नहीं। उसी राजा की  
 पुत्री पद्मिनी है। एक सिद्ध पुत्र के बरदान से उसका जन्म हुआ। उसमें एक विशेष  
 बात यह है कि पद्मिनी से वह एक कसा बड़कर है। उसकी हाथ की उंगलियों में अमृत  
 है। जहाँ धोकर मृतक के मुख में देने से वह तत्काल जी उठता है। विधाता में मानो  
 उसे ही अमृत में साज कर बनाया हो और फिर उसके समान दूसरी स्त्री न बना सके  
 हो। उसकी मूख की ज्योति के विषय में तो कुछ कहते ही नहीं बनता। दारु पुष्पिमा की  
 चंद्रकान्ति से भी कहीं उच्च ज्योतिर्वृक्ष के समान वह ज्योति है। महाराज सबभुब वह  
 पद्मिनी प्राणव्यजनक है बंधी प्रभो कहीं मेरे सुनन में नहीं आई है। उसकी सुवात दोनों  
 भौकों में भर गई है और सारा संसार भौरा बनकर उसकी प्रामा से मंडरा रहा है।  
 उसकी शोभा ने सबको सुभा लिया है। न जाने वह किस भाग्यशाली के हाथ लपटी  
 है।" यह सुनते ही राजा की उरकंठा बड़ी और उसने भाटिन से कुडनपुर नगर, भीमसेन  
 राजा और राजपुत्री के जन्म आदि का विस्तार पूर्वक बर्नन करन के लिय कहा। भाटिन  
 ने तदनुसार पहले नगर के बस कुतबारी पक्षी तात सरोवर हुआ बाबड़ी, मन्दिर,  
 भवन, सट्टासिका स्त्री पुत्र्य नगर से दूर भिन्ना, हाट, बाजार, चौक, ध्यापार,  
 व्यवसाय, ठम पालंडी, बेदपाठी ब्राह्मण ज्योतिवी, स्त्रीप-नृत्य नाच बद्य बड़ी-पूटी छाप,  
 सवेरा चित्रकार, जग्न-मग्न, बेटक और विविध क्षातियों का विस्तृत बर्नन किया। तत्पश्चात्  
 राज कुर्ग, हाथी, घोड़े राजद्वार, राजसभा और राजा भीमसेन तथा उनकी पटरानी  
 राजपती का उस्तार करते हुए अंत में राजपुत्री का विस्तार मनोमुग्धकारी बर्नन कर राजा  
 को सुनाया। राजपुत्री के जन्म के विषय में बताया कि — राजा भीमसेन के कोई संतान  
 नहीं थी जिसके लिय वे सर्वत्र चिंतित रहते थे। एक दिन बपन श्रवि उनक राज्य में आकर  
 तपस्या करन लगे। राजा ने सुना तो उनके बर्नन के निमित्त गए। श्रवि न प्रसन्न  
 होकर रानी को सिताने के लिये राजा को चार पदों कत दिए और कहा कि उनके  
 प्रभाव से उनकी इच्छा की पूर्ति होगी। निदान समय प्रात पर उनकी रानी राजपती के  
 पत्र ने चार सताने—अमरा तीन पुत्र और एक पुत्री—उत्पन्न हुए। वे सब बड़े भाग्य-  
 शाली बुद्धिमान तापु, मुनीन और बर्नन हैं। पुत्री स्त्रियों में अष्ट पद्मिनी के समान  
 है और उसका नाम बर्नती (बनपती) है। राजा यह सुनते ही प्रय के बसा में हो गया। वह उदास

रहने लगा। न दिन को राजकाज में मन लगता और न रात को नींद आती। रामारंभ से भी बिलत उलझ गया। उसे कहीं भी कत्र नहीं पड़ने लगी हर समय व्याकुल रहने लगा। अपने मन का भेद भी किसी को नहीं बताता। उसकी भूख प्यास दोनों बान्नी रही। वह प्रेम बिरह में घुलने लगा। बेहू दिन प्रतिदिन दुर्बल होने लगी जिससे वह पीला पड़ गया। भाई-बन्धु इसकी यह दशा देख बहुत दुःखी हुए। वे इससे रोम पुछने लगे; परन्तु वह कुछ नहीं बताता। इससे सब हैरान हुए। फिर भी उपचार प्रारम्भ हुआ और पाप शक्ति के निमित्त पुराण पढ़ जाने लगे। बंध और शोभा भी सुनाए गए। उनसे अपनी-अपनी समझ के अनुसार रोम पहचानते हुए राजा की व्याकुलता शांत करने के निमित्त उपचार करने के लिये कहा गया। पहले बंध ही रोग परीक्षा के लिये गया। उसने राजा की माड़ी देखी तो उससे रोम का निदान कुछ न हो सका। दूसरी बार माड़ी पकड़ने बढ़ा तो राजा इष्ट हो गया। उसने बंध से स्पष्ट कह दिया कि वह प्रेम का रोगी है, धर्म रोम उसे कुछ नहीं। बंध सीट गया और उसने सबको राजा का यथार्थ रोग बत दिया तथा उस सम्बन्ध में शीघ्र से शीघ्र उपाय करने के लिये कहा। यह जानकर राजा प्रबाल प्रहलतेन तुरन्त राजा के पास आया और राजा की बर्ष बँबाते हुए उसके प्रेम के विषय में पूछा। राजा न भी अपने प्रेम का मर्म सब खोल दिया और कहा कि यदि शीघ्र ही प्रिय मिलन न हुआ तो उसका जीवित रहना असम्भव कठिन हो जाएगा। बर्ष ने बिलय की 'महाराज ! बियोग दुःख में बर्ष प्रारण करना प्रथम कर्तव्य है। प्रेम में स्वयं मगवान् सहायक होते हैं। सम्बन्ध प्रेम एक ही ओर नहीं रहता बल्कि वहाँ भी पहुँचता है जिससे प्रेम होता है। जब प्रेम अस्तिग अवस्था तक पहुँच जाता है तो इसमें सम्बन्ध नहीं कि वह परीक्षा की घड़ी होती है। ऐसा कौन है जो प्रेमी को दुःख में डेढ़ उसकी गुणि न से। इस प्रकार मन्त्री ने राजा को धर्म बँबाने का प्रयत्न किया परन्तु राजा की शक्ति नहीं हुई। उसे बियोग दुःखने बँग से सताने लगा। बर्ष की बर्षों उसे पीड़ा देने लगी। अन्त में उसका प्रेम प्रसाप और दरमारा की घबस्पा तक पहुँच गया। कुटुम्बीजन, इष्ट मित्र और सब सम्बन्धी सब भाए और समझाने लगे। उन्होंने उसके प्रिय की इच्छा जानने के विषय में प्रयत्न करने का भी बखन दिया पर राजा पर उनके समझाने का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। सब हार मान कर चप हो गए। उफ्टे ही राजा प्रसाप की दशा में उन्हें समझाने लगा।

इपर राजा मल की यह दशा हुई और उपर उसकी बियोगान्ति की लपट चमकीली तक का पहुँची। वह भी रात्रि को तड़प तड़प उठन लगी। उसके हृदय को मल बुल से दैन लगा जिससे उसकी निद्रा जाता रही और उसे बिता ने धा घरा। रातें उसने काट न कटती। तारे गिलते गिलत प्रात होने लगा। एक रात उसने मल का बिज बना डाला जिसे ससियों के तो जाने पर एक डक देलती और प्रेमाभू बहाती। रात दिन प्रिय के प्यान म मग रहनी। उसने भूख प्यास जाती रही। रक्त कमल जाता उमका मरा पीला पड़ गया। वह अत्यंत दुर्बल ही गई और उठने बैठने में ही उसे पमोना छरण लगा। सनियों की धमो तक उसका यह भेद बिबित नहीं हुआ। वह प्रकट में जनते हुँसने सेसन की बार्ते करती परन्तु मन हो मन रोती रहती। धर्म

में एक दिन हमपती का पाप उतके पास घाई घीर उसने उसको प्रयुपात करते देख लिया। वह बहुत क्रुद्ध हुई। उसका एकोत में हमपती से दुर्बल होम घीर रोने का कारण पूछा, परंतु हमपती ने इनर उबर की बातें मिसाकर पाप को विहा किया। पाप बहुत घीर अनुभव भी। उसने हमपती की बजा का वर्णन रानी से वाकर कर दिया। रानी यह सुनकर बहुत उद्विग्न हुई। वह तुरत हमपती के पास घाई घीर उससे दुर्बल होने का कारण पूछा। साथ ही साथ यह भी पूछा कि कहां वह स्वप्न में डरी तो नहीं। हमपती ने माता को उत्तर दिया कि उसे न तो कोई कष्ट हो हुआ घीर न उसे किसी रोम का ही पता चलता है। स्वप्न में डरने की भी कोई बात नहीं क्योंकि वह धारमा पर विश्वास करती है और हर समय घासमाराम में सीम रहती है। फिर भी, सबैह निवारणार्थ उपचार किया जा सकता है। रानी ने तत्काल वध, घोभा घीर तत्र मंत्र के जातकार बुसाए। सबने प्रपना प्रपना उपचार किया पर कोई लाभ नहीं हुआ। हमपती दिन प्रति दिन ब्रियोग में धुनन मगी। परंतु उसकी सप्रिया प्रब साधनामी से उतकी देख रेख करने मगी घीर फलस्वरूप एक रात उनमें से एक ने उसे मत्स का बिज सिधे रोती देख लिया। बात उमड़ गई। हमपती ने भी उससे प्रपना गुप्त मत्स प्रकट कर दिया। उस सबी ने हमपती की दयनीय बजा देख रानी को सुचित किया। रानी पहले तो प्रत्यंत लज्जित घीर क्षुब्ध हुई परंतु ठिर धर्म धारण कर हमपती के पास गई। उसने हमपती को बड़े प्रेम से समझाते हुए कहा पुत्री! तुम्हारे पिता धर्म पति राजा हैं। चारों घोर उनका नाम है। यदि तुम्हारे प्रेम की बात कहीं बाहर फल पड़े तो वह प्रपना का कारण होगा। उससे प्रपना प्रतिष्ठा घनेपो घीर जग ब्यवहार बिगड़ना। मने ही तुम्हारा प्रेम राजा मत्स से हो गया है फिर भी तुम्हें धर्म धारण करना चाहिए। समय घाने पर सब ठीक हो जाएगा। मैं राजा से कहकर तुम्हारा स्वयंवर रपाऊंगी। उसमें राजा मत्स भी आएंगे जिसे तुम इच्छानुसार पति के रूप में धरप कर सकोगी। इस प्रकार तुम्हें ममानुद्ध पति मिल जाएगा घीर कोई घुरा भी न मानना। परंतु हमपती को धर्म नहीं बंधा। उसने माता से अपनी प्रजात स्थिति का पूरा बयान कर दिया। हमपती का उत्तर पाकर रानी बहुत बिजित हुई। वह सीधे राजा के पास गई घीर उन्हें हमपती का सारा समाचार सुनाया तथा तीम्र से तीम्र उसका स्वयंवर करने का परामर्श दिया। राजा ने स्वयंवर, इष्ट मित्र सभ संधी घीर संधियों की समिति लेकर हमपती के स्वयंवर की तैयारी करने की आज्ञा दे दी। रेश रेश के राजाओं के पास स्वयंवर में घाने का निर्मरण भजा गया। राजा मत्स को जब निर्मरण मिला तो वे प्रसन्न बिज हो यह सजपत्र के साम कंडनपुर की घीर घने। परंतु धाय मार्ग से ही उनके मन में नये तर्क बितर्क उठने लगे। उन्हें सब इस धारणा म घरा कि वास्तव में हमपती उन्हें पति के रूप में धरप करेगी या नहीं। इससे उनका बिज फिर प्रजात होने लगा घीर वे इसी प्रजात स्थिति में कंडनपुर पहुंचे। कंडनपुर की तीम्रा देखकर उन्हें भाटिन का कपल सख्य प्रतीत हुआ। उन्होंने स्वयंवर घीर प्रगाय बलपुंग सरोवर किनारे डरा डाला। हमपती ने जब मत्स के प्रापमन का समाचार सुना तो बहुत तम्र हुई। उसका मुरम्पना हुआ मुर कमल के समान रिज उठा घीर वह राजमहल पत्र पर चढ़कर मत्स के डरे की घीर देखने मगी। हर त मत्स को देखकर अपने मन

में 'बहु मेरा प्रियतम है' ऐसा कहने लगी। उससे हृदय में मत्स्य के पास उड़कर जाने की प्रवृत्ति दृग्गता हुई। वह बकरी को तरह किरने लगी घीर बिजली के समान तड़ककर मिरने की प्रवृत्तिया कराने लगी।

इसी समय देववि नारद पुष्पो के कीतुकों को देखते हुए कलास की घीर का रूँ थे। माय में ईंद्र मिल गए। ईंद्र के पुष्पने पर नारद ने मूर्च्छित का समाचार कह सुनाया घीर हमसंती के रूप सीर्य घीर उसके स्वयंवर का भी वर्णन किया। उन्होंने ईंद्र को बताया कि स्वयं के समस्त देवता स्वयंवर देवत के सिय कुंडमपुर गए हुए हैं। ईंद्र ने देखा कि सबमुख स्वयं में एक भी देवता नहीं दिखाई देता तो यम, कुबेर घीर ब्रह्म की लेकर वे भी कुंडमपुर के सिये चल पड़े। संप्रदा समय चारों देवता राजा मत्स्य के डेरे की घीर निरुत्स। राजा मत्स्य ने प्रमिवादन कर उनका सत्कार किया। देवता वहाँ बैठकर सुसताने लग। पोंड़ी देर पश्चात् ईंद्र ने राजा मत्स्य से हमसंती के पास जाकर उसे संदिता देवे के सिये कहा कि 'यह देवताओं में से क्विती को अपना पति चुने'। राजा मत्स्य ने संदिता सुना तो भीचरु रह गए। उनकी इच्छाओं पर मारों तुपार पात हुआ। उन्होंने हाथ जोड़ कर विसय की कि 'बहु भी मन में हमसंती की मिलन-प्राप्ता परे हुए हैं घीर यदि बहु संदिता लेकर जाएया तो उसे पहस ही निराश होना पड़ेगा'। फिर हमसंती के वार्तन की अपनी प्रमिताया पूरी होते जान वे संदिता सेवान के सिये तैपार हुए केवल मार्ग की कठिनाई बाधक बताई। ईंद्र ने उन्हें एक मंत्र देकर कहा 'यदि तुम चाही तो मंत्र इस मंत्र की सहायता से हमसंती के पास निविप्यता पूर्णक जा सकते हो'। राजा मत्स्य संदिता लेकर चल पड़े घीर मंत्र की सहायता से राजप्रासाद में प्रवेसकर हमसंती के पास जा पहुँचे। उन्हें देखते ही हमसंती घीर उसकी सखियाँ बहुत लग्नित हुईं। परंतु हमसंती ने घीर ही अपने को संभासा। वह अपरिचित ब्रह्म की देखकर विचारने लगी कि यह कीन है घीर कठिन पहरे के रहते वहाँ क्यों घीर कौते जला प्राया। क्या यह मयध्य है या सूर्य तेज बाता कोई देवता। उसने फिर राजा मत्स्य की घीर एकटक होकर देखा तो उन्हें पहचान लिया। यह बौड़ बड़ी घीर बहुप होकर उनके डेरे पर पिर बड़ी। राजा मत्स्य ने सिर पकड़कर हमसंती को उठाया। इस प्रयत्न मिसन में दोनों को अपार धार्नर हुआ। हृदय के घाँसु निकल पड़े घीर उनका वियोग-बुदा जाता रहा। पश्चात् राजा मत्स्य ने हमसंती को ईंद्र का संदिता सुनाया। हमसंती संदिता सुनकर धानबधूसा हो गई। उसने ईंद्र की बड़ी मारतना की। साथ ही साथ राजा मत्स्य पर बिनडकर बोली हे प्रायतान। मैं तुम्हारे प्रम के सिये सारे संसार से उदासीन बनी हूँ। तुम्हें तन मन मन धर्षन कर चुकी हूँ। परंतु तुम लोगों का संदिता लेकर मेरे पास प्राए हो। मैं केवल तुमको छोड़ अन्य किसी को पति नहीं बना सकती। यदि तुम्हें ईंद्र का संकोच हो तो मैं कल स्वयंवर में तुम्हें स्वयं ईंद्र लूँगी। उस धकार पर ईंद्र घीर अन्य राजाओं के सामने तुम्हें बरमाता पहना देयो। इसने तुम्हें कोर्न होवी नहीं बहेया घीर धरणा होने के कारण ईंद्र मुझे भी साथ नहीं देया। मत्स्य को इतने बड़ी प्रमप्रता हुई घीर उत्तका रहा सहा संदेह जाता रहा। वह डेरे पर प्राया घीर इद्र तो हमसंती का लब समाचार ज्यों का स्यों बचन कर दिया। ईंद्र ने हृदय नहीं कहा घीर बहु अपबाध वहाँ से चल दिया। इतने दिन स्वयंवर जगा।

इ बचन धारि धारों देवताओं न यह जानकर कि हमर्यतो नल पर घातकत है धीर उठी की समयमाता पहनाएगी तो सभा में नल के पास उठी का कम धारण कर बठ गए । हमर्यती जब नल को बरमासा पहनाने गई तो उसे कई नल बैठे दिखाई दिए । वह वड़ी द्विबिधा में बड़ी धीर सोचने लयी कि किस प्रकार राजा नल को पहचान करे । उसे यह भी बिता हुई कि यदि सभा को उसकी द्विबिधा का पता चल गया तो वह उठ जाण्मी धीर उसके नल का निमना फिर बुलान हो जाएगा । वह बहुत व्याकुल हुई । जब कोई उपाय नहीं सूझा तो भयवान के दरवा में गई । उसने तन्मय होकर भयवान की स्तुति की जिसके फल स्वस्वप घाटाघ बापी हुई कि 'सर्व पूर्वक तीन तरह से परीक्षा लने पर नल की पहचान होजाएगी । जो नल का कम धरे हुए है उनके एक तो परछाई नहीं पड़ती, दूसरे धाँधों को पनके नहीं लगती धीर तीसरे उनके वाँच परती से ऊपर घघर में रहते हैं । हमर्यती ने देखा कि कबल एक पुत्रय ऐसा है जिसमें धाकासबागो के अनुसार पक्षण नहीं घटते । उसने नल को पहचान लिया धीर उसे बरमासा पहना बी । इस प्रकार दोनों की मनोकामनाएँ पूर्ण हुईं धीर उनठे धार्मिक का ठिकाना न रहा । इत्राधिक धारों देवताओं को पहले तो बड़ा धार्मिक हुआ कि हमर्यती ने नल की जैसे पहचाना पर फिर नल हमर्यती के निमन हो जाने से बड़े प्रसन्न हुए । व राजा नल के पास गए धीर ममूर बघनों स उन्हें संतुष्ट किया तथा बरवान दिया । इत्र ने धार्मिकीय विद्या प्रदान की यम ने तो बर्ष की धाम् बो धीर कहा कि धार्मि सब धाकाकारी बनकर रहेगी । बचन ने इच्छा करते ही जा प्रस्तुत हो जाने का बर दिया । इस प्रकार बरवान देकर देवता बिधा हुए । तत्पश्चात् नल हमर्यती का बिवाह हुआ । राजा नल कुछ दिन कुडनपुर में रहे फिर हमर्यती को लेकर उर्ग्रम लने धाम् धीर उसके साथ सृष्ट पुत्रक रहने लगे ।

इत्रादि देवता जब अपने-अपने स्थानों की जा रहे थे तो उन्हें मार्ग में ड्वापर के साथ कतियुग मिला । बातचीत होने पर कतियुग की पता चला कि हमर्यती ने नल को समयमाता देकर धरना पति चुन लिया । वह भी उसे पाने की इच्छा से स्वर्गवर में जा रहा था इसलिये उसे बड़ा जोय प्राया धीर तरकास नल को धाप देना चाहा । ईत्र ने कतियुग को फरकारा धीर बेतायनी बो कि बला करन से उसे महापाप लगेगा जिसके फलस्वरूप उसे नरक भोगना पड़गा । यह कह ब देवताओं सहित चले गए । कतियुग ने नल को धाप तो नहीं दिया पर ड्वापर के सामन प्रतिज्ञा की कि वह नल से बीर टानगा धीर उसे धीर बष्ट देगा । उसे वह धम धम धाम धीर राजपाट से रहित करेगा तथा बन बन घुमा घंत में हमर्यती से उसकी धलप कर देगा । वह तीर की तरह नल के पास गया धीर उसे धर्म भष्ट करन की धात में रहने सया । बाट्ट बर्ष बाद उसे नल की धर्म भष्ट करने का धबसर मिला । एक दिन संध्या काल में संध्या कर्म से निबुल होते ही नल की नींद धागई धीर वह बिना वाँच धोए सो गया । कतियुग ने इतन में ही उसके धारीर में प्रबल कर उसकी मति को फर दिया । बरवान वह नल के भाई पुष्कर के पास गया धीर उसे नल के साथ जुबा धेनने के लिये उबसाया । उतन पुष्कर को धपनी सहायता का बचन दिया । कतित नल धीर पुष्कर का उबा हया । नल तीर पर तीर धाक गया । हमर्यती ने नल को लया लया

के लिये बहुत ब्रजित किया पर वह नहीं माना। उनके दो बालक (पुत्र और पुत्री) थे। इमर्षती ने लूए का रंग देकर उन बालकों को नैहर भेज दिया। घंट में बुद्ध समाप्त हुआ और मल धन-संपत्ति सहित राजपाठ हार गया। पुष्कर ने राज पाजाने पर मल इमर्षती को राज्य से बाहर कर दिया और उन्हें घ्राभय न देने के लिये राज्य भर में घोषणा कर दी। मल इमर्षती बम बम घूमने लगे। पुष्कर के दर से किसी ने भी उन्हें घ्राभय नहीं दिया। उन्हें मूल प्यास सताने लगी। बत में हायागिनी लगी रहने के कारण लास कण भी बुध्पाप्य था। तीन दिन पश्चात् एक रवाना पर सोने का पक्षी दिखाई दिया जिस पर कड़क के लिये मल ने चोती कँठी। परंतु वह पक्षी कलियुग का घंती सेकर उड़ गया। घ्राकाश से उसने अपनी करतूत का वर्णन किया। मल पीतो के बने जाने से बहुत दुःखी हुआ। उसे नदी घ्रापरा ने घेरा। इमर्षती के कट्ट ने तो उसे बहुत ब्रजित किया। उसने इमर्षती को नैहर जाने के लिये समझाया परंतु इमर्षती ने उसे बिपत्ति में छोड़कर आना खोकार नहीं किया। फलत बोगों बूध प्यास सहते हुए फिरने लगे। मार्ग में वही फस फूस और सागपात मिल जान पर बोड़ी बहुत लूपा दांत कर लेते। इस प्रकार घूमते फिरते एक मधी के तट पहुँचे। वहाँ भरपेट पानी पीकर प्यास दांत को धीरे धीरे बर बिभाम किया। जब उठे तो भोजन के रूप में घनापात दो मधुसिया पड़ी मिल गई। मल ने उन मधुसियों को उठा लिया और उन्हें इमर्षती को देकर स्पर्श महान भसा गया। इमर्षती ने मधुसियों को घीलना प्रारंभ किया तो उसकी रंगतियों के धमत से मधुसिया ब्रजित हो गई और हाथ से फिसल कर मधी में घली गई। इमर्षती ठगो सी रह गई। महानर वापस आने पर मधुसियों को न देना मल ने समझा कि शायद लषा से पीड़ित होकर इमर्षती ने उन्हें भा लिया। प्रत- उसे संतोष हुआ और उसकी भूख भी जाती रही। परंतु जब कातविठ बाा ब्रित्त हुई तो भाग्य को कोठने लगा। वे फिर मूल पेट घ्राग पड़े। रात्रि को एक रात्रि में जाकर ठिके। इमर्षती के सो जाने पर मल जागता रहा। उसे महान् बिना सताने लगी। इमर्षती के कट्टों ने उसे बहुत ब्रजित किया। बिपत्तियों से घोर घुटकारा पाने को भी कोई घ्राणा नहीं दिखाई दो। उसके सामने इमर्षती का कट्ट ब्रिट रामरवा के रूप में उपरिस्त हुआ। वह चाहता था कि इमर्षती कुछ दिन नहर वाकर रहे पर बहुत समझाने सभाने पर भी इमर्षती ने आना घरबीकार किया। उसे यह भी घ्राणा नहीं रही कि साथ रहे इमर्षती कभी उसे छोड़गी। घतएव घट्ट लोचने बिचारन के पश्चात् उन इमर्षती को वही सोतो छोड़कर घने जाने का निश्चय किया जिसके पश्चात् इमर्षती उसे न वाकर स्वत विनुगूह बली जाएगी और उसका बम बम मरकने का कट्ट मित्र जाएगा। इन निश्चयानुसार वह घीरे से उठा और इमर्षती को छोड़ कर जाता गया। अपने गमय छोड़न पट्टने के लिये इमर्षती की साड़ी और बाहर घ्रापी घ्रापी फाड़कर ल गया। प्राण फलत जब इमर्षती जाती तो मल को न देगकर घट्टन ब्रिमि हुई। वह उसे इपर उपर दूँने लगी पर वह वही नहीं दिखाई दिया। बहुत देर हो जान कर भी जब मल नहीं घ्राया तब उसका प्यास साड़ी और बाहर की घोर गया। उन्हें घटे देग उसे बिन्नाग हुआ कि वह उसे छोड़कर घमा गया। उसका बु-म उमड़ बला घट्ट बिगाय करती हुई राने लगी। वह मल को मोत्र में बत की और

बस पड़ी। उसे तन बदन की कुछ सुप नहीं रही नल नल पुकारती हुई बन बन फिरने लगी। फिरते फिरते वह एक प्रजगर के सामने आ निकली जिसने सपक कर उसे नील लिया। एक प्वाल में, बा दूर से देख रहा था तत्काल दौड़कर तसवार से प्रजगर का पेट धीर बमयंती को बाहर निकाल दिया। परंतु बमयंती के रूप को देख ग्वाला उस पर घातघत हो गया धीर पकड़ने के लिय उसकी घोर बढ़ा। बमयंती ने ग्वाले की डिठाई देख उसे शाय दिया जिससे उसकी तुरंत मृत्यु हो गई। वहाँ से भागती धीर बिनाप करती हुई बमयती घागे बढ़ी। बमते बमते वह ऐसे घोर पियाबान बन में पहुँची जहाँ सिंह, हाथी चीते रीछ धीर अनेक हिसक पशुपक्षियों का निवास था। एक सिंह अपनी गर्जना से मारे बन को बहना रहा था। बमयती सीम उसके सामन गई। उसे जीवन का मोह नहीं रहा। नल के बिना उसे सत्तार निस्तार प्रतीत हुआ धीर भीरम की इच्छा के बजाय उसे मृत्यु की इच्छा हुई। परंतु उस बिरहिणी की बिभोगाणि के सामन वह सिंह सिवार की तरह भाग पया। यह देख बमयंती को छिर विरह सतामे सागा। वह धरपन प्याकुस हुई। उसके लिय न तो मृत्यु ही घातो धीर न बिरह ही उसे बन बेता। वह फिर नल का नाम ले लकर घ्राग बड़ी। रास्ते में पविकों से नल के बिषय में पूछनी पर कोई कुछ न बताता। अंत में एक नदी के तीर पहुँची जहाँ उसने अनेक मुनियों को देखा। मुनियों ने बमयता को अपने पास बुलाया धीर उसका परिचय पूछा। बमयंती न उन्हें अपनी बिपत्ति की सारी कहानी कह सुनाई। उन्होंने बमयंती को सात्वना बेते हुए कहा 'यह बिपत्ति जाल भरित है इसलिय इसने छुटकारा पाना बदा की बात नहीं है। परंतु यह यह बहुत पोकें दिनों के लिये है। परवानु तुम्ह सेरा पति मिल जाएगा धीर तू उसके हृदय का रानी हागी। धन सपत्ति धीर राजसमाज भी पहुँचे जाता हो जाएगा। इसलिये निश्चित रह बिता न कर। तेरी सब बिताए दोध दूर हो जाएंगी। मुनियों की बात सुनकर बमयती पहल तो बिस्मित हुई, पर पोछ यह समझकर कि मुनि जग सत्य घोतत ह उसे कुछ धीरक रया। वह वहाँ से कतपती विलपती घागे पड़ी। रास्ते में बनजारों का झुंड मिला। बनारों के नायक न परिचय पाकर उसे बबेरी बलम के लिय कहा। उसने बमयंती को समझाया कि बन क बजाय बस्ती में पविक रात दिन भ्रात आते रहते ह। उनके द्वारा दूर दूर की खबर हवा की तरह जघनता है इसलिये पूछनाघ करतै रहन पर उनसे कमी न कमी नल को खबर मिल जाएगी। बमयंता नायक से सटमल होकर उसके साथ बस बी। परंतु कुछ दिन परवान धन बन में निवास करते हुए अघ रात्रि के समय बनजारों के झुंड की मदसो हावियों न रोद बाला। क सबक तव मारे गए। केवल बमयंती धीर बी चार मिपारी बाह्यण बब रहे। बमयंती बनजारों की बजा देख अत्यंत दुपी हुई धीर स्वयं की मृत्यु का कारण समझ बिबब बिबल कर रोने लगी। बाह्यणों ने उसे समझ बभाकर नाग किया धीर अपने साथ ले लिया। बमयंती उनके साथ बबेरी पहुँची। बबेरी में वहाँ की पटरानी ने उसे देखा धीर अपने पाम बनाकर उनका परिचय पूछा। उमने परिचय के लिय में कबल इतना ही कहा कि 'वह करिनी की पारी हुई है'। पटरानी ने फिर कुछ नहीं पूछा पर उसके रंग रूप ने समझ



पई कि यह कोई राजराज्ञी है। उसन उसका स्वागत साकार किया और चाटिका म टिकन का स्थान दिया तथा अपनी पुत्री को साथ रहने के लिये भेज दिया।

उपर नम इमर्यती की छोड़कर यत्ना तो यथा पर इमर्यती का बिच्छू उसे सताने लगा। उसने बिना बह ध्याकृत होकर फिरने लगा। फिरते फिरते ऐसे वन में पहुँचा जहाँ बाबागिनी सभी हुई थी। वहाँ कोई उसको पुकार पुकार कर रहा था—नम सुम धर्मात्मा, गुनी और शानी हो जरा मेरे पास आकर एक बात सुन ली। नम ने यह सुनकर बुद्धि बौझाई तो एक सर्प की भी उसका नाम पुकार रहा था—बाबागिनी में पड़ा देना। उसकी बात मानकर वह उसके पास गया। सर्प ने कहा म पापी हूँ। मुझे अपने ज्यों की ओर आइएन के साथ से यह पति मिली है। मैंने एक ब्राह्मण को धकारण इसा था जिसने मुझे एक ही जगह पर स्थिर रहने का श्राप दिया। इसलिय म हित कुन नहीं सकता। इपर यह धर्मि काल ल्य होकर मेरी ओर बड़ रही है। श्राप मुझे इससे बचाइए और सुरसित स्वान पर म जा कर रख डीजिए। यदि मारने इस बार मुझे बचा लिया तो मैं सदा के लिये धमर ही आइँगा। नम के प्रथम में सर्प के प्रति दिया उपपन्न हुई और उसन उसको उठाकर धर्मि से बाहर कर दिया। अप छोड़ना चाहता तो सर्प ने बरा कबम गिनते हुए कसकर छोड़ने के लिये कहा। नम ने यत्ना ही किया, परंतु बस' कहने पर सर्प ने उसे इस लिया। सप क इसने से नम के सारे शरीर में विष ध्याप यथा और उसका रंग काला पड़ गया। नम ने कारण पूछा तो सर्प ने कहा 'मम धार क साथ घोषा नहीं किया है। इस समय ध्राप बुद्धिओं के फेर में पड़े हूँ। और यह बणा कुप्य दिनों तक बनी रहणी। ध्राप राजा हूँ और सारा संसार ध्रापको जानता है। कोई शत्रु इस स्थिति में ध्रापको बुझ से सकता है। इतलिय मैंने ध्रापके क्वको क्षिपा लिया है जिससे कोई ध्रापको पहचान न सके। जब ध्रापके क्विन टन जाएगे तो ध्रापके स्मरण करने पर म प्रकट हो जाइँगा और अपने विष का प्रोषण कर लूँगा। ध्राप का रंग फिर ज्यों का त्यों ही जाएगा। इसक प्रतिशत यह विष ध्रापकी रसा करेगा। इसके प्रभाव से ध्रापके निकट न तो कोई शत्रु ध्रापवा और न पुत्र में कोई ध्रापसे शीत ही सकेगा। जब ध्राप अपनी नाम बाहुक रत सीधे राजा शत्रुपम के पास ध्योप्या बल आइए। राजा शत्रुपम बुबा जेसने की विद्या जानते हैं। ध्राप उनकी सेवा करके बह विद्या प्राप्त करें। बुबा का मन जान सने पर फिर उसी रीत द्वारा ध्राप अपनी यथा ठुमा राज्य प्राप्त पाएँगे और यह बुबा फिर ध्रापके लिये स्वप्न हो जाएगा। यह कहकर उसने नम को दो बंधुसिपा यानपुबक रतन के लिये ही धीर कहा कि य धर्मि स्वल्प हूँ। समय ध्राने पर य उनके तेज को पहन जाता कर देंगे। नम सर्प के उपरोक्तानुसार सीधे ध्योप्या पहुँचे और वहाँ राजा शत्रुपम के सारथी बन कर रहन लये।

मुंडनपुर में जब नम इमर्यती के बन्धन का समाचार पहुँचा तो राजा भीमसेन और रानी राजमती बहुत दोकाहुन हुए। उन्होंने शीघ्र ही नम इमर्यती की राज करने के लिये चारों ओर ब्राह्मणों और भादों की भजा। राजा नम का यत्ना तो न यत्ना पर सहदेव मानक ब्राह्मण ने बँदेरी के राजमहल में इमर्यती को देय लिया। बात प्रस्ट ही

ने पर बहिरौ की रानी दमयंती से प्रेम पुष्पक मिली। उसने दमयंती को बताया कि उसकी माँ और वह सगी बहनें हैं इसलिये वह उसकी पुत्री के समान है। वह दमयंती के कुल से बहकर बहुत दुखी हुई और उसे उसकी इच्छानुसार राज साज के सामे कुडनपुर में बिया। दमयंती के कुडनपुर पहुँच आने पर सबको बड़ा हर्ष हुआ पर दमयंती को उसे कुछ मुल नहीं मिला। वह नल के विरह में घुलने लगी। उसके दुःख को देखकर राजा और रानी बहुत चिन्तित हुए। उन्होंने नल को बुझने के लिये ब्राह्मणों का नियुक्त किया। ब्राह्मण पहले दमयंती से मिले। दमयंती ने उन्हें नल के चिह्न बताए और पट्टी तब दिखाकर नल के काम का परिचय दिया। उसने कहा, यहाँ यहाँ जाओ यहाँ-यहाँ हुआ कि 'एक पुष्पक कुल से राघव स्त्री को संग में सोती घाड़कर घला गया। उसकी तब को भी घापी फाड़कर ले गया। ऐसा निठुर कि जरा भी इन्त नहीं हुआ। उसके न, मन और हृदय को बरख की ही तरह पीर कर बसा गया।' उसने कहा यदि इन त्यों से नहीं डेरा डाले किसे पुष्पक का पता बसे तो समझ लेना कि वही बनवासी निठुर नल है। ब्राह्मणों के हृदय में भी दमयंती की पीड़ा से यकी कबजा उत्पन्न हुई। वे उसका मर्ममंथी संदेश लेकर चल और उसे वन-वन गगर-नगर कहते हुए नल को बुझने लगे। उनमें से एक ब्राह्मण शयोष्या भी पना और घर घर मनो-गपी वही बात सुनने लगा। वह फिरते फिरते वहाँ निकला वहाँ नल रहता था। नल ब्राह्मण के मुख से मर्म संदेश सुनते ही मूर्च्छित हो गया। जब चतुर्थ हुआ तो ब्राह्मण की प्रेम से मुलाकर बँडायी और इस प्रकार कहन लगा 'हे मित्र! वही पतिव्रता स्त्री है जो पति से उन्धी प्रीति करता है। भले हो पति सेवा में उसे दुःख मिले फिर भी उसकी सेवा में प्रियकारीक मन लगाती है। पति को सब तरह से मना समझती है और कष्ट का कारण अपने बुरे कर्मों को बताती है उसे पति के सब काय हितकारक जान पड़ते हैं। उसके महिल पुर्न कायों को वह मन में नहीं धरती और भ्रामक दृष्टि उसको धरपी नहीं लगती। और मुनो, उस स्त्री में बँ सब बातें पों को उसके पति को भाती थीं। वह कुटुमार बड़े दुःख में थी इसलिये उसके दुःख को जब पति नहीं देख सका तो छोड़कर चला गया। परंतु इस संसार में बँ बिरसी स्त्रियाँ हँ जो दुःख पाकर भी कुली नहीं होतीं। पतिव्रता वही हँ जो पति के कष्ट हो जाने पर कष्ट नहीं होतीं प्रामुख उसके कष्ट होने पर उन्हें उसी में रस माना है।' ब्राह्मण ने नल का कथन संदेश के उत्तर रूप में पाया। वह नल को अपने स्थान पर ले गया और उसका परिचय पूछा। नल न कहा 'मेरा नाम बाहुक है। यही राजा की सेवा में रहना हँ। मैं शालिहोत्र बिद्या जानता हँ इसलिये राजा ने अपने घोड़ों की देख देख और सम्हाल करने के लिय मुझे नियुक्त किया है। इसके प्रतिव्रत राजा के चिन्कार्यों को चिन्तित करना सिखाता हँ और पाक बिद्या में प्रवीण होने के कारण राजा के लिये भनक प्रकार की रसोई तयार करता हँ। राजा मेरी सेवा से प्रसन्न रहता है और मुझसे प्रेम करता है। ब्राह्मण संदेश का उत्तर पाकर सीधे कुडनपुर आया और राजा तथा दमयंती को उसने समस्त वृत्तित सुनाया। दमयंती ने बाहुक के कर रंग के विषय में पूछा तो ब्राह्मण ने रंग बहुत ही कामा बताया और कहा कि संभवन बिद्योगात्रि में चल कर वह बसा हो गया है। दमयंती को विश्वास हुआ कि बाहुक ही राजा नल है। वही शालिहोत्र बिद्या जानता है और

गई कि यह कोई राजरानी है। उसन जतका स्वामत सत्कार किया घोर घाटिका म द्विकन का स्वान दिया ताया प्रपनी पुत्री की ताप रहने के लिये भेज दिया।

जब नल बमर्यती को छोड़कर घसा तो गया पर बमर्यती का बिरह उसे तताये गया। उसके बिना वह ध्याउल होकर फिरने लगा। फिरते फिरते ऐसे पन में पहुँचा जहाँ बामागि सयी हुई थी। वहाँ कोई उसकी पुकार पुकार कर रह रहा था—बामागि में पड़ा देसा। उसकी बात मानकर वह उसके पास गया। सर्प न कहा, म पापी हूँ। मुझे अपने कर्मों की रक्षा के लिये से यह गति मिली है। मैंने एक ब्राह्मण को प्रकृत्य डसा था जिसने मुझे एक ही जगह पर स्थिर रहने का प्राप दिया। इसलिये म हिस कुल नहीं सकता। इधर यह प्रागि काल रूप होकर मेरी घोर बड़ रहो है। प्राप मुझे इससे बचाइए और सुरसित स्वान पर न जा कर रख दीजिए। यदि प्राने इस बार मुझे बचा लिया तो मैं सवा के लिये प्रपर हो जाऊँगा। नल के मुख में सर्प के प्रति दया उत्पन्न हुई और उसने उसको उठाकर प्रागि तो बाहर कर दिया। जय छोड़ना चाहता तो सर्प ने बस कबम पिनते हुए बमकर छोड़ने के लिये कहा। नल ने बेता ही किया; परंतु बस कहने पर सर्प ने उसे डसा लिया। सर्प के डसने से नल के सारे घरीर में बिज व्याप गया और उसका रंग कासा पड़ गया। नल ने कारण पूछा तो सर्प ने कहा “मैंने प्राप क साव पोसा नहीं किया है। इस समय प्राप कर्मों के फल में पड़े हैं। घोर यह दसा कुछ दिनों तक बनी रहेगी। प्राप राजा हैं और सारा संसार प्रापको जानता है। कोई सज्ज इस स्थिति में प्रापको दुःख दे सकता है। इसलिये मैंने प्रापके कर्मों की रक्षा किया है जिससे कोई प्रापको पहचान न सके। जब प्रापके कुदिन टल जायेंगे तो प्रापके स्मरण करने पर मैं प्रकट हो जाऊँगा और अपने बिय का घोषण कर लूँगा। प्राप का रोग फिर ज्यों का त्यों ही जायगा। इसके प्रतिरिक्त यह बिय प्रापकी रक्षा करेगा। इसके प्रभाव से प्रापके निरुध न तो कोई घमू प्रायगा और न युद्ध में कोई प्रापसे बोल ही सकेगा। जब प्राप प्रपना नाम बाहुक रख लीं राजा ऋतुपर्ण के दात प्रयोम्या बने जाइए। राजा ऋतुपर्ण बुवा खेलने की बिद्या प्रानते हैं। प्राप जल्दी सेवा करके वह बिद्या प्राप्त करें। बुवा का मर्म जान लने पर फिर उसी खेल द्वारा प्राप प्रपना पना हुआ राज्य वापत पाएँगे और यह दुःख फिर प्रापके लिये स्वल्प ही जायगा।” यह कहकर उसने नल को दो कंबुनियी धरुणपर्णक रखने के लिये भी और कहा कि व प्रबधि स्वल्प है। समय प्राने पर व उसके लेज को पहले बेता कर देवे। नल सर्प के उपदेशानुसार लीं प्रयोम्या पहुँचे और वहाँ राजा ऋतुपर्ण के सारथी बन कर रहने लगे।

मुंडनपुर में जब नल बमर्यती के बलबाध का समाचार पहुँचा तो राजा भीमसेन और रानी राजमती बहुत शोकानुत हुए। उन्होंने प्रीम ही नल बमर्यती की शोक करने के लिये चारों घोर ब्राह्मणों और भावों को भेजा। राजा नल का पता तो न जाता, पर ससुदेव नामक ब्राह्मण ने बंदिरी के राजमहल में बमर्यती को देख लिया। बात प्रकट हो

जाने पर खिरी की रागी दमयंती से प्रेम पुर्बक मिसी । उसने दमयंती को बताया कि उसकी  
 माता धीर बहु सगी यहुने हँ इसलिये वह उसको पुत्री के समान है । वह दमयंती क कुल  
 को देखकर बहुत दुखी हुई धीर उसे उसकी इच्छानुसार राम साज के साथ कुंडनपुर  
 भेज दिया । दमयंती के कुंडनपुर पहुँच जाने पर सबको बड़ा हर्ष हुआ पर दमयंती को  
 उससे कुछ मुँह नहीं मिला । वह जल के बिल्ह में घुलन सगी । उसके कुँब को देखकर  
 राजा धीर रागी बहुत चिंतित हुए । उन्होंने जल को दूँडने के लिये ब्राह्मणों का निपुण  
 किया । ब्राह्मण पहल दमयंती से मिल । दमयंती ने उन्हें जल के बिल्ह बताए धीर प्यो  
 बाहर बिघाकर जल के काप का परिचय दिया । उसने कहा जहाँ वहाँ जाओ वहाँ-वहाँ  
 कहना कि एठ पुण्य कुँब से शय स्त्री को सय में सोती छोड़कर जाता गया । उसकी  
 बाहर की भी प्राणी फाड़कर ले गया । ऐसा निठुर कि जरा भी इधित नहीं हुआ । उसके  
 तन मन धीर हृदय को बल्य की ही तरह धीर कर जाता गया ।" उसन कहा यदि इन  
 बातों से कहीं डेरा डालें कियो पुण्य सा पता जलें तो समझ लमा कि कहीं बनवाती  
 निठुर नल है । ब्राह्मणों के हृदय में भी दमयंती की पीड़ा से बड़ी कपटा उत्पन्न हुई । वे  
 उसका मर्मनेरी संदेह संकर बस धीर उसे बन-बन गयर-गयर कहते हुए नल को  
 दूँडने सग । उनमें से एक ब्राह्मण प्रनोप्या भी गया धीर पर उर गली-गली कहीं बात  
 सुनाम लगा । वह फिरते फिरते वहाँ निकला कहीं नल रहता था । नल ब्राह्मण के मुँह  
 से मर्म संदेहा सुनते ही मूर्च्छित हो गया । जब अंतग्य हुआ तो ब्राह्मण को प्रेम से  
 बुलाकर बँटाया धीर इस प्रकार कहने लगा हे मित्र ! कहीं पतिव्रता स्त्री है जो पति से  
 सच्ची प्रीति करती है । जलें ही पति सेबा में उसे कुँब मिसे फिर भी उसकी सेबा में  
 धर्मिकायिक मन लगाती है । पति को सब तरह से भसा समझती है धीर दृष्ट का कारण  
 अपने बुरे कर्मों को बताती है उसे पति के सब काय हितकारक जान पड़ते ह । उसके  
 धहित पुर्व कार्यों को वह मन में मूर्ही परती धीर भ्रामक दृष्टि उसको धरपी मूर्ही  
 लयती । धीर सुनो उस स्त्री में बे सब बातें थीं जो उसके पति को नाती थीं । वह  
 मुहुमार बहु कुँब में सी इसलिये उसक कुँब की जब पति मूर्ही देख सका तो  
 धोड़कर जाता गया । परंतु इस संसार में ये बिरली स्त्रियाँ हँ जो कुँब पाकर भी दुखी  
 नहीं होती । पतिव्रता कहीं हँ जो पति के दृष्ट हो जान पर दृष्ट नहीं होती प्रायत उसके  
 दय होने पर उन्हें उती में रत घाता है ।" ब्राह्मण ने नल का कथन संदेह के उत्तर रूप में  
 पाया । वह नल को धरने स्थान पर स गया धीर उसका परिचय पुँदा । नल न कहा  
 "मेरा नाम बाहुक है । यहाँ राजा की सेबा में रहता हँ । म शातिहास बिघा जानता हँ  
 इसलिये राजा ने अपने घोड़ों को बल देष धीर उसका परिचय पुँदा । नल न कहा  
 हँ । इसदे घतिरिक्त राजा के बिमकारों को बित्रांजन करना सिघाता हँ धीर पाक  
 बिघा में प्रधीय होने के कारण राजा के लिय प्रनक प्रकार की रसोई संवार करता हँ ।  
 राजा मेरी सेबा से प्रसन्न रहता है धीर मुझने प्रेम करता है । ब्राह्मण संदेह का उत्तर  
 पाकर तीबे कुंडनपुर घाया धीर राजा तथा दमयंती को उसने समस्त वृत्तान्त सुनाया ।  
 दमयंती ने बाहुक के कर रंग के बिजय में पुँदा तो ब्राह्मण ने रंग बहुत ही काना  
 बताया धीर कहा कि संभव बिद्योगिन में जल कर वह बसा हो गया है । दमयंती  
 को बिबास हुआ कि बाहुक ही राजा नल है । कहीं दानिहोत्र बिघा जानता है धीर

बिना तथा रसोई बनाने की काम में भी वह प्रवीण है। उसके जब रंग न उठाको कुछ भ्रमित प्रपश्य किया, पर उसके बिबाह डिगा नहीं। उताका हृदय उसके मिलन के लिये उद्विग्न हो उठा। वह माता के पास गई थीर उसकी संमति से उसने नल को कंडन पुर साने का उपाय सोचा। उसन सहदेव ब्राह्मण को बलाया थीर उसे प्रयोष्या जाकर राजा ऋतुपर्ण को यह समाचार सुनान के लिये कहा 'नल जो गया है उसका नहीं पता नहीं मया। इसलिये उसकी स्त्री दूसरा बिबाह करना चाहती है। बिबाह मूहत प्राय ही है। जो प्राय कंडनपुर पहुँचने पर उसको समयती पति के रूप में दरेगी। उतान सहदेव को प्रपत्नी योजना बताई थीर कहा कि 'यदि नल सबगुण राजा ऋतुपर्ण के यहाँ होया तो एक ही दिन में रथ सहर कंडनपुर आयगा। सहदेव ने प्रयोष्या जाकर राजा ऋतुपर्ण को उक्त समाचार सुनाया। राजा न समाचार सुना तो उसके हृदय में समयती को प्राप्त करने की प्रबल इच्छा जयी। वह दीप्र से दीप्र कंडनपुर पहुँचने की उतावली करने लगा। उसने तुरंत बाहुक को बुलाया थीर उसे बनपंती के बिबाह का समाचार सुना दिन डूबने के पहले ही रथ द्वारा कंडनपुर पहुंचाने के लिये कहा। बाहुन समयती के निश्चय को सुनकर पहले तो हक्का चक्का रह गया पर फिर यह समझकर कि संभवत उसने उसे ही बुलाने का उपाय रचा है उसका समयती पर फिर बिबाह जमा। उसने तुरंत सन्तुल कर राजा से कहा कि वह दिन डूबने के पहले उन्हें प्रपश्य कंडनपुर पहुँचा देना। उसने तैय्य बनने वाले घोड़ों को रथ में बाँटा थीर राजा को बिठाकर रथ कंडन पुर की धोर ले जमा। उसके हाँकने से पीड़े पवन बेम के समान जस पड़े थीर रथ से शैव यज्ञ की सी श्वनि उत्पन्न हुई। राजा को बड़ी प्रसन्नता हुई थीर वे नल की प्रशंसा करने लगे। इसी समय राजा के कंभे से बुवट्टा जितकर नीचे गिर पड़ा। उन्होंने बाहुक को 'बुवट्टा गिर गया' कह कर तुरंत रथ ठहराने का आदेश दिया। बाहुक ने बुवट्टे के सत कोस पर धाड़ जाने की बात बतला बड़ेका बूस के पास रथ ठहरा दिया। राजा को जब रथ की गति बिबित हुई तो बाहुक से बोले 'बाहुक! इममें सबेह नहीं कि तुम बड़े मुशी हो; परंतु मैं भी प्रदन्त पृथ का मर्माँ हूँ। सामने जो बड़ेका बूस बिबाई देता है उसमें जितने फल फल थीर पतिव्रती हैं तथा जितने पक्षे-भयवले फल हैं एवं उनमें से जितने जमीन पर गिरे हुए हैं मैं उन सबका प्रसंग-प्रसंग सेना बतला सकता हूँ। बाहुक यह जानने के लिये बड़ा उत्सुक हुआ थीर उसन राजा से लंबा पूछ। राजा ने सबका प्रसंग-प्रसंग लंबा बतला दिया। बाहुक ने बूस उखाड़कर पपना की तो सेना सत्य पाया। उसने राजा से वह बिबा उते सिखा देने धोर बचने में उससे शानिहोब बिबा सने की प्रार्थना की। राजा ने उसे प्रपत्नी बिबा सिखायी। उत बिबा को प्राप्त करने के पहले बाहुक को छूट बिबा सीखनी पड़ी। इसलिये जैसे ही वह बिबा प्राप्त हुई जैसे ही उसे कतिपय बिबाई दिया। कतिपय नल के सामने हाथ जोड़कर बड़ा हुमा थीर उससे जमा माचना के लिये प्रदन्त बिदप करने लया। उसने कहा कि उते बुवट्टों का जल मिल गया। पतिव्रता समयती ने बुबिन में पड़कर उसे इस प्रकार सत्य बिबा या अजितने मेरे सत्य प्रचारण ऐसा धीर ठाना है थीर मेरे पति को बीबा बोल किया है, वह भी हो बिबाता। तुम की जाया में न बैठे। उतका धी पृथ पूर जाय, वह

बनवास करे धीर उल्लास मुझ मंदिर बहुर करती में मिल जाय ।” कतिपय ने कहा कि उस क्षण का प्रभाव उस पर बर्पात हो गया है । उसकी प्राणि धीर नष्ट हो गई है । जिस बहुते के बस पर वह चला रहा, वह उसके द्वारा बन्द कर परासायी हो गया धीर वह पुनः कम से उसके मध्य में है । नस को कतिपय पर क्या आई धीर उसने उसको लमा कर दिया । परचात् कतिपय घोडा त्याग कर भसा गया धीर नस भी राजा ऋतुपर्ण सहित तीसरे पहर रथ लकर कुंडनपुर जा पहुँचा । रथ को आवाज सुनकर इमर्पती बति को देखने के लिये राजमहल की छत पर गई । परंतु सब सज्जन घटित होने पर भी रथ को न देख वह नस को बाहुक के भेय में नहीं पहचान सकी । उसके सामने यह समस्या अकल्पनीय कम में उपस्थित हुई धीर वह श्रम में पड़ गई ।

उपर राजा भीमसेन को अब राजा ऋतुपर्ण के घाने का समाचार मिसा तो उन्होंने उनका स्वागत किया धीर उन्हें भवनसार में दिखाया । राजा ऋतुपर्ण ने देखा कि वहाँ बिनाह की कुलु भी तैयारी नहीं हो रही है तो वे बकराए धीर बड़ विचार में पड़े । राजा भीमसेन को अब विरहित हुआ कि राजा ऋतुपर्ण उसा दिन प्रयोग्या से चले ह तो व भी साथ में पड़ । उन्होंने राजा ऋतुपर्ण से धीप्रता से घान का कारण पूछा । राजा ऋतुपर्ण के मुझ पर पहले लंकोच धीर लज्जा के विद्म भलके, परंतु सुरंत अपने को सहाय कर उलर दिया कि ‘वे कंवल बर्षों के लिये प्राए ह । राजा भीमसेन ने इस पर कृतज्ञता प्रकट की धीर उनका बड़ा सत्कार किया ।

इमर्पती ने नस का समाचार जानने के लिये युष्कर मजा धीर स्वयं महल की छत पर से कान लगाकर सुनने लगी । धर ने बाहुक से उसका धीर उसके सापियों के नाम पूछे तथा रथ स्वामी के विषय में बतलाने को कहा बाहुक ने कहा । “रथपति प्रयोग्या मरेध” राजा ऋतुपर्ण हैं । वे इमर्पती के द्वितीय वर बरन करने का समाचार पाकर प्राए हैं । मेरा नाम बाहुक है धीर मैं राजा का सारपी हूँ । सापियों के नाम कमज बारसुतो धीर जीबन हैं, वे सामान की देस रैठ करते हैं ।” धर ने बारसुतो से, जो पहले नस का सारपी था धीर उसके पुत्र पुत्री को कुंडनपुर पहुँचाकर प्रयोग्या जला गया पा, नस का समाचार पूछा । परंतु बारसुतो के कहने प पहले ही बाहुक बीम उठा । उसने बुझा, “बसा नस की रथी इती बाहू चहुी है ? यह बात यह लीग जानना चाहते हैं इमर्पति युष्ता हूँ । फिर बारसुतो जिस गीब को देखता है वहाँ नस प्रबन्ध होमा । इस समाज से वह बाहर नहीं है । यदि वह है तो इती रथ में है । वह जिसके हृदय में चहुता है वही उसको पहचान सकता है । हृदय के बल को देखकर उसे धम धमय जाता जाने । जो उसे (बास्त्रिक) बर्ष में देखना चाहेगा वह डूँड डूँड कर पक जाएगा वर उले नहीं पा सकेगा । प्रथम समझने हुए को खोज करेगा वह पा जाएगा । जो बात-बात में धेर लेना जानता है वही उस बुदय को पहचान सक्ता है ।” धर ने बाहुक को नमी धीर बापी बपभ्य । उते बिबवात हुआ कि यह या ती स्वयं नस है प्रपचा वह नस के विषय में जानता है । उसने बाहुक से उत पुत्रक क विषय में भी प्रपची जानकारी बताने के लिये पूछा जिसने प्रयोग्या में घूमते हुए उस ब्राह्मण ल बाते की भी को कहुता करता था कि “वह बीम बुदय है जिसने बतिबता रथी को उसकी साड़ी धीर बाहर

धीर कर सब दिया। वह बड़ा ही तिष्ठर है जो जरा भी पीड़ा नहीं हुई। यह निर्यय उग्र होती हुई जो छोड़कर जाता गया।" इस बात में मन को हृदय को मानो धीर दिया। उसमें पहले की जो बरार भी यह नई होकर फिर पीड़ा देम लगी। प्रमाणि ने उस घाय को फिर रोचना धारम्भ किया। हँसता हुआ मूछ रलते हुए भी उसकी भाँसें भास हो गईं धीर जगते प्रभूपारारुँ निकस पड़ीं। यह फिर पोला, हे मित्र! तुम वह पुत्रय भी हमी में है। यह मा तो मे हूँ या वह मेरे संग ही है। दूसरी जगह कहीं नहीं है। इतना सुनते ही वह घर सीपे बमयस्त्री के पास प्राया धीर जगते बाहुक की सब बातें ब्योरेबार कह सुनायीं। घर में बमयस्त्री से बहा 'बाहुक को ही प्रीतम समझो। मैं उसके हृदय में प्रय की पीड़ा पाता हूँ। जगमें विरहाग्नि भरी हुई है। ऊपर से वेह काली पड़ने का कारण यह है कि यह विरहाग्नि से दग्ध हो चुकी है। उसके बोजने में अग्नि की लपटें ऐसी निकसती हैं मानो जलका मुल मूछ न होकर अग्नि की भट्टी न मूछ खोता हो। वह बुझने बासे बचन कतता है धीर जसका मन तुम्हीं में लया रहता है। प्रय में अब तुम्हारा नाम सुना तो उसकी भाँसें से बहिर की पारारुँ यह जलीं। यह निश्चय ही तुम्हारा पति है। समय चहुँते उस पहचान तो। उसके जने जाने पर फिर रोगा होया। बमयस्त्री ने कहा 'हे भाई! मने भी बातें सुनकर प्रियतम को पहचान लिया है। परन्तु अन्न को सब तरह से दूर कर देना प्रच्छा है जिससे पीछे पड़ना न पड़े। इसलिए भोजन की सामग्री धीर रीते पड़े लकर बाहुक के पास जाओ। यदि वह नल होना तो बिना अन्न धीर अग्नि के रसोई तैयार कर भेजा। नल के बेघरते ही जाली पड़े पानी से भर जाते हैं धीर उसके स्मरण करते ही अग्नि भी जली जाती है। इनके अतिरिक्त कुछ सुयन्त्रियुक्त फूल लोकाकर उसके हाथ में देना। यदि हाथ से मलने पर फूल क्यों के र्यों प्रस्ताल धीर सुयन्त्रियुक्त बने रहें तो बाहुक निःसन्देह नल के अतिरिक्त धीर कोई नहीं।' वह मनुष्य तत्काल कूल जलरहित पड़ा धीर रसोई का सामान लकर बाहुक के पास गया। बाहुक जहाँ देखते ही बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने समझ लिया कि वह सब उसकी परीक्षा के लिय भजा गया है। उसे प्रिय का मिलन निष्कट दियाई दिया। उसने पहले फूलों को लकर हाथ से मला तो उनके तेज रंग धीर मुबास में धीर वृष्टि हो गई। देखने बाल प्राश्चर्य करने लगे। फिर उसने जाली पड़े की ओर देखा, वह पानी से भर गया। सत्यवात् बरतन के अन्न में नमक जल जल धीर मुबास का संचार कर उसे हाथ में लिया तो तत्काल उफान आकर भोजन भी तैयार हो गया। फलतः यह परीक्षा सब तरह उसकी सप्ती बन गई। वह मनुष्य भोजन के बरतन को लेकर बमयस्त्री के पास बरत प्राया धीर उसे बरतन देकर जो कुछ देखा वह बर्तन कर सुनाया। बमयस्त्री ने पहले भोजन को सु या धीर फिर प्रेम से उसे खाया तो अन्तमें सुयन्त्रियुक्त रस धीर मिठात आदि सब बीसे ही पाए बीसे नल के बनाए भोजन में चहुँते थे। इस पर उसे निश्चय हो गया कि बाहुक ही उसका पति है। उसने अपने बालकों को भी उसके पास भेजा। बाहुक ने उन्हें बीड़कर बसें लया लिया धीर रोने लया। राजा अनुपम यह देख रहे थे। उन्होंने बाहुक से उन बालकों का परिचय पूजा। बाहुक ने कहा 'महाराज! इहाँ बालकों के समान मेरे दो बालक थे जिनका स्मरण कर मैं रो बठा हूँ। बमयस्त्री ने अब इसका भी परचा पाया तो उसे बाहुक के पति

होने में पूर्ण बिबास हो गया और वह तुरंत माता के पास गई। उसने माता की पति के घाने का समाचार दिया और जिस जित प्रकार पति की परीसा की वह भी सब सुनाया। माता ने उसी क्षण भर भोजन वादुक को बुलाया। बमपंती बादुक के सामने चाकर सीधी खड़ी हो गई। नन का दृष्टि जैसे ही बमपंती की दृष्टि से मिली वह रीत लगा। उसके घासु निकलते समय भास दिखाई दिए और गिरते समय लफेर। यह नन में बिदाय बात थी। बमपंती ने सब यह भद भी पाया तो वह जोर से रो उठी। वह बोली, 'प्रियतम ! मुझ बग में छोड़कर तुमने भंसा किया बीसा कोई नहीं करता। संग रहते मेह उपपन्न किया और जिस मिलन की सदा इच्छा रहती है उससे घसग हो गए। दूर भी होते हैं तो परीसा नहीं होती। बिछुड़ हुए मिलन ही जाने पर फिर यम सगते ह। लक्ष्मण, मैं इस मिलन के कारण मारी गई। मैं तुमसे जुड़ी हुई थी, पर तुमने घसग किया। सुना है कपटी लोग मिलन में भी घसग रहते हैं। हे कंत ! तुम्हें भा मने बीसा ही देया। वताधी कौमसा हित सोचकर परस भूमि पर बिछोना बिछाया और मुझे गल से लया सुसाया फिर सुस निडा में छोड़ बिछोह किया। क्या मिलन में कोई ऐसा करता है ? यदि मैं जानती कि मुझे कपट से सुसाकर तुम स्वयं घसग हो रहे थे तो मैं किस लिये लोती और किस लिये तुम जैसे रतन को छोटी। तुमने मुझे कठ से सपाकर सुसाया, पर मन में गांठ घरे रहे। फिर भी जान बो वह बात धीत गई। घब तो मिली। क्या घब भी वह गांठ नहीं छोड़ोगे ?' नन ने कहा " हे सुम्बरी ! यह सब प्रारब्ध बध हुआ। प्रारब्ध कर्मो नहीं मिचता। जसडा भोग करना पक्ता है। जो कृष किया प्रारब्ध ने किया। उसी ने कारण के हन में कलियुग को बीघ में डसा जिससे बिछोह हुआ। घब दिन फिर लीट घाए हैं। वह कलियुग मित्र बन गया है। परन्तु तुने तन के लिये बिछोह मासा नहीं तो मैं तुम्हमें ही समाया हुआ हूँ। जय मर के लिय भी तुम्हने घसग नहीं हुआ, मूस से ठेरे ही मन में घम बत्पन्न हुआ है। तुने ही घपन मन में गांठ डाली है जिसके कारण मुझने संबंध विच्छेद कर देह से सम्बन्ध ढोड़ा है। देह मुन के लिए तून मुझ भूसा दिया है और नर बुसाकर बरन किए हुए दो को दिया है। हे बसवती तेरो देह का पति मुझी पुदय है, पर मैं तेरे हृदय का स्वामी हूँ इसलिये देह को तरह घपना बूधय भी मुझ से न कर।"

बमपंती नन का उत्तर सुनकर बहुत बिकल हुई और बोली '—हे स्वामी मैंने तुमसे सम्बन्ध नहीं तोड़ा है परन्तु सबसे उबासीम होकर तुमसे ही माता छोड़ा है। देह का मुन में कुष नहीं मिलती। घपना तन मन और प्राण सब बन्ध तुम्हीं को सपनाती हूँ। तुम्हें बुलाने के लिये ही प्राण का प्रायोजन किया। एक दिन मैं सो भोजन की पति से रय बताने की कसा बेपन तुम्हीं जानते हो। इसलिय यह सोचकर कि यदि तुम घयोप्या में ही तो रब द्वारा एक ही दिन में यहाँ पहुँचोगे। फिर भी, यदि तुमने घपने नन में ऐसा ही सम्बन्ध लिया है तो मैं पून और अग्रमा लागी भरेंगे तप मेरी देह के सपे—पृथ्वी पवन अग्नि और बरन भी घम का निवारक करेग।" बमपंती के एता कहते ही तत्क्षन अग्नि, पवन और बरन देह सहित प्रकट हुए जहाँत उनके तल की लागी बी। इसने नन को परम र्ततीय हुआ और उसने बमपंती को अंगार बनने के लिय कहा।



स्वयं भी उसने तर्पण का इमरम किया। तर्पण तत्काल प्रकट हुआ और उत्तम उसका द्विज जतारा तथा कंचुसी पटना कर जो पूर्व रूप में ब्यों का ह्यों कर दिया। तत्पश्चात् नर और इमर्यनी घातक पुर्षक मिले।

राजा शत्रुघ्न को जब नर इमर्यनी के निराश का समाधार मिला तो वह उसी समय नर के पास गए और उठते अपनी घातमता के लिये राजा मांगी। नर ने राजा शत्रुघ्न की प्रशंसा की और उनकी उदारता के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए उन्हें क्षामिहोत्र दिया सिपाई। राजा शत्रुघ्न कष्ट दिन नर क साथ प्रम पुर्षक रहकर फिर प्रयीष्मा चले गए। तत्पश्चात् नर दीप्र ही राजा भीम से बहुतसा मन और हाथी, घोड़े रूप तथा सेना लेकर कंडनपुर से उपजन आया। उसने पुष्कर को जूए में हराकर अपना राज्य वापस ल लिया और फिर इमर्यनी के साथ प्रानम्बूब कर रहे गया।

### महाभारत की कथा से घतर

महाभारत में बहुदूरक श्रद्धि और पविठिर के संसार क रूप में नर इमर्यनी की कथा नर वर्ष के अन्तर्गत प्रकटाईत प्रध्यायो (५२-७६) में बगन की गई है। उससे प्रस्तुत कथा में कई स्थलों पर घतर पाया जाता है —

धारम्भ का ती घनिकांश (इमर्यनी के स्वयंवर की चर्चा असन तक) कस्थित है। इसमें पहली बात तो यह है कि हंतों को कोई स्थान नहीं दिया गया है। महाभारत में हंत नर इमर्यनी के बीच प्रेम संबंध पटुचाने का कार्य करते हैं और तत्पश्चात् मुप्त हो जाते हैं। प्रस्तुत कथा में हंतों के स्थान पर भाटिन की योजना की गई है। भाटिन रूप में अनुभ और गायन में निपुण एवं अनुभूत है। वह नर की सभा में धारम्भ में ही प्रकट हो जाती है और पधिनी के पियम में चर्चा झिड़ते ही प्रमुख बरता का स्थान ग्रहण करती है। उसकी प्रबन्ध भाकप्रवित के आये सारे समासक निस्तेज हो जाते हैं। पधिनी के परिचय से धारम्भ कर कुंडनपुर नगर, राजा भीमसेन रानी राजमती पधिनी स्वकथा राजकुमारी इमर्यनी और इस्तिनी दक्षिणी चित्रको एवं पधिनी नामक रिजयों के विशव बर्तन द्वारा वह नर को मुग्ध करती हुई उसकी गुण बुध को उसे प्रम पथ पर प्राकट करती है। इसके पश्चात् हंतों की तरह उसका भी कोई पता नहीं चलता। इससे स्पष्ट होता है कि स्वाभाविकता जाने के लिये भाटिन द्वारा प्रस्तुत किया गया विस्तृत विवरण कवि को धमियेत था। हंतों द्वारा उनके पक्षी होने के कारण, बीसा बर्तन करना सम्भव न था एवं वह अस्वामाधिक होता। दूसरी बात यह है कि इमर्यनी को पधिनी के रूप में चित्रित किया गया है और उसकी चर्चयों में प्रमूठ बताया गया है जिसके आधार पर नर में मधिसियों के जीवित होने की कथा बनी गई है। महाभारत में ऐसा कुछ नहीं है। पक्षी इमर्यनी को अत्यन्त क्यबती बताया है मृतक मधिसियों के जीवित होने की कथा (उसमें नहीं है। तीसरा परिचय यह किया है कि नर श्रद्धि को राजधानी से बार कोस दूर नर में तपस्या करते हुए दिखाया गया है। राजा भीमसेन नहीं उनके बर्तन के हेतु जाते हैं और जानोपवेश के धनन्तर कल प्राप्त करते हैं जिसके प्रदग्ध से रानी के गर्भ से सन्तान उत्पन्न होती है। महाभारत के अनुसार

अपि राजा के ही घर पर आते हैं। चौथा परिवर्तन यह है कि दमयन्ती के रूप में नल का प्रेम सहसा उत्पन्न होता है। यह प्रेम का माहात्म्य दिखाने के लिये किया गया है।

कल्पिताशा के पञ्चास मूल कथा में प्रमुख रूप से निम्नलिखित अन्तर पाए जाते हैं—

१—इन्द्र के साथ वरुण कुंजर धीर धम कुंडनपुर आते हैं। महाभारत में कुंजर के स्वामि पर अग्नि का उल्लास है। इसी तरह इनके द्वारा नल को बरवान देने में भी हेर फेर है।

२—देवताओं के दूत के रूप में दमयन्ती के भवन में पहुँचने पर नल को दमयन्ती ने पहचान लिया जिससे उसके प्रेम की महत्ता प्रकट होती है। महाभारत में ऐसा नहीं है। वहाँ नल अपना परिचय देता है।

३—दमयन्ती नल का रूप बारम्बार लिए हुए देवताओं को पहचानने में असमर्थ होने पर अर्चित प्रभु की सरभ में जाती है। महाभारत में दमयन्ती देवताओं से ही अपना वास्तविक रूप बारम्बार करने के लिये प्रार्थना करती है।

४—बनजारों के स्वामी के सामने बंधने पर दमयन्ती उसके साथ बँधेरी चमती है। महाभारत में दमयन्ती स्वतः ही बनजारों के स्वामी के साथ बँधेरी चमती है।

५—नल का राजा अतुषर्ण को लेकर कुंडनपुर पहुँचाने पर दमयन्ती ने उसका समाचार जानने के लिये बर भेजा धीर उसकी परीला के निमित्त उसी घर के हाथ फूल जमराहत भड़ा धीर भोजन की सामग्री भेजी। महाभारत में कतिनो नामक दूती नल का समाचार लाने के लिये भेजी जाती है। उसमें फूल, भड़ा धीर भोजन सामग्री भजने का उल्लेख नहीं है।

६—नल बर द्वारा बुलाए जान पर जब दमयन्ती के सामने लड़ा हुआ तो रोने लगा। उसके प्राणु प्राँसों में लाल धीर गिरते समय सखेद दिखाई देते हैं। महाभारत में ऐसा कुछ नहीं दिखा है।

७—नल की वास्तविक रूप में करण के लिये कर्कोटक सर्प उपस्थित होता है धीर उसके शरीर से विष का घोषण करता है तथा उसे भी हुई कंधेसी पहनाया है। महाभारत में कर्कोटक के घाने का उल्लेख नहीं है केवल कंधुनी पहन कर ही नल अपने प्रकृत रूप को प्राप्त करता है।

इनके अतिरिक्त छोटे-छोटे अन्तर बहुत हैं पर वे नगण्य हैं। प्राचीन (एतिहासिक या बौरासिक) कथाओं को अपनी कल्पनानुसार काव्य रूप देने में कवि लोग स्वतंत्र हैं इसमें संदेह नहीं। परंतु एक स्थल पर कवि की उद्भावना चिरय है। दमयन्ती की जंगलियों में अमृत होने की कल्पना बहुत अर्चित है। उस अमृत की स्वर्ण नार दमयन्ती ने न जाने कितनी बार चपा होना। इन दृष्टि से उन्हें अमर ही जाना चाहिए था। इसके अतिरिक्त मरे हुए बनजारों के समूह को भी जीवित किया जा सकता था। इन बातों

को दृष्टि में एतन्त्र कवि को कुछ न कुछ सार्मजस्य बढाता चाहिए या । कहने का तात्पर्य यह है कि यह कल्पना अभ्यासि बोध से प्रसिद्ध है ।

### सूफी विचारधारा

प्रस्तुत काव्य में सूफी विचारों का अनुकरण बड़े तरह से किया गया है । एक ही रचना प्रकार को लेकर और दूसरा प्रेम साधना को लेकर । यहाँ इनका क्रम से उल्लेख किया जाता है:—

#### रचना प्रकार

१—सूफी प्रेमसाधनाओं की तरह प्रस्तुत काव्य भी अरबी में है । इसकी रचना भी बोहो चीपाई घरों में हुई है और इसमें भी अभ्यासों या सगों का उपयोग नहीं किया गया है ।

२—सूफी सोम कबा के पहले परमात्मा की स्तुति समसामयिक शासक की प्रशंसा पैम्बर की परना और गुरु (पोर) का वर्णन करते हैं । इसमें भी ऐसा ही किया गया है । समसामयिक शासक (साहजहाँ) और गुरु का वर्णन पीछे किया जा चुका है । परमात्मा की स्तुति बेदांत के आधार पर है । उसमें बेदांत पर स्थित अम्य दार्शनिक विचारों बिशिष्याईत मैदाने और अइत का भी उल्लेख मिलता है:—

बो कोड कहै 'अंत' हौं ताको । एक रूप भेरो अरब बाको ॥

तिहि अमनो अंसी के जानो । बिरमल अमल प्राप हीं मानी ॥

—बिशिष्याईत

बो कोड पीठ कहै हौं सोई । मो अरब बार्न मेर न कोई ॥

तापर रीसि बहुत मुज मानै । अंतर भेदि अम हीं सानै ॥

× × ×

जिअ समुझी तो एकी सोई । साहब सेबक भेद न कोई ॥

अइ बेतन अतर पुनि नाहीं । सबे समाइ एही ता माहीं ॥

ज्यों अल माहि मुब बुदामयेळ । ई अल नाय और होई एएळ ॥ प्राबि

—अइत [बोहा-७]

साहब (मोहम्मद साहब) बर्न का भी उल्लेख मिलता है —

जो ताकी साहब के मानी । ताहि बही सेबक के जानै ॥

[बोहा—७]

पैम्बर (मोहम्मद साहब) की बंदना भी सूफी रचनाओं में रहती है । परमात्मा में मोहम्मद साहब को परमात्मा द्वारा निर्मल ज्योति के रूप में उत्पन्न किया गया बताया है । प्रस्तुत काव्य में भी इसका अनुगमन करते हुए मोहम्मद साहब का ही नहीं, पर निर्मल ज्योति का बलन है । इसका 'नीत' शब्द से भी उल्लेख है जिसके गुण का कवि कथन करता है—

ध्रुव 'ध्रुव' कथन 'भीत' के करी । जिन्हें के प्रेम प्रताप निस्तरी ॥  
 बबटे प्रपट मोहि निस्तारे । उन एते केरि निस्तारी ॥  
 प्रथम 'निरमल बहु जोति' उपाई । तिन्हें के प्रीत सब तिष्टि बपाई ॥  
 रसन एक धस्तुति बहु भेषा । तिली सो की नाहिन कछु सजा ॥  
 जाके प्रेम हिय यह महमति । ताके प्रीत प्रथम रंगराते ॥  
 ही यत्नहार मोह के भायो । जिन्हें प्रताप प्रभु बरसन पायो ॥  
 धी उम्ह प्रेम बिन मुक्ति न होई । बिन भूली भटकी मत कोई ॥

[बोहा—१२

परंतु इस ज्योति को श्रुति में उल्लिखित ज्योति समझना चाहिए—

'तसेखोऽसुमत'

नंबदास ने धी 'परमज्योति' के रूप में इस ज्योति का धर्मन किया है—

प्रथमहि प्रकट प्रेम नय 'परम जोति' जो प्राहि ।

रूप उपायन 'रूप निधि' निति कहत हे प्राहि ॥

—रूप संवरी

श्लो० तुमलीबाल की ने भगवान् राम को 'प्रकाश रूप' धीर प्रकाशनिधि' कहा है जो इस 'निर्मल ज्योति' से भिन्न नहीं—

सहज 'प्रकाश रूप' भयवाना । नहि तहुँ पुनि बिद्यान बिहाना ॥

×

×

×

पुरुष प्रसिद्ध 'प्रकाश निधि,' प्रकट परावर नाथ ।

रघुकुस मनि मम स्वामि सोई, कहि सिबे नायकमाथ ॥

—दानकांड

कवि कहता है, धी ज्योति प्रेम का विषय है धीर इसके प्रेम के बिना श्रुति संभव नहीं । जिसके हृदय को यह ज्योति प्रेम में भतबाला बनाती है या बनाना चाहती है वह बहुने प्रीति में रंगता है । बच्चों की प्रेमा भक्ति की तरह ही शुद्धि का यह प्रेम है । नंबदास 'रंजीने प्रेम' द्वारा ही भगवान् राम का तात्प्रिय प्राप्त करते हैं—

बदधि धरम से धरम अति नियम कहत हे प्राहि ।

सबधि 'रंजीने प्रेम' तेनिपट निबड प्रभु प्राहि ॥

—रूप संवरी

तुमली भवनों के प्रेम के कारण ध्रुव (धिरध्रुव) का सध्रुव ('सहज प्रकाश रूप भगवान् राम) होना बतलाते हैं—

ध्रुव धरम धरम धरम जोई । भगत प्रेम बस सध्रुव सो हीई ॥

बही बालकांड

कहने का तात्पर्य यह है कि यह निर्मल ज्योति परमापत में धर्मित मोहम्मद ताहिर की ज्योति से भिन्न है । ही इतना धरम है कि इसका ध्यायमान मोहम्मद ताहिर

की बंधना के रूप पर हुआ है। इसका कारण सूक्तियों बिसेवत परमात्म के रचना प्रकार का अनुकरण करना है। परमात्म में मोहम्मद साहब की बंधना इस प्रकार है:—

कीर्तित पुस्य एक निरमरा । नाउं मुहम्मद पुनिउं करा ॥  
 प्रथम बोति बिधि तेहि के साबो । मो तेहि प्रीति सिखि उपराओ ॥  
 बीपक लेति जमत कहूं बीगहा । मा निरमल जग मारग बीगहा ॥  
 ओ न होत बात पुस्य उपराओ । सुभिन परत पंच धंधियारा ॥  
 दोसरहें ठाँव बई धोई लिपे । भए घरमी जो पाइत तिजे ॥  
 जयत बसोठ बई धोई कीगुं । बीज जग तरा नाउं भोहि भीहू ॥  
 बई नहि लीगुं जरम सी नाउं । ताकहूं कीगुं नरक महें ठाउं ॥  
 गुम अबयुम बिधि पूछत होइहि लेख धउ बोध ।  
 भोगुं बिनउब धामे होइ करब जगत कर मोब ॥१॥११॥

### प्रेमसाधना

सूक्तियों का मत अनन्य प्रेम द्वारा परमात्मा को प्राप्त करना है। समस्त संसार को न परमात्मामय देखते हैं। उनके इस सिद्धांत का आधार ब्रह्म मूलक सर्वात्मवाद है जिसे ध्याने न तो संशयिभाव ही टिकता है और न संशय परंपराएँ ही रहती हैं। लोक सत्त्वा के लिये भी कोई स्थान नहीं रहता। सुखी प्रेमाश्रयणक काव्यों में यह ब्रह्म मूलक प्रेम भावना प्रप्रकृत रूप में रहती है। प्रेमाश्रयणकों से भिन्न जावात्मक दैवी में लिखे गए सूक्तों काव्यों में एकांतिक प्रेम की उदात्त व्यंजना पार्थ जाती है। हिंदी में भिरवा मुहम्मद खान की 'प्रेमलीला' इस विषय की सुंदर कृति है। उसमें बसुरी द्वारा श्रियतम (परमात्मा) का बिरह जगाया गया है। बसुरी बनबारी से बिछड़ कर बिरह दुःख में रो उठती है। इसका रोना सुनते ही चराचर सृष्टि में कसबली जन्म जाती है। सब मोह निद्रा से जगते हैं और सबको श्रियतम की स्मृति होती है। कलस्वरूप से सब भी श्रिय के बिरह में रो उठते हैं:—

बसुरिया बिछुरन भइ भारी । बिछुरन दुख बहु रोइ पुकारी ॥  
 जब बहु रोइ बिछुर बनबारी । बुनि सुन रोये पुस्य अब भारी ॥  
 जल सौं बिछरि भछरिया रोई । मेरो निमन बहुरि काह होई ॥  
 कैसे निजहूँ बीजल मेरो । रीत परे संग तजौं न लेटो ॥  
 निकसि तीर सौं बाहर पड़ी । जल जलटी जल सूची पड़ी ॥  
 तबबर सौं जिनि पाती पड़ी । पीब की मारी इत उत पड़ी ॥  
 बिछु बिबोप किनि जान कोई । जापर बीते जाने लोई ॥

धयने प्रीतम जल से निनि बिछरै जनि कोइ ।

बिछुरन दुख तो जानहि जो कोइ बिछरा होइ ॥

बशी की ध्वनि का संबंध नाद से है। नाद को हिंदू शास्त्रों में ब्रह्म (ऌकार) का स्वरूप माना है। प्रज्वनाद (ऌकार) से प्रनाहृत (सूक्ष्मनाद) और प्राहृत (स्पृशनाद) उत्पन्न हुए। प्राहृत नाद से दो प्रकार के नाद निकले—बीज जम्ब (शब्द) और बड़जम्ब (ध्वनि) तथा इन प्रत्येक के प्रमबुर और मबुर करके दो दो भेद हैं। इस प्रकार बीज की तरह बंशी ध्वनि भी बनबारी (अम्ब ब्रह्म, ऌकार) से बिछुड़ी हुई है, ऐसा भी समझना चाहिये। प्रत्यभिज्ञा धरने पर वह रो रही है। कहते हैं गौपियों के प्रति धर्मि मान दिखाने के कारण श्री कृष्ण श्री बशी को भी उनसे प्रसंग हीमा पड़ा। स्वामी हित हरिबंश जी को श्रीकृष्ण की बंशी का प्रबतार बताया जाता है। ऐसे ही और भी कई बशी के प्रबतार कहे जाते हैं। सूफी लोग धरने 'प्रेम संघीत' की भी बांसुरी से उपमा देते हैं:—

किर धनुराय 'बांसुरी' बाजी । सं धमिभाज स्वास्त धपरामी ॥

—धनुराय बांसुरी

वक्त्रव भक्ति साहित्य में श्रीकृष्ण की बंशी की प्रसिद्धि तो है ही, सतों के पदबद्ध साधन किया में भी इसका जस्सेल मिलता है। परंतु वहाँ काण्हा के द्वारा बजने के कारण यह मन की 'मूपान' बनाकर निहास कर देती है। त्रिकुटी से कुछ अपर की सामना किया में प्रबुल होते ही बंशी की ध्वनि सुनाई देने लगती है—

सोबी सोबी मनुष्या रहल मुबन्नाइ । एहि प्रबसर काण्हा मुरली बजाइ ॥

मुरली को पुनि सुनी मन भैसा पुसिप्राल । रहली भीसुक बनू भैसो मूपपास ॥

बुनो सुनी मनुष्या उपर धली मेस । तहवा बेयल एक प्रबबुर वेस ॥

बीना रही सती ताहा होता जजिधार । रोमी भीमी मोतीधा बरीसु जसवार ॥\*

—महराई गोसाईं बरनीवास

धस्तु प्रस्तुत काव्य में भी कवि ने बहुत से स्वर्णों पर धरना (बास्तबिक) धर्म दिपाया है जो सब किसी से नहीं पाया जा सकता। बहुत से लोग समुद्र को बहाजों द्वारा पार करते हैं परंतु मोती जोजने बाल समुद्र में ही बंसेते हैं—

बहुत ठौर मिज धरय बुराबा । सब कण्ठ पे जाइ म पाबा ॥

बहुत लोग पोहित पड़े बधि पर ध्राब बाहिं ।

मुकता पाब मरजिया धसि जोजे ता मोहि ॥२७॥

इस काव्य में नल्लवमयंती के प्रेम के अतिरिक्त ज्ञान और ध्यबहार धर्म का प्रति पावन है। प्रथम के धनुसार नल्ल के सिये वमयंती और वमयंती के सिये नल्ल प्रेमस्वरूप परमात्मा के रूप में है। दोनों के हृदय में जब एक दूसरे के प्रति प्रेम प्रकट होता है तब दोनों मिलने के सिये ध्याकुल होते हैं; परंतु लोक की धनेक जठिनाइयों

पाव टिप्पणी—

\* अठारहवां श्लोक विवरण (का० ना० प्र० ल०), संख्या ११४ ख ।

के कारण सरलता से मिल नहीं पाते। इसलिये वे विरहाग्नि में तपने लगते हैं। यही विरहाग्नि उनकी साधना स्वरूप है। उनकी इच्छियाँ अपने-अपने विषयों से विरत ही जाती हैं। उन्हें न तो नींद ही आती है और न भोजन प्यास ही लगती है। राग रंज से मन हट जाता है और विरहियों की तरह संसार से काँटि जाता नहीं रह जाता। उनकी चित्त-वृत्तियाँ एक दूसरे में एकाग्र हो जाती हैं। लक्ष्म (सांख्यिक गुण प्रदान) प्रेम में उनकी इस एकाग्र (ध्यान धारणा और सामासिक युक्त) स्थिति का सादृश्य गीता के निम्नलिखित श्लोक के संघर्षों में मिलता है —

या निद्रा सब भूतानां तस्यां जागति सवमी ।

यस्यां जाग्रति भूतानि ता निद्रा पश्यतो मून ॥

इस प्रकार विरह के तीव्र भग के कारण प्रलाप की स्थिति में दोनों अपने-अपने प्रेम को एक दूसरे के प्रति जिस प्रकार ध्वस्त करते हैं उससे प्रेम की सीकितता असीकितता की ओर जाती हुई लजित होती है। यही असीकितता प्रस्तुत कवि का गुण्य है। इसमें प्रेम की असीकितता के साथ-साथ रहस्यमय सत्ता के प्रति भी इवित रहता है। कुछ उदाहरण दिए जाते हैं —

### मल का विरह

[प्रम का असीकित वजन और परमात्मा की ओर सकेत]

हूँ जागो तोहि जागि बसावत । तोहि सुख खँन मोरि कित आवत ॥  
 हूँ मैं भबर भरीं बँरागी । तू सरोज सुख सर अनुरापी ॥  
 हूँ जलक पिड पिड रत मोरे । तू स्वाती भाव्य नहि तोरे ॥  
 मो मन बिल बकोर बिन देखे । तू जो खँद तोर बहि सेख ॥  
 मो पति क्यों मछरी बिन पानी । तू अपने पानी अभिमानी ॥

[बोहा—११२]

× × ×  
 मो तौ बिनती पै बन आव । होइ सो बहूँ जो पिड को भाव ॥

× × ×  
 श्री पुनि यही बात कछु नाहीं । सब कम नीब देइ तो माहीं ॥  
 जानों कृपा दृष्टि कर हेरति । ताही के कुछ बाहूँ विडेरति ॥

[बोहा—१२३]

× × ×  
 वेम सजुइ अयाहूँ अपना । तहाँ परे को काउन हारा ॥  
 नही समाइ जाइ इक धोरा । का सिख बूँद करे तिहि जोरा ॥

× × ×  
 वेम पहार अकास जबाहीं । सिख बोला ना अवर ताहीं ॥

[बोहा—१२४]

प्रम साधना-पद्य

सो तो सुभक्त तुमहि बुहेसा । दिनहुँ न मयो वेम कर मेला ॥  
 उपज न हिये बिरहु बेरागु । मयो न भगवहुँ के पिछतागु ॥  
 तिन यह पंच सगम करि जाना । जितहु कर वेम पंच मन भाना ॥  
 हीं तित सीस धरल कर धाऊँ । पैग पैग बल बाल बडाऊँ ॥  
 बसौ न बीष रैन दिन बलूँ । ती लगि जौ लवि मीताहि मिसूँ ॥  
 गयो ज्यो बसूँ उरव त्यों होई । वेम पंच पर बलं न कोई ॥  
 जो तन हार रहै तमि जाऊँ । मन पग पिउ मय सौं न डिगाऊँ ॥

वेम पंच मोहि धति सुयम, मूय प्यास डर नाहि ।  
 कसक करेन काटही, नीर पु मनन माहि ॥१२६॥

× × ×

सोसै एक घोर कै डार । तब इहुँ घोर धाइ पय धारे ॥  
 वेम खेत महुँ मापे बाजी । सो तैमै को इह पर राजी ॥  
 यह बैयो पुनि धररज रीता । जो हारै जानहु तिन बीता ॥

वेम समुद्र धपार धति माहि घोर नाहि घोर ।  
 जो बूझे सोई तिरं यहै वेम दधि घोर ॥१२७॥

सांसारिय भोगों से बिरक्ति

होँ धत राज न मन म नाऊँ । जितहुँ सुख उरभिभीत बिसराऊँ ॥  
 जो जित माँझ मिले पिउ सोई । तौ यह राज कुत्तल वं होई ॥  
 माहित वेम धविन तन जारौ । भूँ राज जनम का हारौ ॥

हार जनम राजा धने, गए उधाई नितान ।  
 त जोते कई परे जूझ वेम मैदान ॥१२८॥

[योनि सज्जा की उपेक्षा]

पुनि तुम यह सिधदा मूय घानी । बल बैस महुँ हास कहानी ॥

× × ×

डरौ न हास कसंज सौं, जो वेम रहै मन माहि ।  
 इहि घाँसु परबाह जल बित कलक ठहराहि ॥१२९॥

पुनि तुम यह योने तिय जानी । राजरु महुँ होइ है धपनानी ॥

× × ×

भूँ मान ए मान सब काया के सनमान ।  
 मान कियो भं मान सौं रीझ वेम धपनान ॥१३०॥

× × ×



## [प्रिय घोष (मिसन) की बट्टिनाई]

बड़ी रजाई ऋष बुधारा । सब कर तहाँ कहीं वेंतारा ॥  
 करहि द्वारपासक बट्टिनाई । घायसु मिला पवन न दुराई ॥  
 के सो जाहि को ग्याता होई । जिहि श्री रात्रिहि भेद न होई ॥  
 म्यातहि जस घटक कपु नाही । को परब घपने घर जाही ॥  
 के सो जाहि जिहि घाप युताबे । वेम घसीठ होइ पधुंवाबे ॥  
 को जघपि पधुंघ उतकोई । ती घावन पुनि उतटि न होई ॥  
 हेरि रूप यह जाइ हिराई । तिहि मिस घापा बेद घघाई ॥  
 बहै कठिन सोघ विठ केरा । कोउ न फिरा जिनहि मुक होरा ॥  
 काहि पठार्ज पीउ यह को बो जिउ को होइ ।  
 एक पीउ के बेइ विनु पीउ न पाबे कोइ ॥१३५॥

## [ध्यान की एकप्रता घोर प्रदुष्ट स्वरूप दर्शन]

सांभो प्रीत न रहे बुरागो । जिन बातों साई तिन जानी ॥  
 तन यह चिस्टि माव नौ ग्यारा । सो एकइ को जानन हारा ॥  
 श्री पुनि घपन प्रीत अब हीई । तब तिनहुं महं भेद न कोई ॥  
 अंतर तौनी बेइ रिखाई । जोसी में तू बीच बचाई ॥  
 तनमे भए न अंतर कोई । तन श्री मान सा एक होई ॥  
 तन सब साहि अतन महं अतन सबे तन माहं ।  
 बहै अतन तम में भयो अतन दुतिय पुनि माहं ॥१३६॥

ध्यान को एकप्रता सिद्ध हो गई तो प्रेम साधना भी सिद्ध होगई । फलस्वरूप प्रियतम का बर्जन या तो उसी समय हुआ सनभिए और यदि नहीं तो उसमें नाम मात्र का विभंज समझना चाहिए । जब प्रति प्रबल अवस्था' हो जाती है तो 'बरखा होने में कोई संदेह नहीं रह जाता'—

जब प्रति प्रबल अवस्था हीई । तब बरखा संदेह न कोई ॥  
 कतु को बुझो को वेम कुक जिन मुमि पिय ना सेइ ।  
 बँब तिये श्रीबद निकड पीर बिना कहूँ बेई ॥१३७॥

इसीलिये मल की प्रेम साधना अंतिम सीमा तक पहुंच गई तो उसे स्वयंवर में जाने का निर्णय मिला ।

## बमयंसी का बिरह

## [प्रेम साधना की गंभीरता]

सुरत ध्यान पिउ सौं अदुरागी । बाते करे बिरह बैराभी ॥  
 प्रीतम सुरत करसि क्यों न मोरी । सब अब जाइ गई ही तोरी ॥  
 अब लनि बिरह जान में सहे । रोमहि रोम पीठि तन रहे ॥  
 अब ताने तो घाव नै तापे । बिउ अकुलाइ रहे तन स्याने ॥

जबकि बीज तन त्यागि क, बेग निरै तोहि जाइ ॥

वै मन जाब कि तो घाएत बीज तो पाहि समाइ ॥१२५॥

विज विज तू तो बिन कम नाहीं । मोहि विज को संसा कछु माहीं ॥

यह जब सब तो सों मिल रहा । प्रबहुं प्रनमिस जाइ न कहा ॥

निज विज घाम घतम तन तोरा । यह मन भूल कहै विज मोरा ॥

तिन कारण बिनती हीं करीं । हा हा पाइ सीछ मुई परीं ॥

तम तोहि लागि बहुत दुख पाया । कम रंग रस सबहिं पराया ॥

×

×

×

बिरह रोग सिर बहुत बढ़ाया । ताहु वै नित कर सबाया ॥

प्रीतम विज तू तन प्रनय, सबा रहै दुख पात ।

बिरह प्राप्त बुल तन सहै सोई जाइ निरास ॥१२६॥

[परमात्मा की घोर संवेत]

पंच सखु हों एकली भूमत हों इन माह ।

पाइ परे विज तोहि भखू, जो राखी यहि बाह ॥१२७॥

हों प्रनाम कछ होय न मोसों । जो कज होइ नाय सब तोसों ॥

मोसों यहै वेम दुख भरना । नाह तिहारो सुमिरन करना ॥

यह बल नाहि कि तुम यहै प्राज । मिलि के तन की तपत बुझाज ॥

तुमही प्रपट होहु जो प्राई । प्रापा प्रात बेहु बिकराई ॥

सबही विज बरसन हीं पाज । इन सखुन सों प्राप छुझाज ॥

महाराम तुमसों सब होई । तुम कहै बरजनहार न कोई ॥

तुम अपने सखुन क बरता । सब करि सके प्राप जो करता ॥

जो तुम प्राइ करहु बट फेरा । कहो तुम्हें कौने धीं घेरा ॥

बोहा—१२२

×

×

×

धौ इहि में कछ बोस न मोरा । जो कछु करे सो बहु बित मोरा ॥

विन विन जाब प्राइ पर साव । बिस्टि प्रपोबर बल बसाव ॥

बातक बहै प्रनुक पुनि सोई । प्रापहि बाग घोर नाहि कोई ॥

प्रापहि बेकि प्राप जर करै । प्रापहि तहां सोन होइ परै ॥

बोहा—१२९

[संसार घोर लोक सज्जा का त्याग]

प्रीतम मुरत करसि क्यों न मोरी । सब जय छाड़ि भई हों लोरी ॥

बोहा—१३५

×

×

×

प्रीतम काज साज म सोई । रोइ रोइ प्रभुवन सब सोई ॥

×

×

×

×

जो विज लागि साज वै प्राई । जाहु निमज मोरे प्रभुताई ॥

[ बोहा—१३९

मन व्रमयंती का यह साधनात्मक प्रेम पत्नीव्रत और पातिव्रत्य धर्म के रूप में सामने आता है। वास्तव में ऐसे ही स्त्री पुद्यों का प्रेम लोक रंजक के साथ साथ लोक कल्याणकारक होता है। ये एक दूसरे को परमात्मात्मय ही देखते हैं। इनकी रहनी पहनी शुद्ध धार्मिकता नियम हुए होती है। इनमें सद्बुद्धियों का पूर्ण विकास पाया जाता है जिनसे इन्हें धर्मवत्त्व प्राप्त होता है। अपने धर्मविषय मपर व्यवहार से ये सब को मोह लेते हैं। भीष बंधुओं के प्रति सबम रहते हैं। संसार का सारा धर्मव्य प्राप्त होने पर भी ये विकार प्रसिद्ध नहीं होते। ये लोक मर्यादा के संस्थापक और पालक होते हैं। समाज इनको धनुकरम करता है। नरनारी इनसे धनप्राणित होकर अपने अपने धर्म का निर्माण करते हैं। इस प्रकार संसार इनसे कृत्य कृत्य होता है। ऐसे स्त्री पुरुष बड़े भाग्यधारी और उच्च संस्कार धरत होते हैं। ये सर्वथ और सधम सुभम नहीं होते। कभी कभी ही संसार में जन्म लेते हैं। परंतु जब जन्म लेते हैं तो संसार इनकी क्पाति धुन इन्हें देखने के लिये जालायित ही उठता है —

आपने जगत मका मुनि सोभा । कौतुक कहुं सब कर पित सोभा ॥

× × × ×

कोऊ धरं मिसन मन धाता । कोऊ बैसा बही तमासा ॥

[ बोझा—१७ ]

सब अपनी अपनी माननाओं के धनुष्य इनके रूप 'पानिप' के प्यासे हो जाते हैं। इस दृष्टि से इनके रूप की क्पाति में धनीकिकता धा जाती है। इनके रूप के सामने संसार के रूप का मान नहीं होता। सुरज और चांद लज्जित हो धाते हैं। ब्रह्म की तरह इनका रूप धत धत में क्पात हो जाता है। नारद ने व्रमयंती के रूप के संबंध में ईश से ऐसा ही कहा:—

चांद सुरज तिहि देखि लजाहो । रहा न रूप मान जग माहीं ॥

ब्रह्मरूप तिहि रूप अनु धत धत रहा समाइ ।

जिन हेरा तिहि हरि छवि, धाया हीणु हिराइ ॥१८४॥

× × × ×

बहुत देव कुंडनपुर गए । तिहि 'पानिप' के प्यासे गए ॥

नारद जैसे ब्रह्मज्ञानी इस रूप में ब्रह्म रूप का ही वर्धन करते हैं। मने लोक पहले तो काम से मोहित होते हैं, पर जब धर्म से धर्म (स्त्री पुरुष का धरत बोझा) मिल जाता है तो प्रसन्न होते हैं। इंधाधिक वैभता और राजा ऋतुपर्ल के विषय में ऐसी ही बात है। इंधाधिक वैभता व्रमयंती की बुद्धि के धाने धक गए —

श्री पुनि इंधाधिक धे बैरु । इहि धरिष धरिष नए तरु ॥

इन धरिता जैसे मन जाना । कौने जिह्नु पुरत पहिचाना ॥

पुनि प्रसन्न मन छुं सब बीने । प्रंत होय जो जिह्नु कै सोन ॥

जनी भई नारी नल पाया । विषया 'धरतिहि धरन' मिलाया ॥

[ बोझा—२०६ ]

राजा ऋतुपथ नम से कामा माँपते हुए कहते हैं —

पुनि ऋतुपरन मरम इह पाबा । तिनहि कास नम यह उठि पाबा ॥  
 बोला बहुत बूक भइ मोसों । मोक्षी टहस यही में तोसों ॥  
 में तेरा सब भइ न जाना । अब सति मरम बहुत पछिताना ॥  
 तू राजा मोरे घर नाही । में अजान तोहि जाना नाही ॥  
 [ बोहा—३६०

बुज्जन सोम घट में निराश होते हैं —

बाला इइ मल कर्ह जैमासा । जसी घोर सोमन उर छासा ॥  
 अपने उर सो छात उठारा । सोई बुज्जन जन हिय डारा ॥  
 दामिनि कीष इमंती गई । सोमन घटा रंभ्र हिय भई ॥  
 सपरी समा मुर अनु भागो । बिबय भय बिरही बेरागी ॥  
 बातक ज्यों ब्रिय हुतो जो घासा । मिठी सो पिक सौं भई निरासा ॥  
 [ बोहा—२०६

राम चरित मानस में इस जगद्भावना का बहुत ही उत्तम वर्णन किया गया है । विदुषों ने पुद्गोलन राम को बिराटमय देखा, योगियों ने परम तत्त्वमय, पुरवासियों ने लोचनमुक्कदायक घोर बुज्जनों ने भयानक —

जिन्ह क रही भावना बँधी । प्रभु मूरति तिन्ह देखी लसी ॥

× × × ×

बिदुषग्ह प्रभु बिराट मय बीसा । बहु मुख कर पग सोचन सीसा ॥

× × × ×

योगिन्ह परम तत्त्वमय भासा । साँत मुट सम सहज प्रकासा ॥

हरि भगताग्ह देखे बोट भाता । इष्ट बैच इव सब मुख दाता ॥

× × × ×

पुरवासिग्ह देखे बोज भाई । नर मूयन लोचन मुखदाई ॥

× × × ×

बरे कुटिल नृप प्रभहि तिहारी । मनहुँ भयानक मूरति भारी ॥

× × × ×

सीता जो की तो कुटिल राजा राम से बस पूबक दीम सजा जाहते थ —

तब तिय देखि भूप अमिताय । कर कपूत मुइ मन माये ॥

× × × ×

सहु छड़ाइ सीम कह कोऊ । परि बाँधहु नृप बातक बोऊ ॥

तात्पर्य यह है कि प्रेम साधना में तपकर ऐसे स्त्री पुरुषों में अतीविक्रता घाबराती है और वे जीवन की सर्वोच्च भूमिका पर स्थित हो जाने हैं । वही उन्हें कोई परामृत नहीं कर सकता । यदि परामृत बच जन पर विपत्ति भी घाती है तो अंत में फिर अथ प्राप्त करते

हू । इस प्रकार उनका प्रेम प्रसर ही जाता है । प्रेम का तत्व यही है । इन्हीं से 'प्रीति रस' होता है । मर्यादा पुत्रवत्सल राम ने हनुमान को जानकी के लिये जो संदेश दिया था उसमें इसी 'प्रीतिरस' का वर्णन होता है—

कहेह राम वियोग तब सीता । मो कहु सकल भए बिपरीता ॥  
मबतब कियलय मनहु कृतानु । काल निता सम भिदि तसि मानु ॥  
कुबलय विपिन मुंत बन हरिसा । बारिब तपत तैल बनु बरिसा ॥  
बे हित रहे करत तेइ पीरा । उरन स्वास सम बिबिध समीरा ॥  
कहेहू तें कछ बुल यहि हीई । काहि कही यह जान न कोई ॥  
'तत्त्व प्रेम कर मम प्रब तोरा । जानत प्रिया एकु मनु मोरा ॥  
सो मन सबा रहत तो पाहीं । जानु 'प्रीति रसु' एतनहि पाहीं ॥

इस प्रेम संदेश ने अपना प्रभाव इस प्रकार प्रकट किया कि जहाँ जानकी पाकर से बनने की तैयारी कर रही थी वहाँ इसल धनकी सारी सुपबुध को उन्हें प्रेम से मान कर दिया—

प्रभु संदेशु मुनत बंदेशी । मगन प्रेम तन मुपि महि तैही ॥

कमलः ब मृत्यु से बच गई श्रीर मिलन होने तक रावण के प्रणयित शरणाचारों को सहन करती हुई भी निडर और अक्षिप बनी रही । रावण उन्हें मारना चाहता था, पर मार नहीं सका ।

अस्तु यही कारण है कि लोक ने द्विज-पार्वती, राम सीता सावित्री सत्यवान श्रीर नलरामयंती के प्रेम को प्रार्थन रूप में प्रणयामा । ये महान् विभूतियाँ लोक मर्यादा की रसक श्रीर लोक बीजन की विकसित करने वाली हुई । गृहस्थ धर्म (प्रभूति मार्ग) इन्हीं के मार्ग पर चलने से 'प्रीति रस' पुस्त होता है ।

गुप्तार्थ के संबंध में यह भी उल्लेखनीय है कि यह जितना पुर्बादि (कृष्णार्थ से लेकर इत्यंती के स्वयंवर की अर्था यमने तक) में पाया जाता है उतना उत्तरार्द्ध में नहीं उत्तरार्द्ध में कहानी अधिकतर प्रकृत रूप में चलती है । इसका कारण यह है कि कवि पुर्बादि में प्रेम और ज्ञान का प्रतिपादन करना चाहता है श्रीर उत्तरार्द्ध में लोकव्यवहार का । इसका संकेत राजा भीमसेन के प्रति ब्रह्म ऋषि के उपदेश में मिलता है जिसमें ऋषि राजा को पहले परमात्मा श्रीर आत्मा के ज्ञान का उपदेश करते हैं श्रीर उत्तरार्द्ध व्यवहार धर्म काः—

#### परमात्मोपदेश

विद कहा राजा मुन मोषों । निज यह मरम कहीं हों तोषों ॥  
जो मुनि समुक्ति बात उर चारोसि । अयम वस्तु कहु सुयम निहारोसि ॥  
छाई एक यह सब ठाऊ । मुन ताके तोहि बिगु सुनाऊ ॥  
स्विर निर्वृष्य अतन अमेपा । अरम बिदि सों जाइ न बैजा ॥  
मन न बड सहज परकासा । क्यों देखति सब ठाव प्रकासा ॥  
अब श्रीपद अंतर कछु नाहीं । तिमर सनाइ प्या सब माहीं ॥

बसो की ध्वनि का संबंध नाद से है। नाद को हिंदू शास्त्रों में ब्रह्म (ऽकार) का स्वस्व माना है। प्रज्वलनाद (ऽकार) से घनाह्वन (मुष्मनाद) और घाह्व (स्पृशनाद) उत्पन्न हुए। घाह्व नाद से दो प्रकार के नाद निकले—जीव ज्ञप्य (घंघ्र) और अजज्ञप्य (ध्वनि) तथा इन प्रत्येक के समभूर और मभूर करके दो दो भद्र हैं। इस प्रकार जीव की तरह बसो ध्वनि भी बनबायी (शास्त्र ब्रह्म, ऽकार) से बिछुड़ी हुई है ऐना भी समभना थाहि। प्रत्यभिज्ञा जपन पर बह रो रही है। कहते हैं योपियों के प्रति ध्वनि मान दिखाने के कारण भी कृष्ण श्री बसो को भी उनसे प्रसप होना पड़ा। स्वामी हित हरिबंश जी को श्रीकृष्ण की बसो का प्रवतार बताया जाता है। ऐसे ही और भी कई बसो के प्रवतार कहे जाते हैं। सूकी सीय प्रवने प्रेम संवीन' को भी बांसुरी से उपमा देते ह—

किर अनुराग 'बांसुरी' बासो । सं धमिताम्र स्वान्त उपराजी ॥

—अनुराग बांसुरी

बसोब मक्ति साहित्य में श्रीकृष्ण की बसो की प्रसिद्धि तो है ही सतों के पटवक सामग क्रिया में भी इसका उत्सव मिलता है। परंतु वहाँ कागहा के द्वारा बजने के कारण यह मन को 'मृपात बनाकर निहात कर देतो है। त्रिकुटी से कुछ ऊपर की सामग क्रिया में प्रवृत्त होने ही बसो की ध्वनि मुनाई देन लपनी है—

सोबी सोबी मनुष्या प्लुत मुहभाइ । एहि प्रवसर काहु मुरली बजाइ ॥

मुरली को धुनि सुनी मन मंसा पृतिमान । एहली भीछुट अनु मंली मुषपाम ॥

धुनी सुनी मनुष्या उपर बसी येत । लहवा देपत एह प्रवबूर येत ॥

बोना रबी ससो लाहा होला उजिपार । रोमी मीमी मोतीया बरोनु जनपार ॥\*

—महाराई गोमाई' धरनीरास

धनु प्रस्तुत काव्य में भी कवि ने बहुत से स्थलों पर धरना (वास्तविक) धर्म दिएगा है जो सब किसी से नहीं पाया जा सकता। बहुत से लोग समुद्र को जहाजों द्वारा पार करते हैं परंतु मोती खोजने वाले समुद्र में ही पोंते हैं—

बहुत डीर निज धरप बुटाबा । सब काहु प जाइ न पाया ॥

बहुत लोप बौहित बड़ इधि पर धाव जाहि ।

मुकता पाव मरत्रिया, पसि धाव ता माहि ॥२७॥

इस काव्य में मत्तवचनो के प्रेम के प्रतिरिक्त ज्ञान और स्वयंकार धर्म का प्रतिपादन है। प्रथम के अनुसार मत्त के तिर्ये स्वयंकी और वचनो के तिर्ये मत्त प्रेमस्वकन परकारमा के रूप में है। दोनों के रूप में सब एक दूसरे के प्रति प्रेम प्रकट होता है तब दोनों मिलने के तिर्ये व्याकुल होते हैं। परंतु लोक की धर्मक कठिनाइयों

नाद टिप्पणी—

\* महाएली कोत्र विवरण (का० ना० प्र० स०), संख्या ११४ प।

हैं। इस प्रकार उनका प्रेम प्रसर हो जाता है। प्रेम का तत्व यही है। इसी से 'प्रीति-रस' होता है। मर्यादा पुत्रपोस्तम राम ने हनमन को जानकी के निम्ने जो संकेत दिया था उसमें इसी 'प्रेमरस' का दर्शन होता है—

कहेइ राम बिबाग तब सीता । मो कहूँ सकन भए बिपरीता ॥  
मबतब किसमय मनहुँ हुआ । काम निला सम भिति सति भानु ॥  
बुबलव बिपिन कुंत बन सरिसा । बारिद तपत तैम जनु बरिसा ॥  
जे हित रहे कएत तेइ पीरा । उरए एबास सम प्रिबिप समीरा ॥  
कहेहूँ तें कछ बुब पटि हीई । काहि कहीं यह जान न काई ॥  
'तस्य प्रेम' कर मम भय तोरा । जानत प्रिया एहु मनु मोरा ॥  
सो मन सबा रहत तो पाहीं । जानु 'प्रीति रसु' एतनहि माहीं ॥

इस प्रेम संकेत ने अपना प्रभाव इस प्रकार प्रकट किया कि जहाँ जानकी पावक में जानने की तैयारी कर रही थी वहाँ इसने उनकी सारी सुषुप्त्य को उगहें प्रेम में जग कर दिया—

प्रभु संकेतु मुनत बंभेही । मयन प्रेम तन मुधि नहि तेहो ॥

कसत ब मृत्यु से बच गईं धीर भिसन होने तक रावण के अप्रपित घरवाचारों को सहन करती हुई भी निडर धीर प्रकिय बनी रहीं। रावण उन्हें मारना चाहता था पर मार नहीं सका।

अस्तु यही कारण है कि लोक ने शिव-पार्वती राम सीता सावित्री सत्यवान धीर मत्त-रामयती के प्रेम को आदर्श रूप में अपनाया। ये महान् विभूतियाँ लोक मर्यादा की रक्षाक धीर लोक जीवन को विकसित करने वाली हुईं। गृहस्थ धर्म (प्रवृत्ति मार्ग) इन्हीं के मार्ग पर चलने से 'प्रीति रस' युक्त होता है।

बुध्दार्थ के संबंध में यह भी धर्मोपदेश है कि यह जितना पुर्वाह (अकारण से लेकर इत्यर्थों के स्वयंवर की वर्षा करने तक) में पामा जाता है उतना उत्तरार्द्ध में नहीं उत्तरार्द्ध में कहानी अधिकतर प्रकृत कथ में चलती है। इसका कारण यह है कि कवि पुर्वाह में प्रेम और ज्ञान का प्रतिपादन करना चाहता है और उत्तरार्द्ध में लोकव्यवहार का। इसका संकेत राजा जीमसेन के प्रति राम ऋषि के उपदेश में मिलता है जिसमें ऋषि राजा को पहले परमात्मा और आत्मा के ज्ञान का उपदेश करते हैं और तदनंतर व्यवहार धर्म का:—

#### परमात्मोपदेश

सिद्ध कहा राजा मुन मोती । निज यह मरम कहीं हीं तोती ॥  
जो मुनि समृद्धि बात पर बारेसि । धरम बस्तु कहूँ सुवन निहारेसि ॥  
साईं एक यहै सब ठाऊ । मुन ताके तोहि बिनु बुनाऊ ॥  
सिबर निर्बुध धतन अभेवा । धरम बिन्दि लीं जाइ न देवा ॥  
मुक्त न बड लहुज परकासा । क्यों देकासि सब काबं धकासा ॥  
बड धीबड धंतर कहु नाहीं । सिगड समाइ रहु सब माहीं ॥

बंदी की ध्वनि का संबंध मार से है। मार को हिंदू शास्त्रों में ब्रह्म (अकार) का स्वल्प माना है। प्रणवमार (अकार) से प्रणाह्व (सूक्ष्ममार) और प्राह्व (स्पृष्टमार) उत्पन्न हुए। प्राह्व मार से दो प्रकार क मार निकले—जीव जन्म (मार) और अजन्म (ध्वनि) तथा इन प्रत्येक के प्रमथुर और मथुर करके दो दो भेद हैं। इस प्रकार जीव की तरह बंदी ध्वनि भी जनकारी (मार ब्रह्म, अकार) से बिछुड़ी हुई है, ऐसा भी समझना चाहिए। प्रत्यभिज्ञा अपने पर बहुरी रही है। कहते हैं गोविधों के प्रति धर्म मान दिखाने के कारण भी कृष्ण की कछो बने भी उनसे प्रसन्न होता पकर। स्वामी हित हरिभंय भी को धोहृष्ण की बंदी का प्रवतार बताया जाता है। ऐसे ही और भी कई बंदी के प्रवतार कहे जाते हैं। सूटी ज्यो प्रपन प्रेम संगीत' को भी बाँसुरी से उपमा देते हैं—

किर मनुराय 'बाँसुरी' बाजी । सं धर्मिताय स्वाम्त उपरात्री ॥

—मनुराय बाँसुरी

कव्यक मल्ल साहित्य में धोहृष्ण की बंदी की प्रसिद्धि तो है ही संतों क पदकक साधन किया में भी इसका उल्लेख मिलता है। परंतु वहाँ कागहा के द्वारा बजने के कारण यह मन को 'भ्रमण' बनाकर गिहाल कर देती है। त्रिकुटी से कुछ अर को साधना किया में प्रवृत्त होते ही बंदी की ध्वनि सुनाई देने लपती है—

सीधी सीधी मनुराय रहल मुहम्मद । एहि प्रवतार काहू मुरली बजाइ ॥

मुरली को बनि सुनी मन जसा पुसिप्राण । रहला बीछूक अनु भंती भ्रमणाल ॥

पुनी सुनी मनुराय उपर बली पेल । लहला देयल एक प्रवृत्त पेल ॥

बीजा रही सती साहा होला उजिधार । रोनी भीनी मातीया बरीसु जलधार ॥\*

—महुराई गोसाईं भरनीशस

अस्तु प्रस्तुत काव्य में भी कवि ने बहुत से स्थलों पर प्रपना (वास्तविक) धर्म दिषाया है जो सब किसी से नहीं पाया जा सकता। बहुत से ज्ञान समूह की बहुराओं द्वारा मार करते हैं परंतु मोती खोजने वाले समूह में ही पसते हैं—

बहुत ठौर निज धरत बुराबा । अब काहू वै जाइ न पाबा ॥

बहुत लोग मोहित कड़े बधि पर धाम बाँहि ।

मुक्ता पाब भरबिया, पसि खोज हा माँहि ॥२०॥

इस काव्य में भरतकव्यंती क प्रम के प्रसिद्धिगत ज्ञान और व्यावहारिक मन का प्रतिपादन है। प्रवत के अनुसार मन के लिये समपती और समवंती के लिये नल प्रेमस्वल्प परपारया के रूप में है। दोनों के हृदय में जब एक दूसरे के प्रति प्रेम प्रकट होता है तब दोनों मिलने के लिये व्याकुल होते हैं। परंतु लीक की धनक कठिनाइयों

पार दिखनी—

\* महाएकी खोज दिवस (का. का. प. १-१-१)



के कारण सरसता से मिस नहीं पाते। इतलिय बें विरहाग्नि में तपने लगते हैं। प्रही विरहाग्नि उनकी साधना स्वल्प है। उनकी इच्छियां अपने-अपने विषयों से विरल हो जाती हैं। उन्हें न तो नींद हीं आती है और न भूख प्यास हीं समती है। राय रंभ से मम हट जाता है और विरचनों की तरह संसार से कोई नाता नहीं रह जाता। उनकी धित्त-वृत्तियां एक दूसरे में एकाग्र हीं जाती ह। तच्छ (सात्त्विक गुण प्रधान) प्रम में उनकी इस एकाग्र (ध्यान धारणा और सामाधि यवत) स्थिति का सादृश्य नीला के मिम्नलिखित श्लोक के संयमों में मिलता है —

मा निगा सब भूतलो तरयां जावति सयमी ।

दरयां जावति भूतानि सा निगा पपतो मुने ॥

इस प्रकार विरह के तीव्र पक्ष के कारण प्रसाप की स्थिति में लोगों अपने-अपने प्रेम की एक दूसरे के प्रति जित प्रकार व्यक्त करते ह उसमे प्रेम की सीकिकता प्रतीकिकता की ओर जाती हुई ललित होती है। यही प्रतीकिकता प्रस्तुत कवि का युक्तार्थ है। इतमें प्रेम की प्रतीकिकता के साथ-साथ रहस्यमय सत्ता के प्रति भी इंगित रहता है। कुछ उदाहरण दिए जाते हैं :—

### नल का विरह

[प्रम का प्रतीकिक वणन और परमारमा की धार संकेत]

हीं जायों तोहि सामि बमावत । तोहि सुल कम नींद कित प्रावत ॥

हीं भे भबंद भबों बंरागो । तू तरोज सुख सर प्रनुरायी ॥

हीं जस्तक पिठ पिठ रठ मोरे । तू स्वाती भाये नहिं तोरे ॥

मो मन बिल बकोर बिन देरों । तू लो बंद तोर नहिं लख ॥

मो गति क्यों भधरी बिन पानी । तू अपने पानी प्रमिमानी ॥

[बोहा—१२२]

×

×

×

मो लों दितती ये बग प्राय । होइ तो बहीं लो पिठ कीं भाबे ॥

×

×

×

धी पुनि यहीं पात कछु माही । सब जग जीब देइ तो माही ॥

जाकीं कृपा इच्छि कर हेरति । ताही के कुछ बाहु निबेरति ॥

[बोहा—१२३]

×

×

×

येम तमूज बभाह प्रपार । तहां परे की काहन हारा ॥

नबी समाइ जाइ इक घोरा । का तिल बूंद करे तिहिं जोरा ॥

×

×

×

येम पहार प्रकाश जबाहीं । तिल बोला ना ऊपर तपूरी ॥

[बोहा—१२४]

प्रथम साधना-पद्य

मो तो सुम्न सुमहि दुहेला । जितहुं न मयो वेन कर मेसा ॥  
 उपन न हिरे बिरहु बरागु । मयी न भगवहुं कै विद्यनायु ॥  
 तिन यह पंच सगम करि जाना । जिनहुं कर येम पंच मन घाना ॥  
 ह्रीं तिघ सीत करन कर पाऊं । पंग पग जत जाव बडाऊं ॥  
 बसीं न बीब रन जिन सभू । ती लगि जी सगि मीतहि निभू ॥  
 ययो जयीं जभू जमंग त्यो होई । येम पंच पर मझे न कोई ॥  
 जो तन हार रहे तजि जाऊं । मन पग पिउ मग सो न दिगाऊं ॥

येम पंच मोहि अति सुगम, मूघ प्यास डर नाहि ।  
 कसक करेजे कावही नीर अ मनन माहि ॥१२६॥

/ < ×

सीसे एक घोरे के डारै । तव इहुं घोरे छाइ पग चारै ॥  
 येम जेस महुं मायै बाजी । सो जेसे जो इह पर राजी ॥  
 यह देखो पुनि अबरन रीठा । जो हारै जानहु तिन बीठा ॥

येम समुद्र अपार अति नाहि घोरे महि घोरे ।  
 जो बूड़े सोई तिरै यहै येम बधि घोरे ॥१२७॥

सांसारिक भागा से विरक्ति

हो अत राज न मन से जाऊं । जिहि भुज उरभिभौत बिसराऊं ॥  
 जो जिन मोम मिले पिउ सोई । तो यह राज कुतल से होई ॥  
 नाहिन येम अगिन तन जारो । मूडे राज जनम का हारो ॥

हार जनम राजा धरने, गए जबाइ निसान ।  
 ते जोते जई पर जुम्न येम मँदान ॥१२८॥

[नाक सज्जा की उपेक्षा]

पुनि तुम यह सिधदा मूल घानी । धरै वेत महुं हाल कजानी ॥

× × ×

डरो न हास कर्मक सो, जो येम रहे मन माहि ।  
 इहि घाँसु परबाह अस, बित कतक उहराहि ॥१३२॥

पुनि तुम यह बोले तिय जानी । राजाहु महुं होइ है अपयानी ॥

× × ×

भूठ मान ए जान सब बाया क उममान ।  
 जान बिपी भ जान सो रीम नम अपमान ॥१३३॥

× × ×

## [प्रिय दोष (मिलन) की कठिनाई]

यही रजाई में बुराया । सब कर सही बही पंथारा ॥  
 करहि द्वारपालक कठिनाई । प्रायसु बिना पवन न दुराई ॥  
 के सो जाहि जो म्याता होई । जिहि जो राजहि भेद न होई ॥  
 म्यातहि जात घटक कसु नाहीं । को घरज घपन घर जाहीं ॥  
 के सो जाहि जिहि प्राप मुलाक । वेम पसोठ होइ पहुँचावै ॥  
 जो जसपि पुरुष जतकोई । ती प्रावन पुनि जसति न होई ॥  
 हरि रूप बहु जाइ हिराई । तिहि मिल प्रापा बेइ मबाई ॥  
 इहै कठिन सोम पिठ केरा । कीज न किरा जिनहि मुज हरा ॥  
 काहि पठाळ पीठ पहुँ, को शे जित को होइ ।  
 एक भीज के बेइ बिनु, पीठ न पावै कोइ ॥१३५॥

## [म्यान की एकाग्रता और मट्टेठ स्वरूप दर्शन]

ताँची मीत न रहै दुरानी । जिन जासों जाई तिन जानी ॥  
 तन यहु बिस्टि मास सो म्यारा । सो एकइ जो जानन हारा ॥  
 प्री पुनि प्रचल मीत जब होई । तब तिनहुँ महुँ भेद न कोई ॥  
 अंतर तोली बेइ बिलाई । जीनी में तू पीज कषाई ॥  
 तनर्म भए न अंतर कोई । तन धी प्राग तो एक होई ॥

तब सब ताहि अतन महुँ अतन सबै तन माहुँ ।

बहुँ अतन तब में मयो अतन बुतिय पुनि नाहुँ ॥१३६॥

म्यान की एकाग्रता सिद्ध हो गई तो प्रेम साधना भी सिद्ध हो गई । फलस्वरूप प्रियतम का दर्शन या तो जसी समय हुआ समझिए और यदि नहीं तो जतमें नाम मात्र का बिलंब समझना चाहिए । जब 'प्रति प्रबल प्रवस्था' हो जाती है तो 'बरखा हीन में कोई सबिह नहीं रह जाता:—

जब प्रति प्रबल प्रवस्था होई । तब बरखा सबिह न कोई ॥

कसु जो बुझो जो पैम बुझ, जिन पुनि पिय ना लेइ ।

बेव लिये प्रीअर निकट, पीर बिना कई बेई ॥१३७॥

इसीलिये नल की प्रेम साधना अंतिम सीमा तक पहुँच गई तो उसे स्वयंवर में जावै का निर्वाह्य मिला ।

## धन्यंती का विरह

## [प्रेम साधना की गंभीरता]

दुरत म्यान पिठ लीं धनुरायो । बाते करे बिरह बँरापी ॥

प्रीतम दुरत करति कबों न मोरी । सब अप छांड़ि गई हौं तोरी ॥

अब जनि बिरह जाग में सहे । रोमहि रोम पीठि तन रहे ॥

अब जस्ये ली घाब वै लागे । जित अकुलाइ बहै तन त्यागै ॥

ब्रह्मि बीड तन त्यापि के, बंग मिय तोहि जाइ ॥

प मन बाब कि तो द्रष्टुन, बीड तो माहि समाइ ॥१५५॥

विड विड तु तो बिन कल नाहीं । मोहि विड को संसा कछु नाहीं ॥

यह बाब सब तो सों मिस रहा । सबहु अनमिस जाइ न करा ॥

निज विड पान प्रथम तन सोरा । यह मन मूस कहे विड मोरा ॥

जिन कारण बिनती हूँ करीं । हा हा लाइ सीत बुईं परीं ॥

तन तोहि सापि बहुत दुख पाबा । रूप रंग रस सबहि गवाबा ॥

× बिहू रोग सिर बहुत बढ़ाबा । तांहू प नित करै सबाबा ॥

प्रोथम विड तु तन प्रथम, सबा रहै तुब पात ।

बिरह भास बुल तन सहे सोई जाइ बिरास ॥१५६॥

[परमात्मा की धार संकेत]

पंच स्रु ही एकती, प्रकृत हूँ इन माहि ।

याइ परै निड तोहि मजू, जो रात्री गहि बांह ॥१५७॥

हूँ प्रनाय कछु होय न मोतीं । जो कछु होइ नाप सब तोतीं ॥

मोतीं यहै कैय दुख भरजा । मार्ग जिहारी सुनिरत करजा ॥

यहू बल नाहि कि तुम पहुँ प्राई । निति केँ तन की तपत बुझाई ॥

तुमहीं प्रपन्न होहु जो प्राई । प्राणा प्राण वैहु बिचराई ॥

सबही विड बरसन ही प्राई । इन सत्रुन सों प्राप छुड़ाई ॥

महाराज तुमसों सब हाई । तुम कहूँ बरसनहार न काई ॥

तुम प्रपने सत्रुन केँ बरता । सब करि सके प्राप जो करता ॥

जो तुम प्राइ कछु बट खेरा । कही तुम्हें कीने जोँ प्ररा ॥

बोहा—१५९

× जो इहि में कछु बीड न मोरा । जो कछु करै सो बहु बित खोरा ॥

दिन दिन पाव प्राइ पर लावै । दिस्ति प्रनोकर जान चलाव ॥

पानक बहै धनुक पुनि सोई । प्राणाहुँ जान प्रीर जीहु कोई ॥

प्राणाहुँ बन्दि प्राप उर करै । प्राणाहुँ तहाँ सोन होइ परै ॥

बोहा—१६१

[संसार धार साक सज्जा का त्याग]

प्रोथम मुरत करनि क्यों न मोरी । सब जग धाँड़ि गई हूँ तोरी ॥

बोहा—१६५

× जीवन काज लाज में सोई । रोइ रोइ धनुषन सब पोंई ॥

× जो निड सापि साज न जाई । जाहुँ निकल कीने ॥

हैं। इस प्रकार उनका प्रेम अमर हो जाता है। प्रेम का तत्व यही है। इसी से 'प्रीति-रस' होता है। मर्यादा पुत्रवीर्यम राम ने हनुमान को जानकी के लिये जो संदेश दिया था उसमें इसी 'प्रेमतरण' का दर्शन होता है —

कहेउ राम बियोप तब सीता । मो कहूं सकस मए बिपरीता ॥  
मवतक किससय मगहु कृतानु । काल निहा सय निधि सति भानु ॥  
कुबमय बिपिन कुंत बन सरिता । बारिब तपत तेन जनु बरिता ॥  
जे हित रहे करत तेइ पीरा । उरय स्वास तम त्रिविध समीरा ॥  
कहेहू ते कछ बुझ पठि होई । काहि कही यह जान न कोई ॥  
'सत्य प्रेम' कर मन भव तीरा । जानत प्रिया एहु मनु मोरा ॥  
सो मन सवा रहत तो पाहीं । जानु 'प्रीति रस' एतन्हि माहीं ॥

इस प्रेम संदेश ने अपना प्रभाव इस प्रकार प्रकट किया कि जहाँ जानकी पाषाण में अक्षरों की लयारी कर रही थी वहाँ इसने उमड़ी लारी गुणबुध को उम्हें प्रेम में मग्न कर दिया —

प्रभु संविगु सुगत बबैही । मगत प्रेम तन सुबि नहि तैही ॥

असतः ब मृत्यु से बच गई श्रीर मिलन होने तक रावण के अग्रजित अर्याचार्यों को लहान करती हुई भी गिरा श्रीर अडिग बनी रही। रावण उम्हें मारना चाहता था पर मार नहीं सका।

प्रायः, यही कारण है कि लोक न त्रिक-पार्वती राम-सीता सावित्री सत्यवान श्रीर मल-ब्रमर्त्यों के प्रेम को आश्चर्य रूप में अपनाया। ये महान् विभूतियाँ लोक मर्यादा की रक्षा श्रीर लोक जीवन को विकसित करने वाली हुई। पृथ्वी धर्म (प्रकृति धर्म) इन्हीं के मार्ग पर चलने से 'प्रीति रस' युक्त होता है।

गुप्तार्थ के संक्षेप में यह भी धर्म-व्यवस्था है कि यह जितना पूर्वाङ्क (अध्यात्म से लेकर अमर्त्यों के स्वर्गपर की अर्थात् चलने तक) में पाया जाता है उतना उत्तरार्द्ध में नहीं उत्तरार्द्ध में कहानी अधिकतर प्रकृत रूप में चलती है। इसका कारण यह है कि कवि पूर्वाङ्क में प्रेम श्रीर जान का प्रतिपादन करना चाहता है श्रीर उत्तरार्द्ध में लोकव्यवहार का। इसका संकेत राजा भीमसेन के प्रति ब्रह्म शक्ति के उपदेश में मिलता है जितमें शक्ति राजा को पहले परमात्मा श्रीर आत्मा के ज्ञान का उपदेश करते हैं श्रीर तत्परत अग्रजित धर्म का —

#### परमात्मोपदेश

सिद्ध कहा राजा सुन भोली । निज यह मरम कहीं हीं तीली ॥  
जो सुनि समुच्चि बात उर चारेसि । प्रगम वस्तु कहुं सुपम निहारेसि ॥  
साई एक बई सब ठाऊं । सुन ताके तोहि बिगु सुनअई ॥  
स्विर निगुंथ घटन अमेया । अरम बिरिबि छीं जाइ न बैसा ॥  
मुक्त न बड लहक परकाता । अयो देखसि सब ठाऊं प्रकाता ॥  
बड भीषड अंतर कहुं नाहीं । तिनब समाइ रहु सब माहीं ॥

तोई सब जलन कर सेना । धीर न सपी प्राप प्रहेना ॥  
 य बहु खेत जो बेहि दिखाई । खेतन सब महुँ रहा समई ॥  
 ता बिन करनी कछु न होई । नुन धीनुन तिगु नगी न कोई ॥

एसे सब रंगन मुना, पै बहु प्रपने रंय ।

जो निज बाको निरंय रंय, तासों भयो न भग ॥६६॥

### भारमोपदेश

घर तोहि तोरो पति समझाई । सपक बेसि निज कहूँ मुनाई ॥  
 जो बहु एकै सिमट समाया । घट घीघट ता बिन नहिं प्राया ॥  
 रयों तोरे धर तू पुनि सोई । निरक बेज निज घीर न कोई ॥  
 जो बहु सो तू सिमट समाया । मुधा न उपजा यया न प्राया ॥  
 जो तू घाबि घंत पुनि सोई । मन उपाधि न मानहु कोई ॥  
 जो बहु सो तू सिमट समाया । मुधा न उपजा यया न प्राया ॥  
 जो तू घाबि घंत पुनि सोई । मन उपाधि न मानहु कोई ॥  
 यहूँ उपाधि प्राप जो बितारति । नुन घीर को घीर बिचारति ॥  
 छुंकि घरर बर मिरतक होई । तोरे कुनत काल भै तोही ॥  
 तोहि यहूँ मिथ्या भरम जो भयक । घोरहि ते घीरहि हूँ पयक ॥  
 ज्यों यनाहुय माया घबिकाठी । तपने महुँ होइ जाइ निघाठी ॥

माया निसि सपना जसत, नींद भरम प्रजाल ।

तोइ ताँक समझा सबन, बाते कछु न निबाल ॥६७॥

य यहूँ छान घाब तोहि माहीं । तू जरम्य पाये तिन माहीं ॥  
 तोरे जिय परतीत न धारै । मन प्रबीन संका उपजावै ॥  
 मारग केँ जल ज्यों पहराना । मारग जल ज्यों हीइ ठहिराना ॥  
 रतन बुरा यदरे जल माहीं । बिना पिराने सुकठ माहीं ॥  
 तासै जो तोरे यहूँ इच्छया । नुन जरवार बेडें तोहि तिच्छया ॥  
 ब्रहम मात्र मन दरपन काई । तब निरमम एबि बेइ दिखाई ॥  
 तोहूँ स्वाँत सबर मसकना । सहजहिं जाय रँज दिन जलना ॥  
 तासों सब तोई मन मात्र । मात्र य्दान धंजन त्रिग घात्र ॥  
 उपरं भेन ग्याग हिय होई । एही न ईत रहस होइ सोई ॥  
 मूकत होइ प्रतय जब मुर्ख । सहज सफल मरन तब कूर्ख ॥

बुद्धिया पवन यपान घन, तन मटकी रवि भोज ।

मर्य कही माया निरुनि रह्यो रह्यो होइ कोच ॥६८॥

### ब्यबहारधर्मोपदेश

घर ब्योहार करम नुन मोनों । जानि मुपात्र कही हौं तो सों ॥  
 तोहि रवान रीगु बड़ रामु । तोहि घस का बहजन कर रामु ॥

धीरहृत्क यमसि परम पग धारं । राज करोति नत भग द्विचारं ॥  
 होइ न बुझी राज मझ कोई । राज रंज गुन मानहि बोई ॥  
 राजा प्रज निपाय पर धारं । सीत छाडि कै तत दिवारं ॥  
 राज रंक सरवर के जाने । समझि दूध पानी मित्र धारं ॥  
 राजहि यहू बूझहि तिहि बारा । कत निपाय कोइहेति तासारा ॥  
 जो रकहि बरिधार ताताब । तिहु पतट राजा बुन पार्य ॥  
 राज रंक जिहु कर उपराभा । तिहु कर तैत रंक तत राजा ॥

राज रंज परजा सारं राजा सब कर सोइ ।

यहू तायन से राज रं परब करो जिन कोइ ॥६६॥

ज्ञान के इन दो पक्षों को प्रस्तुत प्रास्थानक न. पूर्वाह्न धीर उत्तरार्द्ध में कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त किया गया है । प्रथम ज्ञान का विषय निर्मल वस्तु है धीर वृत्तरे साधन का विषय व्यवहारधर्म । साधन व्यवहार का उपदेश पाप (राजा) के अनुसार राजधर्म के रूप में हुआ है । परंतु राजा भीमतेज को किया गया यह उपदेश प्रस्तावना रूप में बोला उपदेश समझना चाहिए । धर्मग्रन्थ यह 'जाता समित उपदेश के रूप में कहानी के साथ युवा हुआ है । कवि ने एक बात धीर की है । इमर्पती के बचन में उसने परमात्मा को प्रम(प्रेमाभूत) के रूप में चिह्नित किया है धीर नत के वर्णन में ज्ञान रूप में । यह उनके सित भेद के कारण है जो स्वाभाविक है । परमात्मतत्त्व दोनों में एक ही है । दोनों मूढ़ सात्त्विक वृत्ति के होने के कारण बहु तरंग उगमों बुरा प्रकाश रूप में जातने सपता है । रंगहीन प्रकृत कवि की बोधन में जैसे गंगाजल दिखाई देता है ऐसे ही उनके त्रिगुण मल रहित मूढ़ प्रतारकन में परमात्म कपी प्राप्त हैज बचकने सपता है । इस प्रकार उनमें जित रूप सौंदर्य का निर्माण होता है वह प्रबुधम बुलंभ धीर धर्मीक है । उसके धामे स्वयं रूप (अपव रूप) का मल कीका पड़ जाता उचित ही है । इस दृष्टि से इस रूप की उपमा के लिये बड़ा हो रहू जाता है धीर ऐसा ही कवि ने किया है । यह भी बात है कि कहानी बहा की धीर ईगित करती हुई चसखी है । नत के सौंदर्य का वर्णन केवल कहानी के धारम्भ में ही धीर बहु कवि द्वारा हुआ है । इमर्पती के सौंदर्य का वर्णन भाटिन द्वारा तीन बार धीर कवि द्वारा उत्तरार्द्ध में दो बार किया गया है । यहाँ विषय स्पष्ट करने के लिये उनके धारमिक रूप सौंदर्य का एक एक उदाहरण दिया जाता है । इन्हीं में समस्त भेद क्लृप्त जाता है—

### भस का सौंदर्य

यहू (ज्ञान कपी नत) उज्ज्वल वर्ण जाता है भागो काम से (परकाया का काम 'काम' भी है इसलिये परमात्मा कपी काम से) धरतार लिया हो । जिसके मुख से सुना गया, वही उस रूप की सुंदर (बास्तु) वा । नत के मुख के धामे रूप (अपव रूप) का मुख कीर्ण कोई नहीं कर सकता वा । भागो बिजाता ने सब के घट-घट घट-घट में बहुरूप के समान घट-घट से समान रं धार में

नहीं पाती थी। सूर्य को देखने से धीरों की ज्योति जलने लगती है और वे तब भीतर होती हैं जब दिग् देखने को मिलता है। परंतु मल को देख लेने पर सूर्य को देखने के लिये कोई साक्षात्कृत नहीं रहता था। जो मल को देख लेता था, वह उसमें सूर्य का (दूसरा धर्म ब्रह्मरूप का) दर्शन करता था। सूर्य को देखने से धीरों की जो गति (जलने की गति) होती है वही गति मल रूपी सूर्य को जग भर देखने से होती थी (अर्थात् मलरूपी ज्ञान सूर्य प्रज्ञानाधिकार युक्त धीरों को जग भर में जसा देता था)। पुरुष अथवा स्त्री जिसके भी चित्त में वह रूप (ब्रह्मरूप) भटक पड़ा फिर वह जग भर उसके चित्त से नहीं टूटा। वह रूप संसार के हृदय में समाया हुआ मँसा था। जिसने उस रूप को देखा उसने अपने की जसी में हिरा दिया (दूसरा धर्म जिसने उस रूप का दर्शन किया वह भी ब्रह्ममय हो गया)।

जितने राजा अभिवाहित थे उन्होंने जैसे ही मल के रूप के विषय में सुना जैसे ही उन्हें बराम्य उत्पन्न हो गया (बराम्य इसलिये कि संसार की सुदरी मल की छीड़ उन्हें नहीं बरेगी)। वे अग्नि बलयुक्त मल के यम के कारण देवानि में जलने लगे।

### दूसरा धर्म

जो रजोगुणी (शुद्ध सात्त्विक गुण से अपुस्त) थे वे उस ज्ञानरूप के विषय में सुनते ही विरक्त (सांसारिक भोगों से अलग) हो गए। धीर ज्ञानाग्नि में लपे (मल के सङ्घर्ष) शुद्ध सात्त्विक उज्ज्वल धर्म प्राप्ति के निमित्त वे भी अपने रजोगुण को ज्ञानाग्नि में जलाने लगे।

### ज्ञानोपदेश

यह लिखा जा चुका है कि जब कहानी के साथ-साथ ज्ञानोपदेश भी करना चाहता है। मल के इस रूप वर्णन में ज्ञान द्वारा ब्रह्म प्राप्ति का उपदेश है—

ब्रह्म ही वास्तविक वस्तु है। वही काम है। उसका रूप अनुपम है। सब अगह धीर सब के हृदय में वही रूप ध्यात है। उसका रूप की भटक पाव निमने से ज्ञान जग प्राप्त होते हैं धीर ज्ञान प्राप्त होते हैं ब्रह्म प्राप्त हो जाता है। ज्ञान की प्राप्ति के लिये त्रियुक्त (सत, रज तम) को समूह नष्ट करके शुद्ध सात्त्विक ब्रह्म प्राप्ति करनी पड़ती है धारि। कहानी के रूप में यह ज्ञान रसात्मक पक्षी में वलन किया गया है—

धौ धति कर्बल उजियारा । मानो काम लीरु अरतारा ॥  
 जिगु मय रूप कहू निहि मोटा । मल मूल रूप रूप मय फीका ॥  
 करे न कोड रूप सरि तात । घट अनु घट लिलिबोगह बिधात ॥  
 गुर जलि बरनी धय जोती । वं गुरह मूल जोति म प्रीती ॥  
 नैतहि जोति करे रबि देखे । सीतल होहि हम तब देखे ॥  
 गुरह देखि सोमाइ न कोई । इन्हु देखे सो बरसन होई ॥  
 जो गति नदर की रबि साके । सो धति दिन ताके मय पाके ॥



पुस्य नादि जाके बित परा । फिर भरिजनम न बित लों टरा ॥  
 बहू रूप जग हीय समाना । जिगहू बेता सो बैल हिरामा ॥  
 ओ रजवारं घन बर मुनि सो मा घेराग ।  
 घनस बरन नत बरन सग घरम लर्ष होइ प्राग ॥१६॥

### धमयती का सौंदर्य

यह (प्रमामृत स्वरूपा धमयती) धमयती की सर्वभारत स्त्री पश्चिमी की श्रेष्ठता का कला बड़ कर है । उसकी हाव की उमलियों में धमयती भरा है जिनका धोवन मृतक के मुख में देने से वह ताकाल भी उठता है (प्रमामृत पान करने से जीव तत्काल मृत्यु के मुख से छूट कर घमर हो जाता है) । मानो विधाता न उसी को धमयती में धोपका बनाया हो और फिर उससे समान दूसरी स्त्री न बना सका हो । वह एक ही पश्चिमी ऐसी है जो धमयती से भरी है (परमात्मा एक ही है और वही धमयती है) । न जाने क्या किसके लिये प्रकटित हुई है । हे महाराज ! उतक मुख की शोभिता का सौंदर्य देखते ही बनता है, कहते नहीं । ननु आशिकन पुनिका के अंश से भी कहीं उतक शोभिता पुनक के समान है । निश्चय ही वह पश्चिमी आश्चर्य पूर्ण है । ऐसी अभी तक कहीं सुनने में नहीं आई । उतक कमल को सुपुष्पि तीनों सोलों में पठुंन गई है । सारा संसार भीरा बनकर उस सुपुष्पि की आशा में झमक कर रहा है । उतकी घोमा में सबको सुधा लिया है न जाने वह किसके हाव लपती है ।

संसार रत्न (धमयती रत्न) के लोभ में ही और वह पश्चिमी प्रेम समुद्र की मुरता कपी धमयती रत्न है । न जाने कौन इसे पाकर समुद्र (संसार समुद्र) पार करता है और कौन उसी में (संसार समुद्र में ही) डूबा रह कर प्राण देता है ।

### उपदेश

धमयती के इस सौंदर्य वचन के साथ साथ प्रेम द्वारा ईश्वर प्राप्ति का उपदेश मिलता है—

प्रेम ही से धमयती कपी परमात्मा या आनंद वाचिनी मक्ति प्राप्त होती है । प्रेम ही धमयती है (परमात्मा का नाम धमयती भी है) परमात्मा कपी प्रमामृत पान करने से जीव जन्म मरण के बंधन से छुटकर अमरार्णव प्राप्त करता है । प्रेम समुद्र में डूबकी समान से वह प्रमामृत कपी मक्ति रत्न मिलता है जिससे जीव संसार समुद्र से तर जाता है—

पुनमिनि जाहि बाइ एक करा । कर धमयिहि धमयती रत्न मरा ॥  
 जो परवार मिरतक मुख पासहि । जो छठि ठाइ होइ तत्कालहि ॥  
 जनु बिबि धमयी ध्याप कर डारो । जै न सकं सरि डूतर गारी ॥  
 इक पश्चिमी धो धमयती भरी । जो किहि धोप रई प्रकटरी ॥  
 महाराज मुख शोभिता निकरई । कहि न जाइ देवत भनि धरई ॥  
 जने धमयती पुष्पों ससि ऊचा । तासों ऊंच कति कर डूबा ॥

पहू अबरत कि बह पुनिना । महागद अरनी नरि सुनी ॥  
 पहूच कंबल तिहूँ पुर अना । अप ना भौर बरं त्रिदि अना ॥  
 पुनि धामा अर अत लोमाना । मो कटे कर बई निदाना ॥

अन मरतिना देम हयि, मुक्ताएन ना रीय ।  
 मो की पावे लं निरे का बूट रे बीय ॥३४॥

(यहाँ इमरती की संतियों में अमृत का होना अज्ञाप में ही अमृतदायक पदा  
 एता है परंतु प्रकृतार्थ में जैसा पहले लिखा जा चुका है ठीक सामंजस्य नहीं  
 पता ।)

इमरती के अमृत अर्पित रूप का भी अज्ञाना अज्ञान सिद्ध होता है किन्तु  
 उनके रूप का अक्षर रूप और अरं अरिष्ट हीका बिना में पद जाने है तथा किन्तु  
 ए संसार के अर्थों की प्राप्ति होता है पद जो अर अर्थों का अयना है—

मूँ पर बौर उवा अनु घाई । अने अकाम रीय दिअर ॥  
 देव अने पुनी मयि अदा । अर अर अौर अर अरगा ॥

अहै माव मोहन अरुत पना म्याम उर अय ।

अरुँ अरुत मो हाय अिय, अर ना अहै अरुत ॥३५॥

बीती रंग मूर परमातं । निरुता लरहि हुना अरगत ॥  
 निरुतन अिन बारी अरियाती । पीर भयी तन पारल पारी ॥

× × ×

अप अहै अर अरु अौरा । रहै न अर अर अं अरा ॥

तापी अरि अहै अने अरगत । अरि अहै अने अरतं तो अरतं ॥

अहै अरुत बारी अहै अर अर अरि अर ।

अर अर अहै अर अर अर अर अर अर ॥३६॥

धीर भी—

अने अर तिहूँ पुर मारी । ताके अर अौर अरि मारी ॥

पुनिय नाति एकी अय प्राप् । अरि न अर तिहि अर अरानु ॥

× × ×

अने पुनि अरु अरगत लं अरे अंन अरगत ।

अरं अर होइ अरिअरिना अरि अहै अहै अर ॥३६॥

अरुती के अज्ञान पद की अक्षर अक्षर करें तो अति पना अज्ञान अानी  
 की अज्ञान या अज्ञानी अरुती अरुती अज्ञान के अज्ञान अरु अरुती है । अर  
 अज्ञान है अौर अरुती अज्ञान । अज्ञान के अज्ञान अरि अौर अज्ञान है अौर अज्ञान के अज्ञान  
 अर अौर अर । अज्ञान अौर अरुती (अज्ञान) भी अज्ञान के अज्ञान में अज्ञान अज्ञान अरु अर  
 अरुती अज्ञान के अज्ञान में अज्ञान अज्ञान ।

ज्ञान धीर ध्रुव दोनों ही ब्रह्म स्वरूप हैं—

ज्ञानं स्वप्नप्रकाश विद्यमाना परं उच्यते

—बसि

रतो व १ रसं ह्ये वाय लक्ष्मणानी भवति

ध्रुव सांख्यिक ज्ञान से ध्रुवत धमन नहीं है। जो ज्ञान है वही ध्रुवत है। ज्ञान ताप ताप ध्रुवत की सिद्धि भी स्वतः हो जाती है। जीव बिना होस्यस्य प्रेम किए ध्रुवत ज्ञानानुभूत ज्ञान कर ध्यात्मानुभू होता है। ऐसे ही ध्रुव सांख्यिक शम्पत्य प्रेम से प्रमानुभू होता है। इन्हीं को क्रमशः निवृत्ति मार्ग धीर प्रवृत्ति मार्ग कहते हैं। पहलो स्थिति में विषय ध्यातुगार्थों से ऊपर उठने के निय संसार का सर्वथा त्याग करना पड़ता है श्री कृष्ण की स्थिति में समस्त बराबर सुखि की परमात्मामय (सुखता व शब्दों में— गिय राम मय) तमभ्ये हुए उसके ताप संसर्ग स्थापित करने की ध्यातुमकता रहती है वही कृष्ण। स्थिति गृहस्थ धर्म का धर्म है। गृहस्थाधम में ही कविता कामिनी में प्रथम प्रथम मय शृंगार रचा धीर उस प्रथम महाकाव्य की अग्न विद्या बिसते समस्त संसार धर्मीकिक प्रीति रस से सिद्ध हुआ। इस ध्याधन का मूस मंत्र निरघन प्रेम है। निरघनता (ध्रुव सांख्यिकता) में ज्ञान है धीर प्रेम में ध्रुवत। ज्ञान का प्रतीक अंतरा ऊपर कहा जा चुका है सूर्य है धीर ध्रुवत का ब्रह्म। सूर्य की उत्पत्ति महत्सुख्य की ध्यातु से हुई है धीर ब्रह्मा की उत्पत्ति उसके मन से—

ध्रुवमा मनसो जातश्चओ सूर्योऽप्रजापत

इसने यह सिद्ध हुआ कि निरघन (ध्रुव सांख्यिक) प्रेम परमात्मामय है धीर वह ध्यातु धीर मन से होता है। ध्यातु में प्रियतम को बसाना पड़ता है, धीर मन उसको बेना पड़ता है। बिरहाकुला धर्मयती कहती है:—

बिरह धगिन पर कीशु प्रकाशा । ध्याधिन निरुध कंत कर बासा ॥

×

×

×

वही बधिक नल कीपा लाबा । मन पंथी धभेत उरमाबा ॥

हो धपने मन की भुरी जो नस लना उरमाबा ।

राज करहु नल जो कीऊ मन मोहि वैहु मयाद ॥१६६॥

कविवर प्रसाद भी इतो स्वर में स्वर भिन्नकर कहते हैं कि प्रेम के विरह मिसन में मुक-मुक धीर धीर मन का खेन खेलेते हुए नाभों—

मानव जीवन बेदी पर परिधय है बिरह मिसन का ।

मुक बुद दोनों नाभों है खेन धीर धीर मन का ॥

ध्रुव, कवि ने मन को 'ज्ञान' रूप में धीर धर्मयती को 'ध्रुवत' रूप में चित्रित कर रही-मुक की लमानता के सिद्धान्त की भी पुधि की है। यह भारतीय विचार तरनी का ध्रुव-धमन करना है। ध्यातु धर्मध्यातुओं के ध्रुवतार श्री ध्रुवगिनी है। श्री-ध्रुव दोनों

ही बरबर के बीजन लायी है । एक ही इय भाति रखने के निमित्त स्त्री-पुरुष दोनों में विभक्त हुआ । स्त्री शक्ति लया है, और पुरुष शिव रूप—

सृष्ट्यपमात्मनो सर्व मयैव स्वेकदया त्ति ।  
हृत्तं द्विषा माप्यल्य स्त्री प्रुपानिनि मदन ॥१२॥  
निब प्रपाम पुरुष इस्तिरव परदा त्ति ।  
मिर वाक्यपान्तर्क ब्रह्म मीपिनल्यम् इतिः  
बदन्ति मा महाराज तन एव परम्परम् ॥१३॥

—माहात्म्यवत् मयदनी गीत, बभुव प्रपाम

पशु मूला प्रम क्वातक बाधों में घाट बाध, पर्यायन का ईसा वर भाषिका के रूप का भी मयप्रभा का बचन भी विषय शक्ति के प्राप किया गया है । बहू की प्रत्येक बभु जैम पैर पीप दन उरवन शान तर्कदा वर पून वधु र्णा, कुटी बावड़ा मगर, देग मगर निवासी पतिहारीन जट, बाबाट, कृति पञ्चमान रूप वरन और हाथी मोड़े भाषि का बचन बरत हुए उनम प्रमपूबक उरवन करता मना है । शक्ति कुंडलपुर की उरमा बकुड म बना है और कता है कि बहू भाषिक दन है बहू प्रपक जाति के लोप हर के प्याम में नीव रखने इ । बहू बायीं मार सम बल प्रभा धनों की तरह बचन में उभासीन हाकर विपतम के पाइ प्रेम में गड़ इ र्मा के प्रम प्याम में एक पप में बड़े हैं । उनका प्रमाति माना बल की टूट बना देने वाली पनभइ है और उनकी प्रमोमत्ता नरभ बर्नन है जो उम्हें प्रमाति म अनुभवित नबीन कोदने प्रदान करता है । उन बीम में प्रेमामि में बनते हैं बीम बच उनका साता तन भी संपन ही जाना है । उनकी शाशा के अग्रमाय रूपों में मुप्रामित होने सपते हैं । एक जाने पर वे फिर जात है पर उनका प्रम छोटा नहीं पड़ता । वे सदा एक ही पाषिय (प्रेमामृत कपी पम्माना र्नाम) के प्याम रहते हैं परहित के लिये सदा भुके रहते हैं ।

वे (तपवर) जानें यह रहे हों कि संसार में वे बिरसे ही हैं जो स्वयं जीत जीत रूप सहृदय दूसरे का प्राणा प्रदान करते हैं—

जो बहू मगर निपर के भाई । पुहुमि वेम मय देइ दिवान् ॥  
मन कुप परमर्षत घरमान् । तयहि जाति उपर्ष हर प्यान् ॥  
मही वृ सिस्ति बिस्ति म प्राव । सोई जन उपरेग दकाव ॥  
माग बिस्ति मगर बहू पावा । जनु पेवी जन बचन उरला ॥  
पिय के वेम पड़े हीद गाइ । तिमहू ही प्याम एक क इन्हे ॥  
ज्यो ज्यो वेम धमिज तन जारे । के पतकर ठंठ पर इन्हे ॥  
रयो रयो हींनि वेम मरमाते । नाई पात इन्दि मराने ॥  
जो पुनि जरे बहुरि तन मरे । शार शार उरला मुक ॥  
बाके पाकि पाकि सब पिरै । तब न पम मराने के इन्हे ॥  
सकल एक पाषिय को बहू । पर बाव इन्दि इन्हे ॥

त तपवर मनु इति बहू, त बिरम बर इन्दि  
सोइ मय प्रापन पर —

पनघट का दृश्य तो बड़ा ही शरस धीर अमरकार पूर्ण है। पतिहारिणों की पंक्ति मुनियों की पंक्ति की तरह है। जैसे बड़े मुनि छोटे मुनियों को उपदेश देते हैं वैसे ही पतिहारिणों का भी उपदेश चलता है। ये एक दूसरी को वरों की ओर दृष्टि रस घट को ओर ध्यान देने का उपदेश देती हैं। बाँकी दृष्टि सोपी कर संन सिर में बोझ धीर बाट रपटीली होने की चेतावनी भी जाती है प्रादि। यह शारा उपदेश मान साधना की ओर भी संकेत करता है जैसे—मम को एकाग्र करना चाहिए। घट रपी शरीर में हो परमात्मा कपी आत्मा है उसमें ध्यान लगाओ। घट रपी शरीर बुद्ध कपी बोझ है। ज्ञानमार्ग सुखम है मम के अंधस होन पर उस मार्ग से प्युत हो जाना पड़ता है। फिर तो कब नबीन शरीर मिसगा और कब परमात्मा की कृपा होगी—

पतिहारी बेसी मुम नेमो । मज पामिनि श्री कौकिल बनी ॥  
 पतिरे और तो भाँतन भाँगी । राइमुनिहि की ब्यो प्रस पाती ॥  
 सेमू पात बहूँ वा हायं । मंनग्ह पानो कससा मार्ब ॥  
 निघट मात्र सीं प्राबहिं जगहीं । पाइन बिस्टि मुरत घट माहीं ॥  
 जो कोई रासी नैक दृग कर । सुपी बिस्टि बाँक के हरे ॥  
 मित्र सब सलो ताहि समुम्भाबहिं । जन परबेसिन पंथ बताबहिं ॥  
 बल चेतहु घट माई मज बेह । बाँकी बिस्टि सुय कर लेह ॥  
 मार्ब बोझ बाट रपटीमी । रपट वरे बुद्ध होइ छबीसी ॥  
 जो घट कोरि जाहि घर छुस । का पुनि कहूँ कैंत के पुषे ॥  
 रपट कोरि घट जोइ जल बिन पानी बिलसाहिं ।  
 पुनि भी कब प्राबा बड कब कुम्हार कहूँ जाहि ॥४२॥

बमनगी के प्रेम के संबंध में थोड़ा सा स्पष्टीकरण करना उचित होया। मूल कथा में हूँ नल-बमनगी के बीच प्रेम संबंध तो जाने का काम करते हैं जिससे दोनों में मूल अन्ध द्वारा पूर्वाभिराम उत्पन्न होता है। नल बमन में कवि ने हूँ के स्थान पर भाँटन की योजना की है। परंतु भाँटन केवल नल की ही बमनगी का पता देती है और तत्पश्चात् लुप्त हो जाती है। बमनगी को नल के विषय में पता देने वाला कोई नहीं। कवि ने यह काम 'प्रेम' से लिया है और इस प्रकार बहु प्रेम का न्यायस्थान बिलाना चाहता है। उचित कहना है कि प्रेमी और प्रेमिका के बीच वृत्त का काम प्रेम ही करता है—

मिला जो जाहूँ पीठ सों, ली पम करो यह नेम ।  
 प्रेमी प्रीतम मिलन की बीच बलीठ ली नेम ॥२३७॥

प्रेम का आकर्षण ऐसा है कि जो जिसके रंज में रँबता है वह भी उसके मर में मल ही जाता है। जो जिसको चाहता है वह भी उसको चाहने लगता है। दोनों एक ही प्रेमाभि ताप से तप्त होते हैं। दोनों ओर प्रेम ही वृत्त संबंध बनाता हुआ दोनों को सुरत ओरी से जोड़े रखता है। सच्ची प्रीति छिपाने से नहीं छिपती। तब तो केवल देखने मात्र क लिये प्रलय है। वास्तव में वह एकमात्र प्रेम कपी परमात्मा ही सब अथव ध्याप्य है। जब प्रेम अन्ध ही जाता है तब दोनों में कोई भेद नहीं रहता। जैसा ने रक्त

कड़ावा ही था कि मजनु की धाँसों से वह निकल पड़ा। इतनिये प्रंतर तब तक ही बिछाई देता है जब तक 'मं' और 'तू' की कबाई बनी हुई रहती है। प्रेम में तमय ही जाने पर तब और प्राण एक हो जाते हैं। तब उसी घतन रूपी परमात्मा में ही और वह घतन भी समस्त तन में व्याप्त है। इस प्रकार ज्ञान होने पर दोनों प्रेमी घतनमय होकर 'मे' रूप—एकौह द्वितीयोनास्ति' हो जाते हैं। यही प्रेमाख्यानक काव्यों का अंत सिद्धांत है जो कवि का वास्तविक अभिप्राय है —

जो कोऊ जाके रंग रासै । सोऊ पुनि ताके मब मासै ॥  
जो जिहि बहै बहै सिहि सोऊ । एकहि तप तपे मिलि सोऊ ॥  
पैम बसीठ एक बुहुं धोरा । बहै मुरत डोरी कर जोरा ॥  
साँची प्रीत न रहै दुरानी । दिन जासों लाई तिन जानी ॥  
तन यह बिस्टि मात्र लीं प्यारा । लो एकइ जो जाननहारा ॥  
धी पुनि अचल प्रीति जब होई । तब तिनहुं महं भब न कोई ॥  
सैनं इही जो रक्त कड़ावा । बहूँ मजनु कै ननहि छावा ॥  
धंनर लीलीं देइ दिखाई । जोसों मं तू बीच कबाई ॥  
तनमें भए न अन्तर कोई । तन धी प्राण सो एकं होई ॥  
तन तब ताहि घतन महं घतन सब तन माहं ।

बहै घतन तब मे भयो घतन बुतिय पुनि नाहं ॥१३८॥

परंतु जिज्ञासा पूरी तरह शान्त नहीं होती। परमात्मा के सर्वप में भी पहले से ही गुनागुनाया या संस्कार के रूप में, कुछ न कुछ ज्ञान बना रहता है। जब तक वह ज्ञान नहीं है तब तक ज्ञान भावों का अनुसरण करना बेकार सा ही है। जब प्राधार ही नहीं तो आधेय कहां से होया। इससे विवित होता है कि इमर्पती को नस के बप लोहर्ष का पता पहले से अवरय था। पुराने जमाने में राजकुमारों और राजकुमारियों के बिरों का बिक्रियार्ब आराग प्रदान एक राज्य से दूसरे राज्य में बदलर होता था। उन बिरों का परिचय भी दिया जाता था। इसी प्राधार पर यह कह सकते हैं कि इमर्पती को नस के बियय में पूरी जानकारी थी। यही नहीं उसके हृदय में नस के प्रेम की बिनगारी पड़ चुकी थी। काव्य के निम्नसिद्धित डो उद्धरणों में इस अस्त को संकत मिलते हैं —

प्रबन पय नस बिब बनावा । सहज कुमुम ताके रंग प्रावा ॥  
बैठि लो अतल अरन उजियारा । परा हुता हियरं बिनगारा ॥  
मब सदि प्रेम पबन लो जाया । मुतया हिया अरन तन लाया ॥

[बोहा—१४०

इसमें 'अराहुता हियरं बिनगारा' बतलाता है कि इमर्पती के हृदय में नस का प्रेम बिनगारी के रूप में पहले से पड़ा हुआ था।

दूसरा उद्धरण—

नस अरैन राजा जो बहावा । इन बारी तासों बित लावा ॥  
मुनिबत अतल अरन उजियारा । तिहि कर अरय लगी अरभारा ॥

यहै बाहू हियरं महुं परा । सेंका बहै प्राग कर जरा ॥  
 तिहि न रूप बिभ्र एक चीता । बहै राम कं जाम सीता ॥  
 निति दिन रहै वेम घनुरागी । घोट होइ तबही बरामी ॥  
 रोयं मन बेइ मित्र महुं बैकि बैलि यहु बिभ्र ।  
 जिहि को एतो बिभ्र यहु, कंतो घीं तो मित्र ॥१६५॥

इसमें 'सुनियत शब्द से पूरी तरह स्पष्ट हो जाता है कि सलियों ने मन के 'मनलहरण होने के विषय में सुन रखा था । अतएव ब्रमर्षी के हृदय में मन के प्रति जो प्रेम उत्पन्न हुआ वह गुण धरण बिभ्र और स्वप्न दर्शन से हुआ ।

कवि ने सुकियों की दो शय्य बातों की ओर भी ध्यान दिया है । उनमें से एक तो है 'मयुष्याता और दूसरा है 'बिभ्र विधान । मयुष्याता के दो उद्हरण दिए जाते हैं ।

पहला—

घी उर भाठी मर वेम बुघाऊं । मन कं कथा नु नतके लाऊं ॥  
 एतो वेम मयी मयु डारो । जासो रिया वेम मय डारो ॥

×

×

×

वेमो पीउमहार के आस्त गिन एकि जाहि ।  
 एक पिमाता करि पिबे डुमर बेहि जंपाहि ॥२६॥

दूसरा—

बिभ्र मुराही मन पिवासा । मर यह मीत पिबे यहु जाता ॥  
 बिभ्र बिधान का एक उद्हरण इस प्रकार है—

जबपि तोर बिभ्र मोहु पाहां । रात बिबत पिगबो तिहि माहां ॥  
 प्रेकिपा ती तासो बिरमाऊं । मन बंजन घाबं न उहाऊं ॥  
 सो तोरे निज मूरत जाई । घाप बहै घी तन के बाई ॥  
 जिय निज तत रूप कर भूजा । तिहि कर बिभ्र रिखावत बजा ॥  
 यहु जानी यहु बिभ्र न बीऊ । जिय को पीउ प्राग सो वीऊ ॥

दोहा—१५७

इसमें बिभ्र विधान के साथ साथ ज्ञान और प्रेम साधना का बिभ्र भी लीज दिया गया है ।

### व्यवहार धर्म

जैसा पहले लिखा जा चुका है, कवि ज्ञान और प्रेम के साथ-साथ व्यवहार धर्म का भी प्रतिपादन करना चाहता है । इसीलिये काव्य के उत्तरार्द्ध में (ब्रमर्षी के स्वयंवर से लेकर अंत तक) कहानी अचिह्नतर लौकिक रूप में चलती है जिसमें धर्म का महत्त्व बरसाया गया है । लौक व्यवहार धर्म पर प्रभावित होता बाहिए और धर्म सत्य पर । सत्य पूर्णक धर्मवर्तन करने से मनुष्य को कोई नहीं सता सकता । धर्म अस्तका सहायक होता है और जितका धर्म सहायक है उसको इहलोक एवं परलोक का कोई नश नहीं

रहता । यों तो बल पहले से ही सत्य धीर धर्म पर बलता था, परन्तु प्रमत्तापना में कतकर धीर वमर्षणी बीसी स्त्री राज मिल जाने पर उसके बल पीछे, उससे धीर उत्तरदायित्व में अधिक वृद्धि हो गई । उसके पंजर को कुछ अपरिपुष्टता भी वह सब जाती रही धीर वह पूर्व मानव में परिवर्तित हो गया । विषयमायुरी संबन्ध त्रिलोक सुंदरी को प्राप्त कर लेने पर भी वह कंबल भोगों में लिप्त नहीं हुआ । वह धर्म धीर राजनीति के अनुसार राज्यकाय करने लगा जिससे प्रजा सुखी रहने लगी धीर धारों धीर धर्म का बोलबाला हो गया । हरिस्मरण के बिना कोई काम नहीं होता था । वह सदा पवित्र रहता था धीर नित्य अनुभव दान देता था —

नित्य मल वरम पंच पय धरै । राजनीति बरनी तस करै ॥  
 परजा सुखी धरम कर राजू । हरि सुधिरम बिन धीर न काजू ॥  
 सदा पवित्र रैन दिन रहै । दान प्रबाहू नबी नित नहै ॥  
 ऐसी धरमबंति जो होई । भाऊँ बिबन न व्याप कोई ॥  
 बहा उहाँ इहि धरम सहार्ई । जहाँ सत्य तहाँ पय न जाई ॥  
 धरम सहार्इ कोउि कुछ डारै । धरम तनु संताप निवारै ॥  
 सजय धरम नय बुद्ध को जो तिहि सखै सताइ ।  
 कुहुँ लोक को भव हरै, जा कहूँ धरम सहार्इ ॥२४३॥

ऐसे कर्तव्य पराधम सत्त्वकारी धीर धर्मप्राप्त राजा को संतार का ऐदव्य स्वतः ही प्राप्त हो जाता है । इसलिये कवि ने मलवमर्षणी के सुकनोम का भी पूरा वर्णन किया है —

होइ माग पुनि सदा यथाथा । बिबिना सुख संजोग बनावा ॥  
 भोग बिलाग करै मिलि बोज । रातहि घौस न होइ बिघोज ॥  
 बोज एक वेम नद माते । प्रमत्तकरन एक रंग राते ॥  
 जो मन मिलि जो होहि इक जाऊँ । तिहि सुख का उपमा जो बताऊँ ॥  
 धी धर राज भोग कर साजू । साँग न कौनी सबै लयाजू ॥  
 बोज रहै कूल से बने । कूलन को सुबास रंग समे ॥  
 दिन होइ कूल कंस धी धनी । रंग होहि मिलि एठे कसी ॥  
 निता कबंस नपुकर कर बोरा । मेज सरोवर लहि हिलोरा ॥  
 पंजर समाइ कबंस महुँ रहै । कबंस तो निमित्त भर्षर कहुँ पहे ॥  
 बोज बाये वेम रस हिर्ष निमाप हुलास ।  
 रस घौस संपहि रहै, बट रिनु बायहूँ मास ॥२४३॥

अप्यत्र कदा भा युका है कि ऐसे सत्त्वकारी धीर धर्मप्राप्ता पुष्टों के ऊपर जब विपत्ति आती है तो उत्तका कारण प्रारण्य समझना चाहिए । कतिपय के शोच से मलवमर्षणी के विपत्ति में कंतने का कारण कवि ने प्रारण्य ही बताया है—

पराजबध वै धनि बरियारा । ली न डरै काहूँ कर टारा ॥  
 दुख मुक होनहार जो होई । निहि कहुँ बतन रहै होइ लोई ॥  
 मिटै न पराजबध कर धीवू । ज्यों होना र्यों होइ संजोयू ॥



परम पवित्र जिन झूठ न धोता । परासबय बस बन बन डोला ॥  
 मन शर्मत परम मग धीगहा । परासबय कुसती तिन कीगहा ॥  
 करम धतय म्यानी संजोगी । सोऊ परासबय के धोगी ॥  
 परासबय बांधी यह जाया । घातम बीच भयो मिति माया ॥  
 यह सब परासबय कर खला । तेही कीगह तस गुन मेला ॥  
 परासबय मिति मए एक टारे । परासबय हीड है पुनि ग्यारे ॥

परासबय हुत गुन बंध सित धारहि नित जाहि ।

हरए सोऊ बितराइ मन गित रह ताई माहि ॥२४४॥

इसमें कवि ने आत्ममन (जिन धारहि नित जाहि) का कारण प्रारम्भ बताया है, जो भारतीय विचारधारा है। अस्तु परंतु धर्म में धर्म की विजय होती है। कतिपय परासत हुआ धीर मन समर्थनी में विजय प्राप्त करते हुए मेष जीवन यमनिगार गुलपूर्वक व्यतीत किया। इस प्रकार कवि ने धर्म, प्रेम धीर ज्ञान का प्रतिपादन किया है। धर्म से प्रेम (भक्ति) उत्पन्न होता है धीर प्रेम (भक्ति) से ज्ञान। ज्ञान प्राप्त हो जाने पर मोक्ष प्राप्त हो जाता है। पार्वती हिमासय से कहती हैं—

ज्ञानात् संजायते मुक्तिर्भक्तिर्ज्ञानाय कारणम् ।

धम्मति लजायते भक्तिधर्मो यन्नाधिको मतः ।

तस्माद्गुणुर्धुर्धम्मार्थं ममेवं कथमापयेत् ॥१०॥

महा भाष्यत भवती धीतः प्रथम धम्म्याय

धर्म (यन्नादि कम) धीर प्रेम (भक्ति) का वास्तविक धर्म गृहस्थाधम है। ज्ञान के लिये गृहस्थाधम (संसार) त्याग करना पड़ता है। प्रकृति मार्गी बुद्धावस्था में इस मार्ग का प्रवर्तन करते हैं। कवि ने समर्थनी की मूर्ख ही जाने वर मन से भी गृहस्थाधम छड़ाया—

कह मे बचन बस यँठि धगोसे । यह तजि मीत सबार तदोसे ॥

सोम कुँब रोबत सब त्याया । छुडा मोह मीत मन साया ॥

मन तिहि बेह तन सुरत गबाई । प्राण तिनहि में रहा समाई ॥

उपब ज्ञान घतान हिराना । बल बियोग संजोय समाना ॥

मुमिरम भजन बितर सब गयेऊ । बाकी जब सोऊ सब भयेऊ ॥

मुमिरम भजन बेह मित होई । सो तन जिय सो अछत बिछोई ॥

मंकिर ज्यो तन कहँ बड़ जाना । धेतन पुरब धमय पहिचाना ॥

अद्यपि तिहि काया यह ख्यानी । वी बहु रई यद्यपि लीं लानी ॥

आधि धबधि पुरन अब नई । बैही बस्त बिबल तब पई ॥

अद्यपि बिड तन को तबत तोऊ न तब परीत ।

अब बरसे बिड को बरस, तब पार्य परतीत ॥३॥



हुषा काहिहू सो राज समान् । घाज घाइ प्रगटा यहू ताम् ॥  
 जे बन सदा पबितर रहे । ते ताते भुजस महे इह ॥  
 जे तन पुहुप घरे घरताबे । सो काटी तर लोटनि घाब ॥  
 तापी ताप सरे तन करे । जड़ि जड़ि घुरि सीस पर पड़े ॥

पप बाहन बुल को कठक घन घौह रवि धूप ।

पन बाहर बीशेल महे, जता जाइ नल भूप ॥२३४॥

राजघ्न्य राजा नल घालंजन हे । पुष्कर का कल्प जहीवन हे । प्रजा और बन्धनी  
 का बंधन अनुभाव हे । विपाद, बिता घादि संचारी भाव हे ।

[षष्ठा मास]

नल तिहि लोक सीस महे मारा । भूका हार लाई तन घारा ॥  
 पन पन कूक झाह बैइ रोबै । इहिर धार मंजन न बिघीहै ॥  
 मंजन घमिन सपट मय काड़े । घाप जरा घोरहि उर जाहै ॥  
 जम को घर भोकहै जम जयऊ । घब बर सो सराप होइ मयेऊ ॥  
 कत बैरहू तिहि बिन बर होग्यौ । बैइ सराप कत घार न कीग्यौ ॥  
 पर पुनि का बंरी प्रतिपाला । सो लो सहति प्राण क्यों जाला ॥  
 प्रो लो मरे जाकर जिउ सई । मम जिउ ले वै मरन न देई ॥  
 मरन जहौ वै मरन न पावौ । सुमिरन करौ हारती नावौ ॥  
 पाब बरख अथ प्राण बिहना । तन किहि सापि जिवा लौ सुना ॥

ये बिसाप कर कर निके रोबे प्री बिसलाय ।

मुखा जहे कंसि मरे, जो जम न प्राण ले जाम ॥२३॥

बन्धनी की मुरम् घालंजन हे । उसकी पतिभक्ति घादि पुन-स्मरण जहीवन  
 हे । नल का रोदन और बंध निरा अनुभाव हे । निर्बन्ध मोह स्मृति और प्रतापवि  
 संचारी हे ।

अधुमुत्तरस

स्वायी भाव-बिस्मय । घालंजन—धार्मिक और आश्चर्य जनक बस्तु और कार्य—  
 जो देखे ली कइ नल ठाढ़े । नल बिन क्यों नल हूँ जल बाढ़े ॥  
 प्रो पुनि नल ता हिय जो सपाना । जो देखा लो नल के जाना ॥  
 बुबिपे पड़ी सोच जिय करे । बिबि किहि भांति जानि पिउ परे ॥  
 जो जय बुहुँ जमन भर रोडे । पावा पीउ हाथ लौ जोडे ॥  
 एहि समा मरु पीउ जो पावा । लो पावा पुनि हाथ न घावा ॥  
 कौतुक बुछन सना यह पाई । प्री अथ बिनक माहि उठिबाई ॥

×

×

×

—श्री०—२०३

जय नहि निमित्त होइ बडु जाया । तब मिल परमू अक्षित धराया ॥  
 बीन बंधु बडु अंतरजामी । बट प्रीघट सनाम बिसरामी ॥

मूसें पंच बतावन हारे । संकट परें छुड़ावन हारे ॥  
 पुन जानीं जिहि मरु हों माती । जाके पैम रंग उर राती ॥  
 इपा कपटु मोहि बहै मितानुठ । धरहि जो धर तिन पाहि छुड़ावु ॥  
 प्रसरन तरन तरन जब गई । तब प्रकास जानी तिहि गई ॥

[बोहा—२०४

× × ×

सुन प्रकास जानी उर पारो । तब प्रहर धर निरखि निहारी ॥  
 देखें त्रिगुन प्रसंग तिन माहीं । एक पुरख बुझा कोउ माहीं ॥  
 बहै प्रबल राखें बिर पाऊं । प्रीर प्रसर हूँ रहै बलाऊं ॥  
 एक सो पुरख निरखि पहिचाना । मिटा भरम मन निहूर्ब घाना ॥  
 बिगुहेसि कहति यहै सो पीऊ । जिहि लं जापा प्रापन जोऊ ॥  
 गह भेडा पीतम प्रपनावा । लं उर बभाला पहिरावा ॥  
 धरं धर बहु धरी न गई । जाको प्रहै ताहि कै गई ॥

[बोहा—२०५

× × ×

श्री पुनि इग्राविक जे देऊ । इहि बरिष बरित्त नए तऊ ॥

[बोहा—२०६

वास्तविक मन का दिखाई देना प्रीर कई नसों का होना प्रार्थन । मन को बरख करने का एक मात्र प्रवसर स्वर्णबर समा ही होना उदीपन । प्रार्थना करना प्राकाम बापी का होना प्रीर नस को बरन करना धारि रोमीक उपपन्न करन नाम कार्य संभारी । ईकादि वैभताओं को बिस्मय होना प्रदुम्नत रस है ।

### गांतरस

स्वापी माव - निबेंर या दाम । प्रार्थन—प्रतिपत्त संसार की निस्सारता का ज्ञान मा परमात्मा बितन । यह रस बसवनी की मृत्यु के परवान् मन को निबेंर होन पर स्पृशिन होता है—

राज काज सों भयेउ उरासी । प्रह तजि भया बहै बनबानी ॥  
 पुन जो इगुहेन लो लाबा । निज प्रापन निहि बरन सुनावा ॥  
 कहति पुन न प्रापन राम् । प्री जो कछ सब राज समाम् ॥  
 मनकहि बूझि मुनिन ठहरावा । पाट बठि सिर एर परावा ॥  
 मोहि प्रब राज बंदिप्रह मयऊ । राज पाट ली तिल उठ मयऊ ॥  
 राज मंदिर प्रब भय रीब कूपे । साप नूर किनुषा कुल सोहै ॥  
 बाबानत होइ यह कलबारी । हीर बहाइ प्रपिन चिनगारी ॥  
 मनहि कूल गड़ होइ काटे । बिस्तर धन काट गयो चाटे ॥  
 मोहि प्रब प्रसम बहै उर दाता । पै बहु नाब जपन कइ बाला ॥

× × ×

बर सोई मोहि ना बहै मनम जो तन कियो यह ।

मन माता बाला बचो, दाता ताल लो देह ॥६॥

कहू ये बचन, जल बँडि धरौते । यहू तत्रि मीन सवार सरोतें ॥  
 सोग कुटब रोवत सब रयागा । छूटा मोह मीन मन लागा ॥  
 मन तिहि बेइ बेइ तन गुरत गबौई । मान तिनाहु में रहा समझाई ॥  
 उपज मान भगान हिराणा । जल विमोह संजोग समाना ॥

[बोहा—७]

×

×

×

‘मल रमन’ में युद्ध का प्रसंग न होने के कारण वीर रस का अभाव है। परंतु बहुत से लोग ‘दया वीर’ और ‘परम वीर’ को भी वीर रस के पर्यन्त मानत हैं। मल में ये दोनों बातें पाई जाती हैं। इस दृष्टि से जहाँ जहाँ ऐसे प्रसंग आए हैं वहाँ वहाँ यह रस भी मानना चाहिए। भयावह रस के कई अवसर आए हैं जैसे—रमयती के हिसक पगुओं से युद्ध वन में पहुँचना जहाँ सिंह बहाड़ रहा है वीर अंगरी हाथियों द्वारा सारंगबाहों के मारे जाना की घटना का होना परंतु न जाने कबि ने क्यों इन अवसरों पर इस रस का परिपाक नहीं होने दिया। हो सकता है प्रेम साधना मार्ग के पत्रिकों को अमानक का अनुभव न होना वना ही माम कारण हो। यही बात रीर और वीभरत रतों के संबंध में भी समझना चाहिए। साधना वालों को कोप और घृणा से बचा जाता। यहा हास्य रस बहु बैसे ही मध्यकालीन हिंदी कबियों द्वारा उपेक्षित है, इसलिये प्रस्तुत कवि में भी उससे बिसय संबंध नहीं रहा। फिर भी मल रमयती के प्रथम मिसल अवसर पर सखियों के लोभ कृप में इस रस की बोझी सी झलक मिलती है।

### धनकार

धनकारों का भी बड़ा रमणीय विधान किया गया है। अनेक प्रकार के धनकारों की योजना पाई जाती है। उग्रंसा कपक और अतिअपीक्षित विभेद रूप से प्रयुक्त हुए हैं। धनुषाओं के घेर में कवि बहुत नहीं पड़ा। परंतु जहाँ जहाँ आए हैं तो अत्यंत स्वामाधिक रूप में। कुछ धनकारों के उदाहरण दिए जाते हैं—

### अधिक ताडूप्य रूपक

भुईं पर चाँद उधा जनु भाई । जोग मकास बीन्हु बिखराई ॥  
 बेख जोत पुग्यो सति घटा । कत यहू और बंद परगटा ॥

[बोहा—७२]

रमयती के बरब उपमेय को अत यहू और बंद परगटा पर द्वारा उपमानार्थमा से निम्न कहा गया है तथा ‘पुग्यो सतिबटा’ कथन द्वारा यहू उपमान से बड़कर हो जाता है। इसलिये अधिक ताडूप्य है।

### अभेद रूपक

[सावयव एक देश विवर्ति]

भिरजत नैव नैव बुरि घाय । बिरहु सिन्हु हिय सों जल लाए ॥

बदन बंद पट घट पह लियो । तम नित क्यों दिन हिय इमि भयो ॥

बरक साग भकोर भकोरी । प्रंबर भीज चुभा होई घोरी ॥\*

(बोहा—१०८)

बंदेरी में सहेब काह्य के निसने पर बमर्यती रोने लगती है । उसकी प्रभुधारा का बर्षा से रूपक बोधा गया है । नयन मेघ रूप होकर झुड़ धाए ह । हृदय विरह सिंधु है जहाँ से मेघ बल से गए हैं । बदन बर्दमा रूप है प्रीर पट घटा रूप जिसमें बदन कपी बर्दमा विप गया है [ बमर्यती रोते समय मुल को बरक से डक लेती है इसलिये बरक को घटा रूप कहा गया है ] । हृदय कपी दिन रात्रि कपी तम में परिवत हो गया है । प्रभु कपी बर्षा रह रह कर होने सपी है । बर्बला भीग कर घोरी (सुप्पर का डलुबी भाग) रूप हो कूम लगा है । इसमें सब प्रवयवों का व्यर्थों द्वारा कवन किया गया है, परंतु बर्षा उपमान जिस प्रभु प्रभु का आरोप है उस प्रभु का प्रभु द्वारा कवन नहीं किया गया है । केवल प्रप बस से जाना जाता है । इसलिय 'सावयव एक बेश बिबति प्रमेह रूपक' है ।

### माता रूप भिन्न शब्द परंपरित रूपक

बन घातक कहं भा पिउ स्वाती । पिउ बकोर कहं धन सति राती ॥

धन छो मोन पाबा पिउ पानी । पिउ प्रति धन प्रंबुज प्ररघानी ॥

धन कुमुदिनि प्रीतम सति पाबा । पिउ पतंग बन हीप लुभाबा ॥

धन महि कीं पिउ मेह गुमायू । पिउ सारंग कहं धन इन रागू ॥

धन सीपी पाबा पिउ स्वाती । पीउ मूक भोजन धन राती ॥

[बोहा—११२]

बमर्यती में घातक घाति आरोप का कारण नम में स्वाती घाति का आरोप किया जाना है । बमर्यती में सति भीन कमल घाति बहुत से आरोप भिन्न भिन्न शब्दों द्वारा कवन किए गए हैं । ऐसे ही नम में भी किए गए हैं । जैसे-बकोर, पानी प्रति घाति । प्रत्येक 'माता रूप भिन्न शब्द परंपरित रूपक' है । परंपरित रूपक में एक आरोप दूसरे आरोप का कारण बनता है ।

एक सांग रूपक का भी उदाहरण दिया जाता है जो काव्य का भी उत्तम नमूना है—

पहिरे रता और मुहाबा । तिहि प्रकार रवि बिन्दि न घाबा ॥

बिहुर रैन मुक सति होइ ऊबा । रैन कसक भीह मनु बोबा ॥

कुंडल खवन बेखि मन बाका । भनक रहे जानहुं रय बाका ॥

बना जो तीसकुन जत्रियारा । धन भिन निस नलत संघारा ॥

तुंडर निसक सारबी घाबे । तरकर थोकं धलय बिराजे ॥

तोहे दुगन जो धंजन लागे । मानहुं नापि भिगन मुज बागा ॥

\*तुलसीय—बरक मया भकोरि भकोरी । मोर बुइ रैन चुब बस घोरी ॥

हो भे बरर रबी बीरानी । तु तरीम सत नुर अनुरायी ॥

× × ×  
कोरु कहे बड़ो धायानी । पापु धायरा धायुहि धानी ॥  
× × ×

### भाषा

कवि ने न तो आपसी को ठठ धामीन प्रकषी का ही प्रयोग किया है और न रामचरितमानस की संस्कृत मन्त्रित का ही । उसने दोनों के बीच का रास्ता पकड़ा है । उसने महाभारत और पुराण साहित्य का भी पारायण किया वा—

मारुच मे जो कथा बघानी । धारि धंत बानी महुं धानी ॥

बात बात मे अगति बनाई । कथा पुराण मय के दिखराई ॥

सात्पर्य यह कि महाभारत पढ़ने के पश्चात् उसने प्रस्तुत संघ की रचना की । दूसरी बात यह है कि उसने जित ज्ञान का प्रतिपादन किया है वह सूझी न हो भारतीय है जो उसने भारतीय संघों (बर्णभारि) से प्राप्त किया । इस दृष्टि से यह संघ का विद्वान सिद्ध होता है । इसलिये 'नल रमन' में उपर्युक्त संघों की भाषा का संतुष्टि रूप दृष्टिकोण होता है । परंतु कवि ने ऐसी भाषा जानबूझकर प्रयुक्त नहीं की ब इसका निर्माण उसकी योग्यता के अनुसार स्वतः ही हो गया । वह प्रतिभाशाली कवि इसलिये उसकी भाषा का माधुर्य गुण लंपन, भाव पूर्ण, सुहाबरेदार एक रस और प्रकाशपूर्ण होना स्वाभाविक है । कहीं कहीं जो अंतर दिखाई देता है वह उसके ज्ञान प्रदर्शन । [जिसे वह 'गुप्तार्थ' कहता है] विधेय अभिलाषा के कारण है । वही भाषा काव्य बिही होकर बर्णन भाषा की भाषा मात्र होकर रह जाती है । इसके कुछ उदाहरण दिए जाते हैं—

पिउ बोसा प्यारी तुम मोसों । निज मन मरम कहीं हों तोसों ॥

मे अबसों तो महुं जिउ डारा । तबसों भाव घरी न बितारा ॥

धिन धिन सुरत लैन लय तोरी । मन तु ही मे राखी घोरी ॥

बंस मिरप नाद मन जाई । धी धनि कर्वेन बास ज्यों पार्थ ॥

बासक स्वाति बूब के प्रासा । निज दिन बित ई रई प्रकासा ॥

त्यों तोतों मे लगन लमाई । गुडी डोर ज्यों सुरत दिमाई ॥

निज दिन सोच रहा मोहि तोरा । सुरत सूत धिन जोर न तोरा ॥

रुसि प्रबंड लपी मन मोरे । धी जिउ मीर रई तनु तोरे ॥

हो अगनी सत भाव कहि, भव बूझत हों ठोहि ।

तें धों येम बैस सुखी, किमि बीग्यो मन मोहि ॥२१८॥

जो तुम पुनि पुखी मो पाही । बिनी सुनी सरजन ई नहि ॥

मे अब सों पिउ सों जिउ भावा । तब ही सों प्रापा बिसरवा ॥

तन प्रापन सो बिरापन बीग्यो । जिउ नै काडि पीउ महुं बीग्यो ॥

जिउ पुनि अब पिउ सों मिलि मयक । जिउ के डीर बीउ पिउ मयक ॥

जिउ पिउ अन्तर भेद भुजाना । मन निज बीउ पीउ कर बना ॥

रोमाहि रोम रहा रम पीऊ । बीउ पीउ भा हौं निरजीऊ ॥  
 हुता जो मन में में भनिमाना । सो बनि प्रीतम माहि समाना ॥  
 मन पुनि पीउ मिला व्यों बीऊ । सो सब कहन लागि हौं पीऊ ॥  
 मन बिड भेटि पीउ भा सही । हौं हौं वहुँ सो मान न रही ॥

बैतें बिनकर किरन मिलि तम घसत होइ बाइ ।

तैतें प्रेम प्रकास महें हौं हौं पर्यै हिराइ ॥२२६॥

ये प्रकार स्वयंवर हो जाने पर नल इमवंती के मिलन प्रवृत्त के हुं से एक दूसरे अपने-अपने प्रेम का वर्णन करते हैं । नल के प्रेम वर्णन में तो कबित्व है, परंतु इमवंती अपने प्रेम का जिस प्रकार वर्णन करती है उसमें काव्य न होकर बेदास्त बीत रहा है । तमें कवि का अनुत्तमं सुप्तार्थ न रहकर प्रकृतार्थ हो गया है । उनमें बीउ (जीव) घीर (बीब परमात्मा) का ही विषय प्रयान होकर बात पड़ा है । बीउ (जीव) पीउ (बीब) में मिलकर एक हो गया है घीर 'ही' जो भनिमान है वह मल्ट हो गया है । इस प्रकार बीउ (बीब) घीर पीउ (परमात्मा) की प्रयत्नता सिद्ध की गई है । प्यान देने की बात है कि नल के वर्णन में 'हौं' 'तुं' और 'तै'—उत्तम घीर मध्यम पुष्य दोनों हैं । परंतु इमवंती के प्रेम वर्णन में प्रथम इमवंती के 'तुम' को छोड़कर जिसका वास्तविक वर्णन से कोई संबंध नहीं उत्तम पुष्य के 'हौं' के प्रतिरिक्त मध्यम पुष्यवाचक टाठों का प्रभाव है । प्राग चलकर यह 'हौं' भी 'प्रेम प्रकास' में बिलीन हो जाता है । वास्तविक बात यह है कि ज्ञान प्रनेकता को मिटा कर एक (परमात्मा) को सिद्ध करता है घीर काव्य एक की प्रनेक व्यंजना करता है । जहाँ तक प्रनेकता में एक की देखने (एक की व्यंजना करने) का प्रयत्न है वहाँ तक तो काव्य ज्ञान का साथ देता है घीर जहाँ ज्ञान ने प्रनेकता को मिटाना ही धारंम किया तो वहाँ काव्य ज्ञान का साथ छोड़ देता है । यही यही बात है । इमवंती तर्ज एसी ही कहती हो यह बात नहीं है । बरत घट्टरथ तो बिरल है । वह 'हौं' 'तै', 'तुं' का प्रयोग बराबर करती है घीर जहाँ भावा मरस काव्य की भावा है जैसे—

कहति कंत यो करै न कोई । व्यों तं हौं बन माहि बिछोई ॥  
 संघ मिले अंतर क डारा । मिले माँझ होइ गपति निरारा ॥  
 होतति डूर न होत परेजा । परं मिले बिछुरत का सजा ॥  
 इहै मिलन न सत हौं मारी । बुरी मिली तै कीह निपारी ॥  
 कवटी मुना मिल मई म्यारा । सो प्रीतम तु नैन निहारा ॥  
 किहि रिह सो मुई सैन बनाई । परं जाइ सुन नीर मुबाई ॥  
 सुख मुबाइ पुनि कीह बिछोऊ । ऐली करे मिले महुँ कोऊ ॥  
 जो जानौं तु कपट सोबावति । मोहि मुबाइ प्रापा बिछरावति ॥  
 तो हौं किहि कारण तब सोऊँ । तो सो रतन मोइ नहि कोऊँ ॥

कंठ लपाइ मुबाइ संघ, गांठ परी बन माहि ।

तो बीनी प्रबहुँ मिली गांठ घीरि ही नाहि ॥३३६॥



यहाँ ज्ञान की कोई ताक-झाक नहीं है। परंतु जहाँ ज्ञान अनेक में एक है परमात्मा का दर्शन करता है वैसे कि पहले कहा जा चुका है, वहाँ भी भाषा कवित को मिले हुए है, यथा—

हो भै भबंर भबी बेंरापी । तू सरोज सुख सर धनुरापी ॥  
हो जातर पिउ पिउ रट मोरे । तू स्वाती भाये महि तोरे ॥  
मो मन बित चकोर बिन बैते । तू तो बंद तोरे महि लेते ॥  
मो गति ज्यों मछरी बिन पानी । तू अपने पानी धमिमानी ॥

यहाँ श्रृंगार्य के अनुसार ही जीव 'तू परमात्मा को सरोज, स्वाती, बंद और पानी आदि अनेक बस्तुओं में डेर रहा है। इतलिये भाषा भावमय हो गई है। यहाँ एक बात विशेष रूप से दृष्टि गोचर होती है। वह यह कि यहाँ मन के साथ बित भी आया है। भारतीय अइंती मन और बित को अलग-अलग मानते हैं इतलिये कवि पर भारतीय ग्रहण ज्ञान का पूर्ण प्रभाव होने का यह भी एक प्रमाण है। अस्तु, भाषा के संबंध में एक बात यह है कि वह अक्षरी का सामान्यिक रूप है। अक्षरों से यह मुक्त है। परंतु साहित्यिक कवि का नितांत स्वयं नहीं किया है। ऐसे शब्द भी उसमें प्रयुक्त हुए हैं जिनका प्रयोग साहित्य में बहुत पुराने समय से होता आ रहा है जैसे—धाहि (अपेक्षाहत) और बाज (छोड़ कर या बिना) शब्द। परंतु ये शब्द अधिक बार प्रयुक्त नहीं हुए हैं। एक दो स्वतः ऐसे भी हैं जहाँ कवि विदेशीयता लाया है जैसे—

संभ इहां जो रक्त बड़ाबा । बड़ा मजनु के मंहि आबा ॥

और—

मोलाना मिजान जिन्हु ताने । परं जिनाबहि पड़हि बुबाए ॥  
इससे वहाँ भाषा में अस्वामाधिकता आ गई है।

### छंद विधान

पुरदास का छंद विधान सीधा साधा है। प्रायः सूक्तियों की तरह उन्होंने भी बोहे जीपाई छंदों में रचना की है। जीपाइयों के दो भेद किए हैं। एक में सोमह मात्राएँ और दूसरे में पंजह मात्राएँ रखी हैं। बोहे में विशेष परिवर्तन नहीं पाया जाता पर कहीं-कहीं मात्राएँ घट बढ़ अवश्य हो गई हैं।

### सूक्तियाँ

पुरदास की सूक्तियों से भी बड़ा प्रेम है। ऐसे बहुत कम बोहे हैं जिनमें कोई उक्ति या तो सूक्ति के रूप में अथवा भाव व्यंजना के रूप में न आई हो। कुछ उदाहरण दिए जाते हैं। मूल विषय की सूक्ति देखिए :—

स्वाक हुता जो बल बसा, कीन समेटे गाइ ।

ऐत कूट सब बाहिरे, ठहां मेत डर जाइ ॥२७५॥

कुछ धम्य तप्य विपयक सुस्तिपां भी हो जाती हैं—

घस्तुति निरा पत घपत सबै कास पर होइ ।  
 उबत मुर प्रपनी नबै, प्रपबत नबै न कोइ ॥२३३॥  
 × × ×  
 तीसी चात बतै बने, लंस कात कर चात ।  
 कात घ्यास न कटाइवै, घाप कात्रियै कात ॥२३०॥  
 × × ×  
 हौं मंबोड के रंग बर्यो, धौंदि मिली लोहि संग ।  
 दू ततकात उघड़ बला, जैसे रंग पतग ॥२३१॥  
 × × ×  
 भीत बिछुर जो बीजिय का जोयो तैहि दाब ।  
 सभन बिघोह न कोत्रिये, बीब बाब लो जाब ॥२३३॥  
 × × ×  
 जैसे मुल में नेक दुख बहो बहुत दुल देइ ।  
 तैसे दुख में नरु मुख बहुत मान मन सइ ॥२३४॥

एक उदाहरण भाव व्यंजना का भी दिया जाता है—

पय बाहन बुल को कटक, धत्र धाँह रवि धूप ।  
 बन चादर बीडोस महँ बला जाइ नस धूप ॥२३४॥

मूहाबरेदार भाषा लिखने में तो कवि बमोड़ है। यहाँ केवल एक उदाहरण दिया जाता है जिसमें 'बला लो बला' मुहाबरा प्रयुक्त हुआ है—

कलिभुग कियो कठोर मन तोर मोह को जोर ।  
 बला लो बला उदास हूँ मुक्त न कियो तिहि घोर ॥२३६॥

जैसे सारे बोहे की ही भाषा मुहाबरेदार है।

### दोष

'मल वसन' में दो त्रुटियाँ बिगय रूप से सामने आती हैं। एक तो अप्यात्म वग का आशयकता में अधिक्त प्रतिपादन करना है जिससे यह कहीं-कहीं कोरा वचनसारत्र का रूप धारण कर जाता है। दूसरा वदमावत्र का अनुकरण है जिसके अनुसार कामनासब में उल्लिखित पतिनी बिबनी इन्दिनी और हुस्तिनी नामक चार प्रकार की स्त्रियों का तथा सोलह शृंगार और बारह घामरलों के नामों का बचन करना है जो काव्य की दृष्टि से कोई महत्व नहीं रखते। राम रावण जैसे दायरों के प्रयोग भी आपसी के अनुकरण कर हुए हैं। एक स्थान पर तो इनके प्रयोग बहुत बृद्ध बन पड़े हैं जैसे—

पन लीना विज राम मनु बिछुर भयी लंजोग ।  
 बोरु धार्मदित वपन रावन हुना विधोय ॥३४६॥

प्रेम<sup>१</sup> बिन मन में पुनि धारि । बही प्रगति यह बिपो<sup>२</sup> जगई ॥  
 प्रेम<sup>३</sup> उदास पीम<sup>४</sup> सो बारुं । बार बिरह बाठी<sup>५</sup> पूत डारुं ॥  
 प्रगट<sup>६</sup> कहुं पबासा जग जाने । जो प्रमी<sup>७</sup> मुनि के सुख माने ॥  
 प्रेम बीज से पीष भगाऊं । रकत सीब जुनवारि बनाऊं ॥  
 धनबन<sup>८</sup> बरत पुहुप उपजाऊं । धमि पैमी<sup>९</sup> जन तिगुहि<sup>१०</sup> रिभाऊं ॥  
 एहि<sup>११</sup> बिधि<sup>१२</sup> प्रेम खान<sup>१३</sup> हिम<sup>१४</sup> पामुं । धबिप<sup>१५</sup> धमोस योस मग ठामुं ॥  
 बिरह बध बानी मुख धामुं । धानि प्रेम सौं प्रेम बखामुं ॥<sup>१६</sup>  
 धी<sup>१७</sup> उर<sup>१८</sup> घाटी मर<sup>१९</sup> प्रेम पुधाऊं । नल के कथा सु मन के साऊं ॥  
 ऐसो प्रेम मयी मधु डारी<sup>२०</sup> । बासी दिपा<sup>२१</sup> प्रेम मग बारी ॥  
 जा उन सागि जान परि धारि । धन जानत की दुख न होई ॥<sup>२२</sup>  
 जिगुहे बाठ जाव जगारै । जो धन नई सो उन कहि होइ पारै ॥

बोहा—पैमी पीजनहार<sup>२३</sup> जे, पावत लिन छकि जाहि ।

एक विधासा फिरि<sup>२४</sup> पिब डूमर<sup>२५</sup> बेहि उंसाहि ॥२६॥

एक संहस सतसठ सन धहा । संबत छतरहु से बीरहा ॥  
 के धरम ठव कथा बखानो । कीगुही<sup>१</sup> प्रगट प्रेम निबि<sup>२</sup> बानी ॥  
 मन धामन<sup>३</sup> का<sup>४</sup> प्रेम बखाना । मया<sup>५</sup> मिनाप सोपंबर ठाना ॥  
 कलभुव नल सौं जुबा खेनावा । धन हुराई<sup>६</sup> धनबास खेनावा ॥  
 धी बम मै बिछुरे मर नारी । पुनि मिनाप हूँ मए एक ठारी ॥  
 जुबा खोल जीटा पुनि राव । धाई पुरा सब बई समानु ॥  
 पारव मै जो कथा बखानी । धारि धरत बानी महुं धानी ॥  
 बाठ बाठ मै जुगति बनारै । कथा पुरान मय<sup>८</sup> के<sup>९</sup> दिखारै ॥  
 बहुठ ठौर निब धरव दुपवा । सब<sup>१०</sup> नाहू पै<sup>११</sup> बाइ न पावा ॥

बोहा—बहुठ लोव बोहित बडे बधि<sup>१२</sup> पर धारै जाहि ।

मुकता<sup>१३</sup> पारै मरजिदा बधि<sup>१४</sup> लोबै छा माहि ॥२७॥

बोहा २६-१—बीस (कां) । २—घोड़ (कां) । ३—प्रेम (कां) । ४—  
 पवन (कां) । ५—पानी (कां) । ६—प्रगट (स) । ७—जो प्रसाव (स) । ८—  
 पैमी छिठ (स) । ९—धानी (स) । १०—प्रमी (कां) । ११—तिहि (कां) ।  
 १२—इहि (कां) । १३—मिस (कां) । १४—कथा (कां) । १५—बि  
 (कां) । १६—प्रबध (स) । १७—बोमु (स) । १८—ऊ (कां) । १९—  
 (स की प्रति में नहीं है) । २०—मधि (कां) । २१—घाटी (कां) । २२—ब  
 (स) । २३—पीजनहार (कां) । २४—घर (कां) । २५—बोड बहुदि धमबा  
 (स) ।

बो २७-१—केजी (कां) । २—मुनि (कां) । ३—धामनि (कां) ।  
 ४—करि (कां) । ५—मयो (कां) । ६—हेराइ (सं) । ७—महुं (स) ।  
 ८—धी (स) । ९—की (स) । १०—जा (कां) । ११—पर (कां) । १२—  
 बध पुरानोहि बानु (सं) । १३—मुकत सो पावइ मरजिदा (सं) । १४—जो पत  
 (कां) ।

के पारंभ कथा धर मांड<sup>१</sup> । जसी<sup>२</sup> सुनो सो<sup>३</sup> बरनि सुनाई ॥  
 कहत<sup>४</sup> कि प्रहा छत्रपति राजा । ऊँचे पाट<sup>५</sup> राज जिहि<sup>६</sup> धारा<sup>७</sup> ॥  
 राजा नम प्रगटव जग मांड<sup>८</sup> । मगर उजैन राज कर ठांड<sup>९</sup> ॥  
 तिहि<sup>१०</sup> मडल तब घोर न कोई । छत्र पाट<sup>११</sup> पति<sup>१२</sup> एकी सोई<sup>१३</sup> ॥  
 राजा राज सीस सब नाई । बचन मानकर सीस बजाई ॥  
 जे बड़<sup>१४</sup> पातो डरुह मुराही । परजहि<sup>१५</sup> करै हपरहि<sup>१६</sup> धाही ॥  
 मूर समान तेम जप माना<sup>१७</sup> । उपना<sup>१८</sup> सीतल<sup>१९</sup> डंडु<sup>२०</sup> समाना ॥  
 सीसा सीस रूप रस बारी<sup>२१</sup> । राज करै सत परम बिचारै ॥  
 परम बिचार न छाई काऊ । रासत<sup>२२</sup> परम सीस किन जाऊ ॥

बोहा—बहो<sup>२३</sup> परम नियि राजा पंडित सब पुन पुर ।

तेम दमा कर सर बर<sup>२४</sup> खड्ग<sup>२५</sup> दान मति मूर ॥२८॥

पो<sup>२६</sup> धति कर्मवत उजियारा । मानी काम नीन्हु धरवाप ॥  
 जिह<sup>२७</sup> मूल रूप कही<sup>२८</sup> तिहि नोका । नल मुल रूप रूपमुल पीका<sup>२९</sup> ॥  
 करै न कोउ<sup>३०</sup> रूप सरि ताउ<sup>३१</sup> । बट<sup>३२</sup> बन बट सिबि रीन्हु बिपारै ॥  
 मूर नावि बरनी<sup>३३</sup> मूल जोती । पी<sup>३४</sup> मूख मुल जोति न थोती<sup>३५</sup> ॥  
 नैनहि<sup>३६</sup> जोति जरे रवि देखै । सीतल होहि<sup>३७</sup> हमड्डे तब पेसै ॥  
 मूख देखि सोमाइ न कोई । इन्हु<sup>३८</sup> देखै सो बरसन<sup>३९</sup> हाई ॥<sup>४०</sup>  
 जो पति<sup>४१</sup> नैनम की रवि ताके<sup>४२</sup> । सो पति<sup>४३</sup> छिन<sup>४४</sup> ताके<sup>४५</sup> मुल पाके<sup>४६</sup> ॥  
 पुरन नादि जाके<sup>४७</sup> बित परा । फिरि भरि<sup>४८</sup> बनम न बित सो टप ॥  
 बड़ा रूप जग हीय<sup>४९</sup> समाना । जिन्हु देखा सो देखि हिपना ॥

बोहा—जे<sup>५०</sup> रजबारे धन बरे मुनि<sup>५१</sup> सोमा बिराम ॥

धनन बरन नम बरन समय बरन सगी<sup>५२</sup> होइ<sup>५३</sup> प्राग ॥२९॥

बो० २८—१—कानू (स०) । २—जैसे सुने (स०) । ३—सुबर्ण (का०) ।

४—कथा कि (का०) । ५—पाठ (स०) । ६—जिहू (स०) । ७—प्रहा (स०) ।

\* यह चौगई का० प्रति में नहीं है । ० यह चौगई स० प्रति में नहीं है ।

८—बानो (का०) । ९—बानो (का०) । १०—तिन्हु (स०) । ११—पति (स०) । १२—तब (का०) । १३—होई (का०) । १४—जे बरमारु डरुह पड़ाही (स०) । १५—परजे (का०) । १६—हपर पुनि (का०) । १७—जाना (का०) । १८—उपमा (स०) । १९—सिबल (का०) । २०—मंड (स०) । २१—मारै (स०) । २२—रासत (स०) । २३—बुद्धि (का०) । २४—बर सबर (स०) । २५—दान वरण (स०) ।

बो० २९—१—ऊ (स०) । २—जिहि (का०) । ३—कीन्हु (का०) । ४—तिहि (का०) । ५—सीसा (स०) । ६—कोई (स०) । ७—बाट (स०) । ८—सत विन तट (स०) । ९—बरनै (स०) । १०—सर (का०) । ११—ऊतो (स०) । १२—तनही (का०) । १३—होहू मसमपति (स०) । १४—तिहि (का०) । १५—दरसी (का०) । १६—पठि (स०) । १७—देखै (स०) । १८—गत (स०) । १९—इन (का०) । २०—पाक (का०) । २१—ताके (का०) । \* यह चौगई का० प्रति में पाठकी है । २२—ताके (का०) । २३—फिरि (स०) । २४—हीये (का०) । २५—जे उजियारा मुनि धमन (का०) । २६—विन सोमा बराम (का०) । २७—सपी (का०) । २८—है (का०) । २९—हेम—हिम बरक परमावत २११

पेमी पेम पंय पम राउं । अब उह पेम बचग मुस भाउं ॥  
 पेम विपा वेरी बिहि बरा । उह पतंग होइ जाई परा ॥  
 असै जो बहु पम रम वाता । गुन विन पोर होइ विन राता ॥  
 सोमी बाठ जा मम मे भाबे । फिर फिर बारंबार नहाव ॥  
 मुनि पिछती पमिन के कथा । ताहि सुने एक होइ प्रवस्था ॥  
 झूरे म्भर एत पुनि करे । बिकस होइ तर भुंइ पुनि परे ॥  
 बिचमान पेमी हुइ जाई । कथा पेम हुइ हिये समाई ॥  
 राम रंग सो अपिक विपारु । मिस दिग मून जरचा म्योहारु ॥  
 एक मुनी भाबहि एक जाही । एक सेबा महुं रई सदाही ॥  
 उ भातम विन पेम गुन मूमर । मर न जी लय धमर न मूमर ॥

बोहा—पंडित कविता बतवहा कावत गनी धनेक ।

सवा समा जरचा करे धरर धय बिरक ॥३०॥

एक दिन समा बैठ हुत राजा । मुनी जनन के पूरे समाजा ॥  
 संवति समा पंडित सब भाए । धायन मंत्ररप बहुत बोलाए ॥  
 ठेठ सब सेबा महुं बेंते । श्री नूतन ( ? नूतन ) धाए पुनि केंते ॥  
 सब गुनिये धायन मून काहा । भइ एत मवन समा एत बाहा ॥  
 तिन्ह महुं पेम बाठ बसि परी । बसि के जाइ रूप पर बरी ॥  
 बहु कठ रूप होइ जजियारी । सोरह कलां उपरन गारी ॥  
 सबै कहा बहु रूप बिसेपा । विंगल दीप फही बिह देबा ॥  
 छन्द दीप महुं धोर न पूजा । विपस दीप रूप धरि पूजा ॥  
 मोहि दीप महुं पदमिति होई । संतहि प्रबली मुनी न कोई ॥

बोहा—श्री पुनि कहु धंतर नहीं, राक राय का मूप ।

बर पर धबला पदमिनी सो पुनि रूप धनूप ॥३१॥

बोहा ३ - १—मन ( घ ) । २—बिह ( घ ) । ३—ठिहि ( का० ) । ४—बउ  
 ( घ ) । ५—पेर ( का ) । ६—नूतन ( का ) । ७—मिस बिससे ( घ ) ।  
 ८—प्रेमहि ( का ) । ९—ताह पर इक होइ ( का ) । १०—भाबे म्भे सवन ( घ ) ।  
 ११—उरकन एन ( घ ) । १२—रौइ ( घ ) । १३—जीम मे जाइ ( घ ) । १४—बहुत  
 ( का ) । १५—भाबे ( का ) । १६—सेद ( का० ) । १७—मे ( का ) । १८—म्यह  
 बीपाई का प्रति में नहीं है । १९—गीता निठ कथा ( का ) । २०—याइन ( का ) ।  
 २१—धनेक ( घ ) ।

बोहा० ३१-१—बैठियत ( घ ) । २—पूरी ( का० ) । ३—संगन ( घ० ) ।  
 ४—सबै ( का ) । ५—एठी ( घ० ) । ६—मे बिते ( का ) । ७—किते ( का ) ।  
 ८—मुनीपन ( का० ) । ९—विहि रस ( का ) । १०—बसि पुनि ( का ) । ११—श्री  
 किति ( का ) । १२—सोरह किरण संपूर्ण ( का ) । १३—सबहि कहा कि ( का० ) ।  
 १४—संगल ( घ ) । १५—कही ( का० ) । १६—मे ( का० ) । १७—उरकन ( घ ) ।  
 १८—रस ( का ) । १९—उन्हाहि ( घ० ) । २०—पदमन जो होइ ( का० ) । २१—  
 दितिनी ( का० ) । २२—एन ( का ) ।

माटिन एक घनूप<sup>१</sup> सुहारि । मायन बनुर घपूरक घाई ॥  
 तिन<sup>२</sup> उडि विनो<sup>३</sup> कीन्ह मिर<sup>४</sup> भागै । बोनी बचन पैम रख पागै ॥  
 महाघर निचरै यह बाता । मदि न जाइ बातु निज बाता ॥  
 सिंगल दीप हारि परमिनी । घोर दीप<sup>५</sup> उपजत नहि सुनी ॥  
 पै करता जो सिरबन हाय । बाका<sup>६</sup> गति भवि घपरपाय ॥  
 जो सिरबा चाई बहु<sup>७</sup> साई । मिरबै मूकता ठाल ठसाई ॥  
 तिन करतार एक परमिनी । जिन घंगन<sup>८</sup> बरलत<sup>९</sup> कवि मुनी ॥  
 बंबु दीप माहं उपजाई । मुनी न कही<sup>१०</sup> देखि हीं घाई ॥  
 प्रथम महुं<sup>११</sup> मुनि सांभ न जानी । अब सो छवि<sup>१२</sup> परनी सब मानी ॥

बोहा—विषयमान घरहुँ सो बहि कया बचिछत माहि ।  
 बर संभोग पै घानु सौं घोर बरै पुनि माहि ॥३२॥

नगर एक कुंडनपुर नाउँ । बपठ<sup>१</sup> मांभ<sup>२</sup> उपमा विहि<sup>३</sup> साउँ ॥  
 महाघर मै एही<sup>४</sup> मेघा । बंबु दीप सजप<sup>५</sup> छिरि देला ॥  
 बेस बेस की<sup>६</sup> गति हीं जानी । नपर नपर की रूप बखानी ॥  
 पै जस बधु बहु नपर सुहावा । दूजा घोर दिदिट नहि घावा ॥  
 जिह<sup>७</sup> सोभा बंधुठ पखाना । कही<sup>८</sup> नगर एही<sup>९</sup> जनमाना ॥  
 दचिर<sup>१०</sup> ठौर रबनीक<sup>११</sup> बिसेयी<sup>१२</sup> । नहै<sup>१३</sup> न बनत बने कज देयी ॥  
 भीममेन जिह<sup>१४</sup> नगर नरेयु । सो राजा बहु ठाकर देयु ॥  
 छत्रघार जिहि<sup>१५</sup> मंडल सोई । ता<sup>१६</sup> सरबर कर घोर न कोई ॥  
 ठाके घर उपजी सो<sup>१७</sup> बायी । विषया परमिदि कै<sup>१८</sup> पौठारी ॥

बोहा—घो पुनि ठाके जगन कै कया कही<sup>१९</sup> विस्तार ।  
 सिद्ध<sup>२०</sup> पुत्रय कै बचन सौं मा<sup>२१</sup> ठाकर भौठार ॥३३॥

दाहा० ३२—१—मरुप (का०) । २—तिह उप (स०) । ३—विनु (का०) ।  
 ४—मुर (स ) । ५—बातननिजु भागा (का०) । ६—देस (म०) । ७—ठाकी (का०) ।  
 ८—सो (का०) । ९—भाग (का०) । १०—बरनै (का०) । ११—बहुं (स०) ।  
 १२—महुं (का०) । १३—माटिन बेकी (का०) । १४—परी बिन माहि (का०) ।

बोहा० ३३—१—जग (स०) । २—प्रसिष्ट (स०) । ३—दिन (स०) । ४—  
 लो रहू देगा (स०) । ५—मरु (का ) । ६—कै (स ) । ७—घनूपा (म०) ।  
 ८—दियात (म ) । ९—जिह (स०) । १०—बहु (का ) । ११—तिहहीं (म०) ।  
 १२—जनमाना (म०) । १३—उपर (का०) । १४—घानक (का०) । १५—बसेगी  
 (का०) । १६—नहै बन बने गति बिन देयी (का०) । १७—तिन (स०) । १८—  
 तिह (स०) । १९—ठाकर बड कहु (स०) । २०—बहु (स०) । २१—को (म०) ।  
 २२—बडी (का०) । २३—महा (का०) । २४—मया (स०) ।

पशुमिति चाहि<sup>१</sup> बाइ एक करा । कर धंनुरिहि प्रमूत<sup>२</sup> रस मरा ।  
 जो पठार मिरतन मूख पामहि<sup>३</sup> । बी<sup>४</sup> उठि ठाङ्ग हाइ पतकासहि<sup>५</sup> ॥  
 जनु<sup>६</sup> बिधि धमी धाप कर डारी<sup>७</sup> । के न एकै सरि दूसर नारी ॥  
 एक पदमिति उर<sup>८</sup> धंजित भरी । पौ<sup>९</sup> किहि<sup>१०</sup> जोग बर<sup>११</sup> भवतरी<sup>१२</sup> ॥  
 महाराज मुख जोति निहार<sup>१३</sup> । रहि न बाइ<sup>१४</sup> देपत बनि भाई ॥  
 जनु<sup>१५</sup> प्रसीज पर्यो छति ऊवा । तासो<sup>१६</sup> अंध कति कर दूवा<sup>१७</sup> ॥  
 यह भवरज कि<sup>१८</sup> बहु पशुमिती । महाराज प्रबली महि सुनी ॥  
 पशु<sup>१९</sup> कंसस तिहूँ पुर नामा । जग मा<sup>२०</sup> भौर भई<sup>२१</sup> तिहि<sup>२२</sup> घाटा ॥  
 सुनि<sup>२३</sup> सोमा सब जगत सीमाता । धी<sup>२४</sup> काके कर बई निवाता ॥

बोहा—जगत मरजिमा वेम बधि<sup>२३</sup> मुक्ताहम<sup>२४</sup> सो तीय ।

धी<sup>२४</sup> को पाने ल<sup>२५</sup> तिर को बूई<sup>२६</sup> के पीय<sup>२७</sup> ॥३४॥

मुन धन<sup>१</sup> मुख सवि जोत धंजोरा । राजा के<sup>२</sup> मन भयो<sup>३</sup> बकोट ॥  
 कंसस बास मनुकर जनु पाई । भरवराह<sup>४</sup> बाइ उठि जाई ॥  
 मन तिहि<sup>५</sup> कथा सुनत<sup>६</sup> दिन सोमा । गाहक रूप जोप सी सोमा ॥  
 कह भाटिन बहु नगर गुदाबा । ठी बच<sup>७</sup> में जो धरिष्ठ बठाबा ॥  
 कौन रूप बहु नगर बिसेखा । जो तै धंमूत<sup>८</sup> काति जय देखा ॥  
 कैस<sup>९</sup> ठौर कैसा<sup>१०</sup> प्रस्थानु । कर मोती निज नगर बसानु ॥  
 धी<sup>११</sup> बहु धीमसेन जो राजा । कम मनुक्य कथ राज समाना ॥  
 ताके घर बु कही तै नारी । रूप सरूप पदमिती नारी ॥  
 ताकी जगम कथा कह कैस । बस<sup>१२</sup> तै सुनी बरनि<sup>१३</sup> निज तैस ॥

बोहा—जोप बैकि भाटिन पशुर जोस उठी कहकाइ ।

धर<sup>१४</sup> हौं नगर कथा कही<sup>१५</sup> मुनो<sup>१६</sup> राज बितसाइ ॥३५॥

बोहा ३४-१—बाह ( घ ) । २—धंनुरह ( घ ) । ३—पाक ( घ० ) ।  
 ४—जिन ( घ ) । ५—पतकाम ( घ ) । ६—जिन ( घ ) । ७—बरी ( का ) ।  
 ८—धो ( का ) । ९—जुन ( घ० ) । १०—कह ( घ ) । ११—बाइ ( घ ) ।  
 १२—उठर ( घ० ) । १३—जाठ ( घ० ) । १४—जगु ( घ ) । १५—तामो ( घ० ) ।  
 १६—दूवा ( का ) । १७—कै ( का ) । १८—भया ( घ ) । १९—मुई ( घ ) ।  
 २०—तिहूँ ( घ ) । २१—सुनि ( का ) । २२—बहु ( घ ) । २३—बिठ ( घ० ) ।  
 बधि—समुद्र । २४—मुक्ताहम सो पीय ( का ) । २५—बूई ( घ० ) । २६—तैठर ( घ ) ।  
 २७—बूई ( घ० ) । २८—बीब ( का ) ।

बोहा ३५-१—जुन ( का० ) । २—का ( का ) । ३—धया ( घ ) । ४—धवर  
 राह ( का ) । ५—तिहूँ ( घ ) । ६—सुनै कहि ( का० ) । ७—बु जगतहि मान्य ( का ) ।  
 ८—साब कहु बिच बिधि तै ( का० ) । ९—कैस ( घ० ) । १०—कैस ( घ० ) ।  
 ११—धीब ( का ) । १२—बिच ( का० ) । १३—बर्न ( का ) । १४—बरनु  
 ( का ) । १५—कह ( का ) । मुनू ( घ ) ।

जो बहु नमर नियर<sup>१</sup> कै घाई । पुहुमि<sup>२</sup> पेम मय देह<sup>३</sup> बिछाई ॥  
 भस कछु भरमबंत भस्थानु । सबाहि<sup>४</sup> जाति उपजे हर<sup>५</sup> ध्यान ॥  
 कहां बु सिस्ति बिस्ति में घाय । छोई अनु उपदेव बताने ॥<sup>६</sup>  
माने<sup>७</sup> बिरिछ नगर बहु पासा । जनु<sup>८</sup> पेमी अन जगत उदासा ॥  
पिय<sup>९</sup> कै पेम गड़े<sup>१०</sup> होइ गाड़े । तिगह ही<sup>११</sup> ध्यान एक पग ठाढ ॥  
 ज्यों ज्यों पेम अगिन तन जाग । कै पतकार ठूठ कर डारै ॥  
 त्यों त्यों होहि<sup>१२</sup> पेम मवमाते । काड़े पात अगिन रंग राते ॥  
 जो पुनि बरै बहुल<sup>१३</sup> तन मरै<sup>१४</sup> । डार डार फुलगा फुल<sup>१५</sup> परै ॥  
 पाकै पाकि पाकि<sup>१६</sup> छय गिरै<sup>१७</sup> । तऊ<sup>१८</sup> न पेम सहारा सौं टरै ॥  
 सकल एक पाणिप को बहै । पर काबे निठ ऊने रहै ० ॥

दोहा—से तबबर मनु<sup>१९</sup> इमि कहे ते बिरसे<sup>२०</sup> जग माहि<sup>२१</sup> ।  
 सीठ मूप प्रापुम<sup>२२</sup> सहे कर शीर पर<sup>२३</sup> छाहि ॥१६॥

दोहा १६-१-मेरभा (का०) । २-मीम (स०) । ३-देहि (का०) । ४-  
 सेबत जात (स०) । ५-हरि (का०) । ६-मागे या बिरिछ (स०) । ७-जानू पेमी  
 जगत उदासा (का०) । ८-मुमुके (स०) । ९-बरे (का०) । १०-सैहूँ (का०) ।  
 ११-होहँ (स०) । १२-फूल (का०) । १३-कर (का०) । १४-कर (का०) ।  
 १५-माग (स०) । १६-बरै (स०) । १७-टूटहि पम बच सौ टरै (का०) ।  
 १८-जिम (का०) । १९-बरने (का०) । २०-माहूँ (स०) । २१-घापान (स०) ।  
 २२-परि (का०) । \* यह चौपाई केवल का० प्रथि में है । ० का० प्रथि में यह चौपाई  
 नहीं है । ऊने-मुके हुए ।



फर तिनके जु बिरिछ पुनि देखे । तेऊ उपदेसी<sup>१</sup> सब देखे  
 घारि<sup>२</sup> बपन बिनवै धब धारे । करब<sup>३</sup> न कोय मरब हमईकारे ॥  
 कटहर<sup>४</sup> कहै देखि<sup>५</sup> पिउ बोही<sup>६</sup> । हिये<sup>७</sup> ग्यान कोबा<sup>८</sup> जिगह<sup>९</sup> होई ॥  
 बड़हर<sup>१०</sup> कहहि<sup>११</sup> मरम<sup>१२</sup> तिन जाना । मधुर धमन बिन भेव न माना ॥  
 मरियर कहे<sup>१३</sup> सखे<sup>१४</sup> पिउ<sup>१५</sup> सोई । ज्यों<sup>१६</sup> तन धमन निरी<sup>१७</sup> बिय होई ॥  
 जामुन<sup>१८</sup> कहै मरन घौ<sup>१९</sup> जामन<sup>२०</sup> । ठाको मिटी<sup>२१</sup> कंत<sup>२२</sup> मंह<sup>२३</sup> जामन<sup>२४</sup> ॥  
 महुमा टपक दिखारै<sup>२५</sup> रोई । माठ<sup>२६</sup> माह<sup>२७</sup> मय यह<sup>२८</sup> यत<sup>२९</sup> होई ॥  
 खिरली कहै बेह यह<sup>३०</sup> खिरली । नेतो<sup>३१</sup> बहुत<sup>३२</sup> घरी<sup>३३</sup> सो करमी<sup>३४</sup> ॥  
 धमली<sup>३५</sup> कहै मोहि मधु<sup>३६</sup> धमसी<sup>३७</sup> । जागि नीद मेटी<sup>३८</sup> पिउ सो मिसी ॥

बोहा—द्विग<sup>१</sup> द्विग निबकीरो फरी जो देखी<sup>२</sup> बन माहि ।

कह<sup>३</sup> बोबे नर नीब जे धाम<sup>४</sup> कही सो खाहि ॥३७॥

बोहा—१—निरख (घ) । २—उपदेसी (घ) । ३—उंचे बिन बहु धंवर घारी  
 (घ०) । ४—गर्ब न करो गर्ब (का०) । ५—हिमगारी (घ०) । ६—कपूर (घ) ।  
 ७—देखिउ (घ०) । ८—उनही (घ०) । ९—हंसहि (घ०) । १०—योबा (घ) ।  
 ११—जिहि होहि (का) । १२—बबिर (घ) । १३—कहहि (घ) । १४—मर्म  
 (का०) । १५—कहूँ (घ०) । १६—पिउ (का०) । १७—जो (घ) । १८—करै तन  
 (घ०) । १९—जामनु (का०) । २०—उर (घ) । २१—जामनु (का०) । जामन—  
 जग्न जेना । २२—मठी (घ०) । २३—कंत (का) । २४—से (का) । २५—जामनु  
 (का) । जा मम—जिसका मम । २६—बेबावह (घ) । २७—माति (का) ।  
 २८—मोहि (का०) । २९—यहि (का) । ३०—गति (का) । ३१—बह (का) ।  
 ३२—नेतन (घ०) । ३३—बहुत (का०) । ३४—घरी (का०) । ३५—बरली (का०) ।  
 ३६—दंबली (का०) । ३७—मय (का०) । ३८—धमसी (का) । ३९—मीठी मैं  
 धमली (का) । ४०—बिग बिन (घ) । ४१—देखै तिन (घ) । ४२—कहो  
 (का०) । ४३—धंब (का) ।

बुर बैठ पक्षी विहि<sup>१</sup> साखा । बोसहि<sup>२</sup> सबे<sup>३</sup> पम<sup>४</sup> रस साखा ॥  
 पाठक<sup>५</sup> वेम<sup>६</sup> बीन<sup>७</sup> गुहराबे<sup>८</sup> । एक जग<sup>९</sup> एकै<sup>१०</sup> रू<sup>११</sup> रट साबे ॥  
 पाठक<sup>५</sup> बेह<sup>१२</sup> प्रीयम<sup>१३</sup> मी<sup>१४</sup> जीळ । निम<sup>१५</sup> बासर<sup>१६</sup> कूक<sup>१७</sup> पिठ<sup>१८</sup> पीळ ॥  
 वीरहि<sup>१९</sup> घीर<sup>२०</sup> बचन<sup>२१</sup> न सुहाई<sup>२२</sup> । मीरुहि<sup>२३</sup> मीरुहि<sup>२४</sup> रटिना<sup>२५</sup> साई ॥  
 महरि<sup>२६</sup> बो<sup>२७</sup> वेम<sup>२८</sup> बाह<sup>२९</sup> दह<sup>३०</sup> ही<sup>३१</sup> । विहि<sup>३२</sup> पुक्त<sup>३३</sup> सबा<sup>३४</sup> पुकारत<sup>३५</sup> रही ॥  
 मारुहि<sup>३६</sup> निपट<sup>३७</sup> वेम<sup>३८</sup> दुखदाई<sup>३९</sup> । निमि<sup>४०</sup> दिन<sup>४१</sup> मूएउ<sup>४२</sup> मूएउ<sup>४३</sup> बिस्ताई ॥  
 कोकिल<sup>४४</sup> बिरह<sup>४५</sup> बरी<sup>४६</sup> मई<sup>४७</sup> कारी । कुह<sup>४८</sup> कुह<sup>४९</sup> सब<sup>५०</sup> विवस<sup>५१</sup> पुकारी ॥  
 समुधि<sup>५२</sup> न परी<sup>५३</sup> कही<sup>५४</sup> जस<sup>५५</sup> सुबा<sup>५६</sup> । जनों<sup>५७</sup> कही<sup>५८</sup> जम<sup>५९</sup> सेंबर<sup>६०</sup> मूपा<sup>६१</sup> ॥  
 सखि<sup>६२</sup> न बाइ<sup>६३</sup> मना<sup>६४</sup> मुब<sup>६५</sup> बीना । वी<sup>६६</sup> जू<sup>६७</sup> कही<sup>६८</sup> गृही<sup>६९</sup> प्रभु<sup>७०</sup> मीना ॥

बोहा—घीर<sup>२०</sup> भने पंक्षी<sup>२१</sup> वहा<sup>२२</sup> पिलठ<sup>२३</sup> कहां<sup>२४</sup> सों<sup>२५</sup> जाउ ।

सबही<sup>२६</sup> कही<sup>२७</sup> वेम<sup>२८</sup> सों<sup>२९</sup> सह<sup>३०</sup> बनी<sup>३१</sup> को<sup>३२</sup> नाळ ॥३८॥

बोहा ३८-१-तम (म०) । २-बोसहं (स०) । ३-सबहि (स०) । ४-  
 वेम (स०) । ५-पाठक (का०) । ६-बहिस (का०) । ७-गुहराबे (स०) । ८-जक  
 (का०) । ९-एक (स०) । १०-बे (का०) । ११-महुं (स०) । १२-कूकहं (स०) ।  
 १३-दू तिन (स०) । १४-मुहाए (स०) । १५-बही लीं नहीं बही रट साए (स०) ।  
 १६-मिहर (का०) । १७-जू (का०) । १८-रही (स०) । १९-तिम (स०) ।  
 २०-पुकार रही (स०) । २१-मोरो (स०) । २२-म्यों म्यों बिसाई (का०) ।  
 २३-बिटई (का०) । २४-कुहं कुहं (का०) । २५-खोउ (का०) । २६-समम  
 (का०) । २७-आउ (स०) । २८-मीरु (स०) । २९-सूबा (का०) । ३०-बाहं  
 (स०) । ३१-जिन (स०) । ३२-रही पट (स०) । ३३-घीर कही (का०) । ३४-  
 जहां (स०) । ३५-सब (का०) । ३६-कहीं (स०) । ३७-प्रीयम (का०) । ३८-सोही  
 (का०) । ३९-कर (का०) ।

भरे<sup>१</sup> एरोइए तात तमावा । कहि १ बाद कछु तिहुक<sup>२</sup> बनावा ॥  
 पातहु<sup>३</sup> ममी पैम पिपाबे<sup>४</sup> । पैम धकरवा प्रकर दिपाबे<sup>५</sup> ॥  
 जल सज्जल निर्मल जनु<sup>६</sup> मोती । रहहि<sup>७</sup> समाह बसु उर जोती ॥  
 बति रंभीर पाह<sup>८</sup> कछु गाही । मन कर मरम<sup>९</sup> दुरा मन मोही ॥  
 जहुं किति<sup>१०</sup> पाकी<sup>११</sup> पार बनार्द । पार पैम जनु मिटी कपार्द ॥  
 जघपि पैम हिलोर<sup>१२</sup> उठाबे । उमंग भसु<sup>१३</sup> बस दुरन<sup>१४</sup> न पारबे ॥  
 नीरज नैज पैम रंग राठे । पुकये भंबर<sup>१५</sup> मोठ मदमाते<sup>१६</sup> ॥  
 जो पुनि कही नैज दुई<sup>१७</sup> गिने । नीरज पने<sup>१८</sup> न बरनत बने ॥  
पित<sup>१९</sup> छवि परसन चाव बी भयऊ । एव एन मी मई होइ<sup>२०</sup> नयऊ<sup>२१</sup> ॥

बोहा--जो पुनि वही जो<sup>१९</sup> एग बसहि<sup>२०</sup> ज्ञान सोय<sup>२१</sup> तिन पाई ।

पाखन<sup>२२</sup> जस बोरे<sup>२३</sup> नहीं सवा रहे<sup>२४</sup> बस माई<sup>२५</sup> ॥१६॥

बोहा २६-१--भरइ (छ) । २--तिहि (का) । ३--जानू (का०) । ४--  
 सिखावह (स०) । ५--दिखावई (स०) । ६--जस (का) । ७--हिसे समाह  
 रही केहु जोती (का०) । ८--ताहु (स०) । ९--मम (का०) । १०--पिह  
 (का) । ११--ठाकी (का०) । १२--हिलो (छ) । १३--बाघ (छ) ।  
 १४--हरन (छ) । १५--भंबर (छ) । १६--मधुमाले (का) । १७--  
 दुई (का०) । १८--कई सने न (का०) । १९--पिय सब परस चाव बस  
 मबी (का०) । २०--हुई (का) । २१--यमी (का०) । २२--जु (का) ।  
 २३--बस (का०) । २४--दिखाई न खाहि (का०) । २५--पाखे (का०) ।  
 २६--बीबइ (स०) । २७--रही (का०) । २८--माहि (का०) ।

मड<sup>१</sup> मंडन साधे<sup>२</sup> बहूँ पासा । तही त्रिद्विध धामक<sup>३</sup> कर बासा ॥  
 बिज बह्मचारी धनपति<sup>४</sup> । अती जो अनमती<sup>५</sup> त कहूँ ॥  
 बोपी जंम कर बिधायमा<sup>६</sup> । मूफी सन्यासी दम नामा ॥  
 काऊ बपा बहूँ धाराधै<sup>७</sup> । कोऊ तपा तपै<sup>८</sup> तप साधै<sup>९</sup> ॥  
 कोठ घण्टीम<sup>१०</sup> बाप मै<sup>११</sup> उरकै । कोऊ उरकै पाइ निज<sup>१२</sup> मुरकै ॥  
 कोठ<sup>१३</sup> बिज्ञानी<sup>१४</sup> पुण्य संबोधा । कोऊ ज्ञान कै साथ बिवागी ॥  
 तिनकर दरसन<sup>१५</sup> जाइ बिज पाबा । अनु<sup>१६</sup> घटसठ तीरप हूँ<sup>१७</sup> साबा ॥  
 मन मिलवहै<sup>१८</sup> निरमन होइ जा<sup>१९</sup> । छाड़ि देइ सब बचसगई ॥  
 अप बंधा सो भंज कहूँ जानै । धीर धानुहि बंध कै मान ॥

दोहा—गौं बिदवत<sup>१</sup> तिन मूय कै कमल सुमन<sup>२</sup> बिजसाहि ।

त्यौं<sup>३</sup> साधुन<sup>४</sup> कै दरम गुन मान नैज सुख जाहि<sup>५</sup> ॥४०॥

दोहा ४ — १—मधु (म०) । २—सार्जे (म०) । ३—साधक (म०) । ४—  
 धी बड़े मुनि कै मन (का०) । ५—बिज्ञाना (म०) । ६—जपहै (म०) । ७—धार बहूँ  
 (म०) । ८—तपन (म०) । ९—साधहै (म०) । १०—घण्टीमग (म०) । ११—महि  
 (म०) । १२—त्रिद्वि (म०) । १३—कोई (का०) । १४—बिज्ञान (म०) । १५—  
 दरस (का०) । १६—जम घाटहु (म०) । १७—हाइ (म०) । १८—मर्दान (का०) ।  
 १९—पन मूरक को कमल (म०) । २०—गो पुनि बिजसाहि (म०) । २१—तबौं  
 (म०) । २२—साधन (का०) । २३—जाइ (म०) । \* यह चौगार का० प्रति में  
 नहीं है ।

\* मध्यकालीन साहित्य में भगवत घड़मठ तीर्थों की संख्या प्रसिद्ध हो गई थी  
 (विचित्र पन्नासठ ६ ४।२) ।

पैर' पैर पर कूपा ब' बाई । सबहि' सार्द पाट बंपाई ॥  
 देरी जाइ जो तिनकर' भसू । जानहुँ करहि धरम जयसू ॥  
 बोल उठ जब' निपरे जाई । घागू' देखि जसो रे मारि ॥  
 हमसी घरिपरता मन घामहुँ । तजि अभिमान राह' तन सानहु ॥  
 माया द्वार देह' जिन ताप । मारय' छोड़ि' घरउ' भंडारा ॥  
 पा पापक घाबे' तिगु बीजे । हम जस ज्यों कछु घटकन कीजे ॥  
 ज्यों ज्यों कडे बडे रया' पानी । घरम' छोड जमई' घठिबानी' ॥  
 घन कड नीर गंपायस' होई । दिया' दिया बोसहि' सब कोई ॥  
 दित' महुँ बिलसि' जाइ जो काया । घानी मौजि मिली जस' माया ॥

बोहा—इति' माया सब जग' ठना ताहि' ठब सो कोइ ।

पबहि' पाईये नीर ज्यों जाके घटक' न होइ ॥४१॥

बोहा ४१-१—पैर पैर (स) । २—बाई (स) । ३—सहस (का) । ४—बटा  
 (का०) सभी की प्रति में यह सभ्य नहीं है । ५—बझाएँ (स) । ६—तिहिकर (का) ।  
 ७—जानहुँ करहुँ (स) । ८—उठई (स) । ९—नेरे बब (का) । १०—घानी (स०)  
 ११—वेह (स) । १२—देहि (का) । १३—मारं (का०) । १४—छोड़ (का) ।  
 १५—घोड (का०) । १६—घाबे (स०) । १७—सौ (स०) । १८—जमें (का०) ।  
 १९—घमसह (स) । २०—घठिबानी (का) । २१—नडाइल (का०) । २२—बहाबहा  
 (का) । २३—बोली (का) । २४—मी (का०) । २५—बाँस (स०) । २६—बस  
 (का) । २७—इन (स) । २८—बगब का (स) । २९—माइबकी पुनि छोड (स०) ।  
 ३०—पैर बाये के नीर ज्यों (स०) । ३१—घटक (स) ।

पनिहाती देखीं मृग नैनी । गज गामिनि भी कोकिल बेनी ॥  
 पहिरें भीर घोषा' छग भांठी । रात्र मुनिहि' की क्यौं घस पांठी ॥  
 लेजू पाठ कई वा हाथे । नैनन्ह पानी कलसा माथे ॥ \*  
 निपट भाव सी धानहि' बाहीं । पाहन' चिटि' सुरत पट माहीं ॥  
 जो कोई सखी नैक' दृग फेरे । सूखी' चिटि' बोक' क हेरे ॥  
 मित सब सखी ताहि समुझावहि' । बनू' परशेखिन' पंप बटावहि' ॥  
 बल बेतहु' पट महु' मन बेहु' । बाकी चिटि' सूप कर' लेहु' ॥  
 भाव बोक' बाट रपटीसी । रपट परे कुल होइ छवीसी ॥  
 जो पट फोरि जाहि' पर छूछे । का पुनि कहे' कंठ' के पूछे ॥

बोहा—रपट फोरि पट छोड़ बल, बिन पानी बिससाहि' ।

पुनि भी कब घावा पडे कब कुम्हार कहे' बाहि ॥४२॥

बोहा ४२-१—देखा (स०) । २—सो भांठी भांठी (का०) । ३—मोनैयन के (स०) । \* यह भी 'का' में नहीं है । ४—घावें (का०) । ५—पायन (स०) । ६—दुष्ट (स०) । ७—सुरत (का०) । ८—नीक (स०) । ९—सूफी (स०) । १०—बप (स०) । ११—समुझावह (स०) । १२—बनू (स०) । १३—प्रवंधी (का०) । १४—बटावह (स०) । १५—बेतो (का०) । १६—नै (का०) । १७—देही (का०) । १८—दुष्ट (स०) । १९—कै (का०) । २०—सहो (का०) । २१—जाह (स०) । २२—कहह (स०) । २३—कंठ जब पूछ (स०) । २४—बिससाह (का०) । २५—कै जाह (का०) ।

करी' धपूर धमी फरबारी' । कर' फर सटकनई' तिहि' डारी ॥  
तिन्ह' के गति कछ बरनि न जाई । सब फर' उपदेसी' मुपदाई ॥  
 गारन बिनबे' पेमी सोई । फांक फांक जाकर हिय होई ॥  
 नई विषाह'' सरार घनाए । सो पेमी वा हिदे'' सरार ॥  
 बिनबे'' सेब सेब'' प्रभु सोई । जाके'' सेब'' राठ मुप होई ॥  
 नीबू'' कही'' गुरख'' घट माहीं । वी घापा कांटे बिनु माहीं ॥  
 कैला कही करी' बिल्वासा । फिर फरबे'' की धरी न घासा ॥  
 बेर नई यह बेर न पाबहु'' । जिन घापा कांटे'' सरभ्यवहु'' ॥  
 किसमस कही घबाम घर्षक'' । जाके करम'' पी' जीवन सेक'' ॥

बोहा—गल'' गल कहे जो' पिउ'' बिरह'', नल'' गल वाली बेह ।

सोई मन पिय'' नल मिली रसी रसीने मेह ॥४३॥

बोहा ४३—१—फिर (स०) । २—बरबारी (स) । ३—फिर फिर (स०) ।

४—सटकनयन (स०) । ५—उब डारी (स०) । ६—तिहि के (का) । ७—बर्न,  
 (का०) । ८—फिर (स) । ९—उपदेसी (का) । १०—बिनबह (स०) । ११—  
 दुषाह (का०) । १२—हिदे (स) । १३—बिनबह (स०) । १४—सेबहि (स०) ।  
 १५—जाकी (स) । १६—सेबा (स) । १७—नीबू (का) । १८—कही (सा०) ।  
 १९—सरार (का०) । २०—विहि (का) । २१—फिर से कौ धरी (स) । २२—घापो  
 (का) । २३—कांटे (स) । २४—सरभ्यवो (का०) । २५—घपीबळ (स) ।  
 २६—कर्म (का) । २७—सी (स) । २८—सेबळ (स०) । २९—गुल गुल (स) । ३०  
 ३०—बू (का) । ३१—पिब (का) । ३२—बिरह (का०) । ३३—यूस गुल कासी  
 (स०) । ३४—पिउबुल (स) ।

मगर निकट फूसीं फूलवाटी । बम मासी बिन सीष संवारी ॥  
 अनु सब पुहप पेम अनुराबी । बरागी उपरेस बिरायो ॥  
 करना कई अंठ जो मरना । बिन हरि मजन बंध सब करना ॥  
 कई सिपार हार तन धारा । का सिपार भर आबसि हाय ॥  
 बेसा कई समुझि हो हसा । कही न घनबेले इहि बसा ॥  
 साता नई सास तन सूना । पेम वाय उर दाम बिहना ॥  
 सोसन कई भजहु पर सीये । समुझि सोसनी सोसन सहिण ॥  
 कई मेवारी सो पिउ प्यारी । बिन सबा लमि नीद निवारी ॥  
 सोई बात सुवरसन कई । सेवा सजन सा दरसन सहि ॥

बाहा—बम्प बमली कबड़ा कई दूरि नहि पोउ ।

इ डि संउ हम बास ज्यो बट बट सोई जाउ ॥४४॥

श्लोक ४४—१—बिन (स०) । २—बैराय (कां) । ३—उपरेसहि (कां) ।

४—बैरायी (कां) । ५—पहिराबस (कां) । ६—समझ (कां) । ७—ही (म०) ।

८—गहो (कां) । ९—सपवनी (कां) । १०—बह (स०) । ११—साता (स०) ।

१२—दाह (म०) । १३—बोर (कां) । १४—समझ (कां) । १५—कई (कां) ।

१६—स्पाम बुरत सिर (कां) । १७—भई (कां) । १८—सू (कां) । १९—पीब (कां) ।

२०—सूजकसू (कां) । २१—कई कि (कां) । २२—न (कां) ।

२३—पीब (कां) । २४—सहि (कां) । २५—पीब (कां) ।



पुनि<sup>१</sup> बह<sup>२</sup> मपर दिस्टि महु<sup>३</sup> धावा । गुबह<sup>४</sup> बमा<sup>५</sup> धो नीन<sup>६</sup> मुहावा ॥  
 उये<sup>७</sup> ठौर धानु<sup>८</sup> कंतावा । उये<sup>९</sup> मंदिर धानु<sup>१०</sup> पनावा ॥  
 ईट<sup>११</sup> गिनाव दिस्टि गहि<sup>१२</sup> धावा । यव पर उज्जम<sup>१३</sup> बून मगावा ॥  
 सेत<sup>१४</sup> सेत दीसहि एन<sup>१५</sup> सारी । होइ जुन्हीया<sup>१६</sup> निधि धंधियारी ॥  
 मानो<sup>१७</sup> रूपे गिरे<sup>१८</sup> पदारी<sup>१९</sup> । कोर कोर सब छोन उठारा ॥  
 तिहि<sup>२०</sup> ऊपर चौबार<sup>२१</sup> पटारी । दिस्टि पधार न जाहि<sup>२२</sup> दिहारी ॥  
 नीक<sup>२३</sup> सरोत बने<sup>२४</sup> पहु<sup>२५</sup> पामा । ईइ परै बैठन<sup>२६</sup> की<sup>२७</sup> धावा ॥  
 भूपके<sup>२८</sup> कनक बटाव संवार । जनु प्रकाम धमके<sup>२९</sup> निधि ठाण ॥  
 ते मदिर<sup>३०</sup> बीही<sup>३१</sup> इन<sup>३२</sup> भेया । जनु बैराम करै<sup>३३</sup> उपवेता ॥  
 बाहा—ठंके मंदिर देखि<sup>३४</sup> जनु जनि<sup>३५</sup> जिउ<sup>३६</sup> करहु<sup>३७</sup> गुमान ।  
 सार होइ इरी करै, संऊ<sup>३८</sup> पिर न<sup>३९</sup> निदान ॥४३॥

भीतर जाइ मपर जो देखा । मानुस<sup>४०</sup> एकहि<sup>४१</sup> भिक्षिब सो रैसा ॥  
 धबसा<sup>४२</sup> प्रति सोनी<sup>४३</sup> उजियारी । मनी मैन छाँचै सब ढापीं ।  
 परमी लोग<sup>४४</sup> परम<sup>४५</sup> ब्यबहारू । गाहि धरम<sup>४६</sup> परम प्रथिकारू ॥  
 पर पर प्रतिमा<sup>४७</sup> सेवा पूजा । पूजा<sup>४८</sup> प्रथम काज तब पूजा ।  
 मुनि सों सया पवित्र रहाही । बरम कति पाई मुख माहीं ॥  
 पुन्य दान बहुते<sup>४९</sup> पुल<sup>५०</sup> होई । पर पर सुधी दुधी गट कोई ॥  
 टोल टोल महु<sup>५१</sup> बनी<sup>५२</sup> मबाइ<sup>५३</sup> । बरम लपटी<sup>५४</sup> रहहि सवाई<sup>५५</sup> ॥  
 पंडित बैठ<sup>५६</sup> कपहि<sup>५७</sup> पुरानू । बरनहि घातम रूप<sup>५८</sup> गियानू ॥  
 बैठई<sup>५९</sup> भाइ पुषप विजानी । समझे<sup>६०</sup> गुने<sup>६१</sup> उठै बस<sup>६२</sup> बानी ॥  
 दोहा—हाम सबन कीं<sup>६३</sup> सुमिरनी सया मजन सों काम ।  
 धो जो<sup>६४</sup> मिलै<sup>६५</sup> ठाणो<sup>६६</sup> कहे सुमिरो साधो<sup>६७</sup> राम ॥४६॥

दोहा—४३—१—जो (स०) । २—जो (का) । ३—मै (का) । ४—  
 गिनावो (स०) । ५—नीक (का) । ६—ऊपी (का) । ७—बाग (स) । ८—  
 ईट कसारी (स) । ९—स्वैत स्वेत देवहि टंकसारी (का) । १०—बहारी (का) ।  
 ११—माह (स) । १२—कीरि (का) । १३—पहाड़ी (स०) । १४—तिहु  
 (स) । १५—जो बार (स) । १६—जाह (स०) । १७—तिनहि (का) । १८—  
 रजे (का०) । १९—बैठे (का०) । २०—कर (स) । २१—निस उठके (स०) ।  
 २२—मंड (का) । २३—बबहार (स) । २४—इहि (का) । २५—कहूँ (स०) ।  
 २६—बिह (का०) । २७—बिग (का) । २८—बीय (का) । २९—करो (का०) ।  
 ३०—ठके (का) । ३१—गहि (का) ।

दोहा—४६—१—मानसरी (का) । २—भजनो (का) । ३—जोसे (का) ।  
 ४—जनु (का) । ५—सोक (का) । ६—धर्म (का) । ७—साह (स) । ८—धर्म  
 (का) । ९—प्रथमहि (स) । १०—सेवा क्रिय (स०) । ११—मुनि बहुते (का) ।  
 १२—मै (का) । १३—बने घटाही (स) । १४—नीयी (का) । १५—सवाई  
 (का) । १६—बैठिय (स) । १७—पहै (का०) । १८—रुम गमानु (स) ।  
 १९—बैठे (का) । २०—समुनि (स) । २१—सनह (स) । २२—जनु  
 (का) । २३—कह (स) । २४—जु (का) । २५—मिल (का०) । २६—  
 काँसो (स०) । २७—साधुनाम (स) । \* मबाइ—बैठक ।

नपर छोड़ि' बँठी' पुनि' बेसा । करि करि बचिर रिझायन मया ॥  
 सारी मुरम हरी रंग' भागी । प्रति मीनों' जातहु' उर नागी ॥  
 प्रगट' कबल' कृप देखि' विधाई । निरखत' मन ममुकर छुँ' जाई ॥  
 सुमन हार धर' सौंसे' मीनी' । नाप' मृत्ति' मृग परम प्रबोनी ॥  
 प्रामुपन पुनि बने बड़ाऊ' । प्रंग घग यति भाव' रिझाऊ ॥  
 माया रूप बरं प्रति मीठी । बोहून मर' बरुँ' तिन' बीठी ॥  
 जो बित दे बितरुँ' उन नाही । बितवत' बोर महि' तिहि पाही ॥  
 तिन सौ उरमि' यने यंठ' सोबा । धी' दे' सोस हाप पुनि' रोबा ॥  
 निने मोहि' माया अधिकारी । हाप म्हाकि' होइ' बर' सिवारी ॥

बोहा—मटी बेत्वा' जनु यी' कहहि माया' बबो ग काइ ।

बा बंधन' बिप बयत है, गयो' घाब कई सोइ ॥४०॥

बोहा ४०—१—छाड़ि (स०) । २—बँठे (स०) । ३—बन (का०) । ४—  
 कर कर (स०) । ५—उर (का०) । ६—मीनी (स०) । ७—जागी (स०) ।  
 ८—प्रगट (स०) । ९—कमल (का०) । १०—मीनु (स०) । ११—देखत (का०) ।  
 १२—होइ (स०) । १३—घो (स०) । १४—सौंद (स०) । १५—हिप पहली  
 (स०) । १६—नाद (स०) । १७—निरख (स०) । १८—जपऊ (का०) । १९—  
 मया (म०) । २०—बंध (का०) । २१—बरुँ (का०) । २२—तन (का०) ।  
 २३—देइ जनुइ कह पाहा (स०) । २४—बित बितवत (स०) बितंबित (का०) ।  
 २५—बोराइ तिनु पाहा (स०) । २६—उरम मीनु (का०) । २७—बित (स०) ।  
 २८—घो (का०) । २९—देइ (स०) । ३०—बहु (म०) । ३१—भाव (स०) ।  
 ३२—म्हार (क०) । ३३—गठि (का०) । ३४—बस (का०) । ३५—बिबारी (का०)  
 ३६—तप बेसा मनु (स०) । ३७—इमि (स०) । ३८—माया बड़ो (म ) । ३९—  
 पाही बोर्ब बिपि बयत (म०) । ४०—कयो गम यंठ (स०) ।

धारो बलि दपी जा हाटा । बुहुं बिदि हाट पीप बद् बाटा ।।  
 तिही बाट बग धारो जाई । हाटन होइ बिसाहुं बिकारै ।।  
 एक बनौटा\* सेवा पायी । एक पनी पर बार समायै ।।  
 जहाँ बनौटा बब हाटा । पनो बठ ऊपर कै पाटा ।।  
 सोवा होइ सो सब निख सेई । हाट उठै सेवा केई ।।  
 कोऊ बई साम फल पायै । काऊ समाय मूर यथायै ।।  
 जो धापहि बारे परबारा । धपन सहज करहि ज्योपारा ।।  
 तिन कई पूछनहार न कोई । बनी बनौटा धापहुं सोई ।।  
 हाटन हरि बई जय बसु । पाषा ज्ञान करम मति भसु ।।

बोहा—कर्महि जानु बनौटा पनी गु जानी मान ।

हाट जगत धर फाया बाट सु धापन जान ॥४८॥

हाटन साज विदि इमि धारै । ज्यो धविपता बगत बतायै ।।  
 प्रबम जो बलि जोहरिन माही । जाति बिना एकी नम माही ।।  
 घर बेसी जो बैठि परलिया । कपा एक धनेक रुपैया ।।  
 तही मुनापटा जा बका । कंचन एकी कितेक बिदेखा ।।  
 जर जर जरी धामरन बरै । एकहि कुंठन सब नम परै ।।  
 पुनि जो पसरहट ज्ञाय निहारी । हाट हाट नहौ बैठ पंठारी ।।  
 पुनि बंधसार परो जो शोठी । एक ऊज हाट सब मोठी ।।  
 धारै बलि बजाय जो हरे । एक मूज निज बसन पनेरे ।।  
 पुनि जो विदि संकी तिन होई । दिन मुबाधना बस्त न कोई ।।

बोहा—देखि बरीबा फुलहटी मई ज्ञान जित हाइ ।

प्रगटि बुरा रंज बास ज्यो बट पट एक सोई ॥४९॥

बोहा ४८-१-दोहुं (घ) । २-बाबा (का) । ३-तिनहि (घ) । ४-जानै  
 (घ) । ५-बिसाहि (का) । ६-बिकारै (स०) । ७-बनौटा (घ) । ८-बनौटा  
 (घ) । ९-बगबहि (का) । १०-बैठि (घ) । ११-की बाटा (का) । १२-  
 पू बोहलिधि (का०) । १३-सेऊ (घ०) । १४-उठी (का) । १५-कहि (घ०) ।  
 १६-कोई रहे (का०) । १७-कोई (का) । १८-समायी (का०) । १९-धापन  
 (घ) । २०-बारे (घ०) । २१-सहिव (का) । २२-करै (का) । २३-  
 जोहरारा (का०) । २४-तिहि कहि (का) । २५-धापहि (का) । २६-जस बसु  
 (का०) । २७-कर्म (का) । २८-कट (का) । २९-करमठ (घ) । ३०-परै सा  
 (घ) । ३१-ज्ञान (घ) । ३२-उर (घ) । ३३-सू (का०) । \* बनौटा-बलिपुत्र

बोहा ४९-१-जनी हूँ एकता (का) । २-बनारै (का०) । ३-देख (का) ।  
 ४-जु बैठ परलिया (का) । ५-बप (का) । ६-मुनापटा (घ) । ७-तिन  
 (घ) । ८-एक (का) । ९-मति (का) । १०-परियन (घ) । ११-समरन  
 (घ) । १२-एकहु (घ) । १३-नी (का) । १४-बैठ (का०) । १५-बहुसाइ  
 (घ) । १६-गुरि (का) । १७-जो (घ की प्रति में नहीं है) । १-एकहि (का०) ।  
 १९-बन (घ) । २-हेरी (घ) । २१-गाइ (घ) । २२-ठग  
 (का) । २३-सो बाधना (घ) । २४-बसत (घ०) । २५-फुलठी (घ) ।  
 २६-इही (का०) । २७-जीय (का०) । २८-प्रगटि (घ) । २९-जु (का०) ।

मानिक' चीक जाइ' ओ रेखा । कहुँ घोर कौतुक बहु' पेखा ॥  
 कठहुँ हीर' बदे उष्णारा । कठहुँ पब्रिया पडे' पबीरा' ॥  
 कठहुँ नार नृप गुन हीर' । कठहुँ स्वांग बनाबा' कोर' ॥  
 कठहुँ बद बनाबै' पुकी' । कठहुँ बड़िया' बबहि' बड़ी' ॥  
 कठहुँ पुरे' गारक मंषी । कठहुँ जंभ' बजाबहि' जभी ॥  
 कठहुँ सांग निवे संपहेरा' । कठहुँ बित्र' सिप बैठ बिठेरा ॥  
 कठहुँ मनइहि' पब निकारी । कठहुँ घसबैया' घसबै डारी'\* ॥  
 कठहुँ ठगनि ठगानै कोर' । कठहुँ पजरहुट' पापेट डोर' ।  
 कठहुँ चेटक मन हर ली हा । कठहुँ मट' नाटक पुन' कीन्हा ॥

बोहा—ते कौतुक जन' इमि कई मन' तिन रंग न राँच ।

हमसी घबही घसबै' रबि उठा बगि यह' नाँच ॥२०॥

बोहा २०-१—मानिक (का०) । २—जाय (स०) । ३—इहि (कां) । ४—  
 होने (स०) । ५—बेदा जाय (म०) । ६—पडई (स०) । ७—पुबाय (कां) ।  
 ८—बनपाबा (स०) । ९—बनाइहूँ (म०) । १०—बरी (कां०) । ११—उरैया  
 (कां०) । १२—बबै (कां०) । १३—उड़े कार रब (म०) । १४—बित्र बनाई बित्रा  
 (कां०) । १५—सापेरा (स०) । १६—बिभी बग (कां०) । १७—कहन पुठरी (स ) ।  
 १८—घसिया घसबय (म ) । १९—दारी (म०) । २०—पजरहुट (स०) । २१—  
 निठ (स०) । २२—मन (स ) । २३—बिमि (कां०) । २४—कि तन मन घंठ \* रब  
 (कां०) । २५—घबही घसबै (कां०) । २६—इह नाच (कां) ।

\* घसबैया—घासेब करने वाला नून प्रत करने वाला घसबैइहि \* इह उरैया  
 भी कहते हैं । घमिया—घामेर मूत बापा । बड़ीं हरन करने वाला घसबैइहि \* उरैया  
 उठार रखा था ।

भीतर नगर राजबड़ माडा' । जनु पहाड़ बहुत दिख गदि' काडा ॥  
 मेऊ' पर घादि नाम सों पूरा । से घकास पर घरे न'पूरा ॥  
 सहुँवर' मन की' सिमा सबाई । भी मङ्गपरि' विहि काड बड़ाई ॥  
 तरहर गीब' सोह घम कीगहा । भी क्वक' कर्ष सकि न भीन्हा ॥  
 घण्ट पतार सोठ यनि" काडा । निकगि नीर ऊपर भी बाडा ।  
 बहुत दिखि चारों पंवरि बुधारा । तिम्हहि मागि पुनि लोह किबाय ॥  
 कुंड घनसहि" मरे पढ माहीं । उमकि" नीर' तहूँ" नरी बहाहीं ॥  
 घसग सगाव कहुँ" कछ माहीं । ज्यों घातम काया गढ माहीं ॥  
 जा" तिन्ह मने" बय्य कर पोसा । जनी" बय्य पर साग पिलोता" ॥

बोहा—जनु" गढ़ कहै कि ममम्" मर तु गढ़पति नड़ नाहि" ।

ज्यों मोघों गढ़पति घमन" जघनि" मोही" माहीं ॥३१॥

बोहा ३१-१—काडा (स) । २—बड़ (का०) । ३—वजन पुरा माग सों  
 पूरा (का) । ४—मेड़ (स०) । ५—सहनी (स०) । ६—के (स) । ७—बहुँ  
 (स०) । ८—मड परि बंड माड़ (स) । ९— लोह सोह घस बना (स) ।  
 १—बहुँ केतक बरखन बन बना (स) । ११—खिन (का०) । १२—सजीवन  
 (स०) । १३—ममद (स०) । १४—न (का०) । १५—विहि (का) १६—कड़ी (स०) ।  
 १७—ज्यों (स) । १८—ठिहि (का) । १९—नरी (का) । २०—खिन (स) ।  
 २१—कमोला (स) । २२—बन (स) । २३—समुक्ति (स) । २४—माहि  
 (स) । २५—घसा (स) । २६—जानत (का) । २७—मोहिये (स०) ।

बड़ी' पंहरि पर ऊँच कुमाय' । तिहि' ऊपर बाने परियार' ।  
 बेठन पुष्य बेठे परियारी । बरी परी तिन' साथ उतायी ॥  
 पस छिन' संतर होन न पावै । जबहि' मरै तबहि' डरकावै ॥  
 बार बार फिर सेछे बरी । एकहि मरी माम्क पुनि मरै ॥\*  
 जब मारै परियार' पुकारै । समझहि' बरी फिरत' छिन मारै ॥  
 ती ली कुसल' बी परी न पूजो । जब पूजो तब बात न पूजो ॥  
 घाबे मरी' बरी ज्यों घाऊ । मीत' नेत नेतो रे बटाऊ ॥  
 जिन जानो' कि बरी यह टरी । यह' जानहु घबलौ नहि मरी ॥  
 का मा' बरी एक' बी टरी । वै' निदान दूबै जब' मरी' ॥  
 जब बहु समे घाह निपरावै । मुमिरल चिन कछु काम न पावै ॥\*

बोहा—जग मौ' जन नाया बरी' प्रीष' परी' सो घाब ।

पूज्य घाबै छिनहि छिन बेठ' न जग्य मबाव ॥३२॥

बोहा ३२-१—बड़े पीर (का०) । २—बघाव (का०) । ३—जिह्व (स०) ।  
 ४—घरबारा (स०) । ५—बैठ परबारी (स०) । ६—जन (स०) । ७—आपु (स०) ।  
 ८—विल (का०) । ९—जबै (का०) । \*यह जोराई स० प्रति में नहीं है । १०—करकर  
 (स०) । ११—समूझी (स०) । १२—मरन (स०) । १३—कुमर (स०) । १४—  
 बरत (का०) । १५—भोष भोष चितवु उर बगाऊ (स०) । १६—जग्य कि जग्य  
 (स०) । १७—दोही छिन दुबै जब मरी (का०) । १८—म (स०) । १९—ज  
 (का०) । २०—पुनि (का०) । २१—बी (का०) । २२—दरी (का०) । २३—  
 प्रति में यह जोराई नहीं है । २४—बहु (स०) । २५—दही (स०) । २६—दही  
 (स०) । २७—दही (स०) । २८—घबलु जगन न मरव / ११ । २

राम दुवार' जाइ' जो रेखा । बडे मूर माहिन' कछु लेखा ॥  
 संभे गयंइ मेइ हुव' भारे' । बरन स्वाम काबर हुत कारे ॥  
 काया बड़ी' लबन बलबंठा । कोइ न मल' कोऊ मरमंठा ॥  
 चारों घोर शिष्टि इमि धाई । जानी कारे' मैव' उनाई ॥  
 जो बल करहि' मैव मम डारहि' । पइ पेसहि' सी' नीच उपारहि' ॥  
 नहि' तस्वब' छ' मूर उछारे' । बुरहि' डार मारि' नून डारै' ॥  
 एक सादुर' मूषे इक' छोटे । माते रम' सी' होहि न' मोटे ॥  
 जा' पुनि पाते करहि' हुडाई' । प्राण कोस ली' मनुष' न बाई ॥  
 पांडुरंग के' कछु प्रान' न मानहि । चरनी बेत' फूल कर जानहि' ॥

बोहा—गावहि' अडे' नुमान छीं, मरी बेह' मै बेह ।

मन' इमि कई नुमान का जो निधान तन अह' ॥२३॥

बोहा—२३-१—डार (का०) । २—जाम (स०) । ३—गाहि (स०) । ४—  
 बडे (स०) ५—हुव (स ) । ६—चारी (का०) । ७—बर्न (का०) ८—बसी (स ) ।  
 ९—मंठा (स०) । १०—कारी (स०) । ११—घटा (स ) । १२—करे (का०) ।  
 १३—डाखई (स०) । १४—नीलन्ह (स०) । १५—सीम उपारहि (का०) । १६—  
 कहि (स ) । १७—तस्वर (का०) । १८—सू (का०) । १९—उपारई (स०) ।  
 २०—बुरह (स०) । २१—डार (का ) । २२—डाखई (स०) । २३—घावर (स०) ।  
 २४—एक (स०) । २५—रखई (स०) । २६—नहि (स ) । २७—सो (स०) ।  
 २८—करहि (का ) । २९—हरबाई (स०) । ३०—सन्मुख को जाई (स ) । ३१—  
 की (का०) । ३२—मनेहि न मानहि (स ) । ३३—नून बेत छूटे तन (का ) ।  
 ३४—हानई (स ) । ३५—पानई (स०) । ३६—अरे (का०) । ३७—फिरन  
 कहियत बेह (स ) । ३८—बनु (का०) । ३९—बेहि (का०) ।

पुत्रीं यो समुद्रं तिरहिं इकं हुता । महानकं बांधं चरहिं गवता ॥  
 वस वस के माना रंभा । कर्षणं नृपतं मव ग्रंथा ॥  
 धीरं तहीं परं धीरं बमाने । चरुं गृहणं प्राणहिं पीडयति ॥  
 जानहुं प्रथमं रूढं मुदं गार्कं । जव चंचलं हां शीरं चलाहं ॥  
 सांस मव जानो उदिं जाहीं । जावकं धृतिव्यं यहीं गृह्णी ॥  
 विनीहिं विबाधे कौतुकं धार्कं । जूडं चरुं गीतं उडं धार्कं ॥  
 जहीं चरुयां मनं शीरंथा । पहिनें महीं मव मृदुला ॥  
 यो जवतं पुनि चालं चलाहं । जमृं जलं महीं चलाहं मृदुला ॥  
 नैकं निडोलं बाणं तिगहं शमी । मगहं चरुं चरुं चरुं चरुं ॥

दीहा—चपलं मुदं चरुं इति चरुं, मगहं चरुं चरुं चरुं ।  
 मला गार्कं इति चरुं, मगहं चरुं चरुं चरुं ॥१॥

दीहा १८-१-७१ श्री (म०) । १ २१ मव (म०) । ३ मगहं चरुं (म०) । ४ चरुं चरुं (म०) । ५ चरुं चरुं (म०) । ६ चरुं चरुं (म०) । ७ चरुं चरुं (म०) । ८ चरुं चरुं (म०) । ९ चरुं चरुं (म०) । १० चरुं चरुं (म०) । ११ चरुं चरुं (म०) । १२ चरुं चरुं (म०) । १३ चरुं चरुं (म०) । १४ चरुं चरुं (म०) । १५ चरुं चरुं (म०) । १६ चरुं चरुं (म०) । १७ चरुं चरुं (म०) । १८ चरुं चरुं (म०) । १९ चरुं चरुं (म०) । २० चरुं चरुं (म०) । २१ चरुं चरुं (म०) । २२ चरुं चरुं (म०) । २३ चरुं चरुं (म०) । २४ चरुं चरुं (म०) । २५ चरुं चरुं (म०) । २६ चरुं चरुं (म०) । २७ चरुं चरुं (म०) । २८ चरुं चरुं (म०) । २९ चरुं चरुं (म०) । ३० चरुं चरुं (म०) । ३१ चरुं चरुं (म०) । ३२ चरुं चरुं (म०) । ३३ चरुं चरुं (म०) । ३४ चरुं चरुं (म०) । ३५ चरुं चरुं (म०) । ३६ चरुं चरुं (म०) । ३७ चरुं चरुं (म०) । ३८ चरुं चरुं (म०) । ३९ चरुं चरुं (म०) । ४० चरुं चरुं (म०) । ४१ चरुं चरुं (म०) । ४२ चरुं चरुं (म०) । ४३ चरुं चरुं (म०) । ४४ चरुं चरुं (म०) । ४५ चरुं चरुं (म०) । ४६ चरुं चरुं (म०) । ४७ चरुं चरुं (म०) । ४८ चरुं चरुं (म०) । ४९ चरुं चरुं (म०) । ५० चरुं चरुं (म०) । ५१ चरुं चरुं (म०) । ५२ चरुं चरुं (म०) । ५३ चरुं चरुं (म०) । ५४ चरुं चरुं (म०) । ५५ चरुं चरुं (म०) । ५६ चरुं चरुं (म०) । ५७ चरुं चरुं (म०) । ५८ चरुं चरुं (म०) । ५९ चरुं चरुं (म०) । ६० चरुं चरुं (म०) । ६१ चरुं चरुं (म०) । ६२ चरुं चरुं (म०) । ६३ चरुं चरुं (म०) । ६४ चरुं चरुं (म०) । ६५ चरुं चरुं (म०) । ६६ चरुं चरुं (म०) । ६७ चरुं चरुं (म०) । ६८ चरुं चरुं (म०) । ६९ चरुं चरुं (म०) । ७० चरुं चरुं (म०) । ७१ चरुं चरुं (म०) । ७२ चरुं चरुं (म०) । ७३ चरुं चरुं (म०) । ७४ चरुं चरुं (म०) । ७५ चरुं चरुं (म०) । ७६ चरुं चरुं (म०) । ७७ चरुं चरुं (म०) । ७८ चरुं चरुं (म०) । ७९ चरुं चरुं (म०) । ८० चरुं चरुं (म०) । ८१ चरुं चरुं (म०) । ८२ चरुं चरुं (म०) । ८३ चरुं चरुं (म०) । ८४ चरुं चरुं (म०) । ८५ चरुं चरुं (म०) । ८६ चरुं चरुं (म०) । ८७ चरुं चरुं (म०) । ८८ चरुं चरुं (म०) । ८९ चरुं चरुं (म०) । ९० चरुं चरुं (म०) । ९१ चरुं चरुं (म०) । ९२ चरुं चरुं (म०) । ९३ चरुं चरुं (म०) । ९४ चरुं चरुं (म०) । ९५ चरुं चरुं (म०) । ९६ चरुं चरुं (म०) । ९७ चरुं चरुं (म०) । ९८ चरुं चरुं (म०) । ९९ चरुं चरुं (म०) । १०० चरुं चरुं (म०) ।



नीके' नीति' बंठ जो राई । जुरी कचहरी' सिस्टि उनाई ॥  
 जग कर लेव जोगे' तंह' होई । रहे संजूती' निबई सोई ॥  
 राज' संस जिमि जिउ' कर राया । सिद्ध' को' मंद न काहु' भासा ॥  
 मा' निरकार' बंदि' नहि परा । सम कुमर' मा' प्रपने बच ॥  
 निज मूरग कछु' मंपट कीन्हा । बिउर' गर्ब करि घायु न भीन्हा ॥  
 राज नाम जिन' दीन' बिस्तारा । भयो भूम मन घामाकारी ॥  
 सो पछताइ रहा मिर नाई । सब' मठ' घापन' कइ' बंवाई ॥  
 बापा' बंदि मिच्छु महुँ डारा । मेसा गर' मोहु करियारा' ॥  
 दिन' दिन संड होइ नहि छुटा । गुनीह कीम नीक नै कूटा ॥  
 बोहा—रैव कचहरी का पसन इह सिच्छा जिय होइ ।

बी मन बापै घामना ताहि न बापै कोइ ॥२१॥  
 देवी राज समा उजियारी । इइ समा जनु इइ संवारी ॥  
 रहे बसाम घगर कस्तुरी । के सुबाण इंशासन पूरी ॥  
 भीषे पाट पन्बर डारा । बंटे तहाँ जुहारि जुहार ॥  
 ऊंचे राज पाट रजि' छात्रा । तई पर बैठ पुहमपति' राजा ॥  
 धी पुनि निकटवरत जू कहाई । मन बच कप सेवा मन' नाई ॥  
 भीतर पाइ जुहारई सोई । बाहर खड़े पीर बे' कोई ॥  
 सबा समुख सोइ' पियारा । बंकई' तहाँ नाहि' पैसारा ॥  
 तिच्छु कर बिनती बिनई करिई । घायसु होइ सो उत्तर बेई ॥  
 जो कृप होइ सो घायसु होई । बिन घायसु कर सकै न कोई ॥  
 बोहा—राज समा गति देखि नै, यहै जान जिउ होइ ।  
 जो सेबन' सेवा सजम, सबा हजुरी' सोइ ॥२२॥

बोहा—२५—१—मेनी (का) । २—नीब (स०) । ३—कचहरी (का०) ।  
 ४—सुष्टि (का०) । ५—बेस (का०) । ६—सिहि (का) । ७—सजीते (स०) ।  
 ८—राजा (स०) । ९—बी (का) । १०—तिहि (का०) । ११—कहि (का०) ।  
 १२—किमह (स) । १३—मय (स) । १४—निरबासा (का) । १५—बं  
 (का०) । १६—निहि (का०) । १७—कुमर (का) । १८—गय (स) । १९—  
 मंपट मन कीना (का) । २०—हिय मर गरब का घायो न भीन्हा (स०) । २१—  
 जिम (स०) । २२—बंइ (स०) । २३—सुनि (का) । २४—साष (स) । २५—  
 घायसु (स०) । २६—पही (का०) । २७—बाब बाब कर्ब में डारा (का) । २८—  
 करई नाहि (का) । २९—करजाण (स०) । ३०—बंठन बंठ (स०) । ३१—कइ (स) ।  
 बोहा—२६—१—रख साबा (स) । २—भीमपठ (स०) । ३—बिउ (स) ।  
 ४—होई (का०) । ५—बन (का) । ६—बही (का०) । ७—मटकहि (का०) ।  
 ८—कहाँ (स) । ९—नीब कचहरी (स) । १०—से पाबह बे तप करई (स) ।  
 ११—राज मार्ग बिउ सोइ (स) ।

बने रात्र मन्दिर धति सोने । बिन बटाव भीन्ह सब सने ॥  
 साय बंधन बंधन बराऊ । कहि न बार धातहि कर नाऊ ॥  
 कहुं उरनि सुख सबाए । कहुं बने चांद भी ठार ॥  
 ठही नै ना रिदा न होई । परपट दिवस बई सब कोई ॥  
 हउ मन्दिर साय दरना । दरन चाहि बन्दक बौमुना ॥  
 कोऊ बन कोऊ बीचना । कोऊ सतजन कहुं बिधि बना ॥  
 नदी बाट' में सब मई पाती । धातहं उतर पिरे' मुख पाती ॥  
 जो देखी भिन्ह कर धमनाई । मरा हीं फूनी फूलबाई ॥  
 झिक्के सुमन सुगम सुबासा । जानौ बिद्यमान कैनासा ॥

बोहा—उ मंदिर ननु इति कहुं यं कंसाय निवास ।  
त पावै न तन कर बट कहुं बारह मास ॥१७॥

मंदिर रात्रमती परगनी । करबंत भी मति परबानी ॥  
 सब विचार रात्र यहू माई । सीउ न घोर साय बिधि हाई ॥  
 कहि न बार जिहि कन निबाई । बरहु ठे मुख बोति सबाई ॥  
 धरि धरि बदन कर्ण बज पूने । पुनरी मबर उरने मति भूने ॥  
 बेष मरुन पराधरा बरही । नर नाथ सरबर कत करही ॥  
 धति मुकुमार हार उर माक । पुनुराव कं पान धराक ॥  
 मग्या सुमन देर जो परी । बहू बहू उठीं धम महुं धरीं ॥  
 बहनी कही सुमति बस परी । बर गरप परप सब करे ॥  
 जो पतिबला विउ महीं बाऊ । साहू बाऊं दइ पुनि पीऊ ॥

बोहा—देवि मुफडिठा मारि की, इहि मति पाई पीउ ।  
 बनिबन् उर बारी जो यनि, ठेहि उर बारी पीउ ॥१८॥

बोहा—१७—१—इहि (बा०) । २—काटि (बा०) । ३—करै (म०) ।  
 ४—ब्रह (म०) । ५—बिहि के (बा०) । ६—कं (बा०) । ७—पराय न निरति  
 बरहु (म०) । ८—रात्र मुखिय साय (बा०) ।

बोहा—१८—१—पर (बा०) । २—जिहू (म०) । ३—दरना (बा०) ।  
 ४—मुकुंही (बा०) । ५—करही (बा०) । ६—मुकुमार (म०) । ७—दइ  
 (बा०) । ८—सेयो (म०) । ९—करौ (बा०) । १०—ब्रह ब्रह (बा०) । ११—  
 उठी (बा०) । १२—म (बा०) । १३—करै (बा०) । १४—बहु (म०) । १५—  
 मं (बा०) । १६—सा दन कं विउ की विउ कंऊ (म०) । १७—उर (म०) । १८—  
 रिद (म०) । १९—पतिबला उरपाव बत (बा०) ।

एक घास सुपरी जब घाई । काहू मेनी' बात भलाई ॥  
 कहा कोस बार एक ठाउँ । बन में जहाँ न मानुन नाउँ ॥  
 नदी तीर एक मझी बनाई । दमन रिखीगर तहाँ बसाई ॥  
 घासा नाउँ गरी के तीरा' । बजर भाइ बैद्युति तिहि' मीरा' ॥  
 ध्यान बिना तिन काज न कोई । जीयेसि पाँचो हारेसि दोई ॥  
 ध्यानहि ध्यान बेह सुधि छोई । धाप हिराइ रखा होइ छोई ॥  
 मीनी रहै एवा पट बोसै । जो बासै तो ध्यान निधि छोसै ॥  
 जासहुँ दया बिस्ति कर हेरे । जनम जनम के बोख' निबेरे ॥  
 दरसन दिए पाप सब' जाही । पग' परछै संसार बिसाही ॥

बोहा—प्रमटे पाप करा करम", पाप करे पुनि" जाहि ।

पाप करे इन' पुस्प से, प्रमत्त न होहि बिसाहि ॥६३॥

राजहि मुनि यह बात सुहाई । कहा' असो दरसन' कहा' जाई ॥  
 ऐसो सिद्ध पुस्प जो सुनीजे । उनहि' समे जस दरसन कीजे ॥  
 तिनही' कास मन माहो' बो' भाई । जसा छतरपति कीन्हु' बढाई ॥  
 जस तिहि नरी निमर' अब धावा । राजा सप्त खबर' बरजावा ॥  
 कटक भोगऊ हट बैठाए । बाहन छाड़ि पाइ मन धारा ॥०  
 होइ सेबक मीगुहेसि संम लाई । धनमुच" मझी ठाड़ भा" जाई ॥  
 सिद्ध पुस्प तिहें बैठ धकेला । धापहि गुरु धापहि बैसा ॥\*  
 तारे लाइ रखा मन" भाही । मुरत न कोऊ धोर' पुन नाही ॥  
 अब ठाड़ बीटी बड़ि बारा । धालि खोल तब सहज निहाए ॥†

बोहा—हेरत धिन" राजा सपकि" पाइ" गहे निर नाइ ॥

सिद्ध पुस्प पुनि कृपा करि" मावा सीन" उठाइ ॥६४॥

बोहा ६३-१ नीकी (स) । २—रुहाई (का) । ३—नीच (स०) । ४—  
 पूर (का०) । ५—होइ (का) । ६—तीरा (स) । ७—होई (का) । ८—हुप  
 (का०) । ९—बैस (का०) । १०—मिच (स०) । ११—धापहि के पर पाप हिराहि  
 (का०) । १२—स० प्रति में इस स्थान पर कोई पाठ नहीं । १३—बिन (का) ।  
 १४—प्रर न प्रमटे (का०) ।

बोहा ६४-१—कहा नि (का) । २—बछै (का०) । ३—कहि (का०) ।  
 ४—सेबक (स०) । ५—धनमुच तिनो (का) । ६—तिहि (का) । ७—सै (का०) ।  
 ८—कष्ट (का) । ९—तीर (स) । १०—खोर परजावा (का०) । ११—जस समुच  
 (स०) । १२—मयाई (स) । १३—तन (का०) । १४—मासै जाही (का) । १५—  
 धिन (का०) । १६—मुपक (का०) । १७—पाव (स) । १८—कै (स०) । १९—  
 मिये (स) । ०—बह बीपाई का० में नहीं है । \* बह बीपाई 'स' में नहीं है—  
 यह बीपाई 'स०' में नहीं है ।

राजा के प्रतीकता' देखे । कीन्हि मया' बिचख दिखेले ॥  
 के धारर बैठक डिग दीनी' । धी मगुहार बहुत बिबि कीनी ॥  
 राजा रिबि' इयास जब जाना' । बाबा बिदय' बचन मुख भाजा ॥  
 नाम कील गति होइ हमारो । साईं छौं नहि नैकु' बिन्हारी' ॥  
 सो' बहु कीन पुष्य करवाइ । बिन बिज बीन कीन संसार ॥

का तिहूँ रूप कहाँ तिहूँ बासा । हम सा बूर कि हम ही' पासा ॥  
 धी पुनि कछु अपनी सुबि ताही । धी' हम कित धायें कित जाही ॥  
 पादि' कहै हुंते' बहै सब मये । जीरन' हुने कि उपये मये ॥  
 कछु न समुझि परै निज बाठा' । झूठी माया मी मग राधा ॥

बोहा—हम से मुझा' मरबिया कित जम' जय माहि ।

मामा ही क मब मयन, नाथ नाथ' मर जाहि ॥६३॥

सिद्ध कहा राजा मुन' माधो । निज यह मरम बही हीं ठामो ॥  
 धी मुनि ममुझि बात उर बारसि । धपम बरनु' कहै' मुमम निहारैसि ॥  
 साईं एक बहै सब ठाऊ । मुन ताके ताहि बिन्हु नुताऊ ॥  
 भिबर निगुन धनन धमेपा । बरम रिमि' सौं जाइ न देसा ॥  
 मुझा' न बड महम परकाया । ज्यो' बेजनि' सब ठीक प्रकाया ॥  
 बट धीषट घटर कछ नाही । निम' समाइ रहा सब माही ॥  
 सोई सब सतन कर सेमा । धीर न संगी धार धकेना ॥  
 ये बहु सल जो देखि दिनाई । पतन सब मही' रहा ममा' ॥  
 ता' बिन करनी' कछु न हाई । मूढ धीमन जिम्ह' मग न की' ॥

बोहा—एस' सब रंजन मुना वे' बहु धनन रंम ।

जो निज बाकी निरंग रंग ठामो मया न जंम ॥६६॥

राहा ६३-१—धरम्या (का०) । २—माया (का०) । ३—बाही (स०) । ४—  
 हीं (स) । ५—निगुन (का०) । ६—दिनु (का०) । ७—निबुध (स०) । ८—  
 हाही (का०) । ९—धन माहि (स०) । १०—सौं (स०) । ११—पुन (स०) ।  
 १२—धा (का०) । १३—कहादि क (स०) । १४—जिजरन हाउक (स०) । १५—पाया  
 स०) । १६—मये मरे के (स०) । १७—धाय (स०) । १८—झोऊ (स०) ।

राहा ६६-१—बहु (स) । २—जम (का) । ३—गम (स०) । ४—  
 हे एक (स०) । ५—धायन (का), धरिन (स०) । ६—दिष्ट न मय्य (का०) ।  
 ७—दाप सों दिहि मुन धराण (का) । ८—पुनि (स०) । ९—जमन मय मयान  
 स०) । १०—वे (का) । ११—दिह (का०) । १२—करै (का) । १३—बाह  
 का) । १४—दीधी (स०) । १५—जय (स०) ।

धब तोहि तारै' नहि समुझाऊ । समुन बेति निज कहै सुनाऊ ॥  
 जो बह एकै' सिमट' समाया । पट घोपट ठा बिन नहि घाना ॥  
 त्यौं ठोरे' पट तू' पुनि सोई । निरलि बेख निज घोर न कोई ॥  
 जो बह सो तू' सिमट' समाया । मुझा न उपजा गया न धाया ॥  
 जो तू' पादि धंठ पुनि सोई । मन' उपाधि न मानहु कोई ॥  
 यहै उपाधि जो घाप बिसारति । मूल घोर को' घोर बिसारति ॥  
 छाड़ि धमर पर भिरतक होई । ठोर कुमठ" काम भै ठोही ॥  
 तोहि यह भिष्या भरम जा" भयऊ । घोरहि ठे घोरहि हूँ गयऊ ॥  
 ज्यो" यथाह्य' माया अधिकारी । सपने मई" होइ जाइ भिखारी ॥  
 बोहा—माया निधि सपना जयत नीर मरम प्रज्ञान ।

छोड़ साब" समझ' सबन', जावै" कष्ट न निदान ॥६७॥

पै यह जान घाब' तोहि नाहीं । तू' उरमझ' बाड़े तिन माहीं ॥  
 तोरे जिय परतीव न धाबै । मम मनीन संका उपजाबै ॥  
 मारन के जस ज्यो गहराना । मारण जस ज्यो होइ ठहराना ॥\*  
 रतन बुरा' गबरे जस माहीं । बिना धिरानै' सुभ्य नाहीं ॥  
 ताते जो तोरे यह इच्छया । सुन उरपार बेठ तोहि सिच्छया ॥  
 मयम मांज मन बरपन काई । तब निरमल छवि" हैइ रिखाई ॥  
 सोहैं" स्वांस सबह मसकपा । सहजहि जाय रैन बिन पसा ॥  
 ताछौं जग सोई मन मांजै । मांजै' म्यान धंजन दिन धांजै ॥  
 उबर' मैन म्यान हिय होई । रहै न दैत रहस हाइ सोई ॥  
 मुकठ होइ असल जब सुभै । सहजै' सकम मरम तब सुभै ॥०  
 बोहा—बुधिधा पवन मवान मन तन मटकी बधि बीन ।

मबै" मही माया निकसि पड़ो" रह्यो होइ बीन ॥६८॥

बोहा ६७—१—तोरी (का) । २—एकी (स) । ३—समठ (स०) । ४—  
 ती (स०) । ५—ठोरे (का०) । ६—ठै (स०) । ७—ताछौं (का) । ८—अमठ  
 (स०) । ९—मध्य उपाध करत बिन (का०) । १०—बुन (स०) । ११—मुक्ति  
 (का०) । १२—जिय (का) । १३—जो (स) । १४—यथाह्य (स०) बंधा  
 (का) । १५—मै (का) । १६—सांझ (का०) । १७—सपना (का०) ।  
 १८—समझ (का) । १९—जाकइ (स०) ।

बोहा ६८—१—प्रस (का) । २—ती (स०) । ३—बाड़े उरमझ (स) ।  
 ४—तन (का) । ५—बुरा कबरी (स०) । ६—उरावै (का०) । ७—मूप (का) ।  
 ८—छोहैं (स०) छोहैं (का०) । ९—मांज (का०) । १०—घबराई (स) । ११—  
 मवन (का) । १२—होरई (स) ।

\*यह बीनार्इ केवल 'का०' में है । ० यह बीनार्इ केवल 'स०' प्रति में है ।

मद" म्योहार करम मुन मोनों । जानि सुराज कही" ही ठोसों ॥  
 योहि क्याम बीन्द बड़ यजू । ताहि" मउ का बहुवन कर यजू ॥  
 बीगूक" जनेसि भरम पप धारं । राव करेसि सउ बम' बिपारं ॥  
 होइ न दुखी राज" महु" होई । राव रंक सुख मानहि दाई ॥  
 राजा जब निपाव पर धारै । सीप छाडि क सप रिडाव ॥  
 राव रक सरबार के जाने । समुझि दुष पानी निज धारै ॥  
 यत्रहि" यह कूझहि" ठहि" बाण । कन निपाव" कौन्हनि सघाण ॥  
 का रंकहि बरिपार मडावै । दिहु" पपटे राजा दुष पावै ॥  
 राव रंक भिन्ह कर जयजय" । दिनु" क रैम रक तष" राजा ॥

दोहा—राव रंक परजा मरै राजा सब कर" छाड ।

यह सपन के राज व" गरब करो जिन काई ॥६६॥

कहे' धमीय' बचन मुझाई । पुनि कछु डिड पृथ मज भाई ॥  
 हुसवि हाथ भारी मे' हारे । बार सुरक' पन सरस निकारे ॥  
 तीन मण्डन एक मभीरे । अति मुहर रज मरे रछारे ॥  
 हारे रहनि गरज के अंगे । कह ईशा पूरा भइ घोरे ॥  
 मल दुपाव न घंठरजामी । बीन दमान जयत कर स्वामी ॥\*  
 बाहा ठं परदाव निज धामी' । बचन बिरस सीका पुनि' पाया ॥  
 मो तड" कुन फरा पन पाके । वी" कर ताहि निर्म य ठाह ॥  
 तीन पुन जोपा बमवारी । बापी एव जयत जनिपाये ॥  
 बागे बुद्धिबउ बड़ नामा । छाडु मुनीन भरम घनूठपी ॥

बाहा—परमारय स्वारय महिउ डिड मुपार' संवार ।

रुनि भरेग बिग रिपा", बस्यो कनेस" निवार ॥७०॥

१३—या (का०) । १४—कँहल हूँ (का०) । १५—निहि घर (का०) ।

१६—जिहि (का०) । १७—मउ (म०) । १८—द्वैय (का०) । १९—मे' (का०) ।

२०—यत्रहि तोहि पूखै (का०) । २१—तिहु (म०) । २२—न म्याव कीन (का०) ।

२३—मुन (म०) । २४—पपटम (का०) । २५—अपरजा (म०) । २६—निहि

(का०) । २७—निहु (का०) । २८—को (का०) । २९—पर (म०) ।

दोहा—७०—१—बहिन (म० का०) । २—धमी (म० का०) । ३—दूह

(म०) । ४—माह (म०) । ५—रुहिन (का०) हुनि (म०) । ६—दुरक

(का०) । ७—दूर (का०) । ८—जागर (म०) । ९—घाई (का०) । १०—बसे

बाई (का०) । ११—विदूत (का०) । १२—ते डिड (म०) । १३—विपारण (म०) ।

१४—निपार (म०) । १५—धपा (म०) । १६—सैज (का०) ।

बाहर मन्त्री तिङ्गि' जब घावा । फटक' साथ सम्मृत' छै' धावा ॥  
 पर फर यह फरहिरा उठाय । गज तुरंग गुग घासन घाये ॥  
 रहम तुरे पैरा' घर पाऊ । पडा निरद' बडा विष पाऊ ॥  
 घान' भरा न अंग घमाई । दूता जग बहे कीगह' कमाई ॥  
 रज घस पीति नपर कहै पला । चौगुन बड़े रूप छवि कमा ॥  
 प्राइ बार जब कीगह उाारा । नन राम बाइ मंदिर गगु घाय ॥  
 प्रावा जहाँ बैठि पटरानी । बिहँसा' पसि बही बिहँसानी ॥  
 चारों फर भोरे महीं गए । प्रो तिग' क' गुण बरन गुमाए ॥  
 सुनि रानी बिनसी गुण गावर । रनन मिस मुख भस' उजावर ॥  
 दोहा—मिज निहृष निस्वाम कर कीगहमि रहस बडाव' ।

ममा' पुन घाजहि भवा पर बाडा' पित जाव ॥७१॥

जब रानी मा' गुम धपिकाक । उठि मंजन की' कीन सिपार ॥  
 सजि बारह सोरह धनि बनी । सुवर प्रविक रूप रंग सनी ॥  
 मई मिस समो केमि कर मपऊ । बिहँसत कंठ सेज पर गपऊ ॥  
 भर भंजवन गह कंठ मगाई । रहस पसत धन बोज रिखाई ॥  
 उपजी काम घटा' दुहुं माय । मिस मए एक उठी जनबोधा ॥  
 घमजस' बूद म्मक जहै परी । पिन बेनी चातक रट करी ॥  
 गबर मोर अँच कुहकाही । छुरपंट' म्मीनुर म्मकाही ॥  
 पीन हिमार उठे म्मकभाय । भूमहि बोज केमि हिबोरा ॥  
 मानहु' प्रकट घाव' चौमासा । चुबन छन' भए घाक जबासा ॥  
 दोहा—तपनी जोवन समूब महै नामि सीप बिहि भात ।

स्वाति बूद घावा जहै हुसस' हिरवै भै सात ॥७२॥

दोहा— ७१—१—निकल (स०) । २—फटक (स०) । ३—घोड़ित बैठावा (स) । ४—फिर हर गीह किण्हण (स०) । ५—मान (स) । ६—निरलर (स) । ७—की (का) । ८—क्रियस समाई (स०) । ९—बिहस (का) । १०—से (का) । ११—तिह (का०) । १२—कर (स०) । १३—सहित (का) । १४—जबाव (का) । १५—जामहु (का) । १६—क्रिय बाडा (का) ।

दोहा— ७२—१—मयो (स) । २—का' में नही है कह (स०) । ३—कीस (स०) । ४—तिस (का) । ५—बीज (स०) । ६—कया (स०) । ७—प्रमि जस म्मक म्मक तिह परी (का) । ८—पिन चाबै बेनी चातक रट कर (का) पम बेनी चातक रति करी (स) । ९—सुवर कंठ (स०) । १०—माक (स०) । ११—घायो (स०) । १२—बिचहि बरै है (का) बंजत छुर मए (स०) । १३—हिस (स) ।

सीपी स्वाधि बूद जब पावा । विधना जस सों माधि उगावा ॥  
 रानी गर्भवति अब' सुती । धातद बन्ध हुमनि' सब सुती ॥  
 पुनि पूरन जब भए दग मापू । पुष अब मा दडा हुमापू ॥  
 गाई करि' मिति मयी बघाई । पारहि मानि निछावर धाई ।  
 पतिक धाइ सा' परी बिचारी । मूँ' है रात्र पाठ अधिकारी ॥  
 होइ साग सुस रह्य' बघावा । बरि' तिमन महार मुग्धा ॥  
 बंधु' हित्ठ टीका से पाए । जे पाण पहिराइ' पठाए ॥  
 मई पुनि छरी परवा गाऊ । तेहँ' निमन ग्याला मर काऊ" ॥  
 कनक पार सब लाग जिमाए । पुनि सा' पार नहार न घाए ॥  
 दाहा—रात्र रक बंधु हित्ठ' किन जका' अघानार ।  
 धाइमु' मा ली जाबही' कनक बराऊ पार ॥७३॥  
 दुमरे बरप बहुरि' किर राना । परमवठ भइ सबही बना ॥  
 दसए मास पुठर मा' धागा । मा' ठस रह्य जो पहन बनाता ॥  
 तिमरै पुष जस्य पुनि भोग्हा । समोइ धानप तिमूकर' कीग्हा ॥  
 चीन पुठर हुत' जो होने । चीनों मुग्घर मरत' सजने ॥  
 बडा सा बाप पैकनी पाऊ । बनें देखि दाई' किन पाऊ ॥  
 मुगरी बाठ बहै प्रति मीठी । हिया सराय बडे अब पोठी ॥  
 मन्मथा' बरठ' पन्नु" धावै । पू" मां करै मुग्घर उपजाव ॥  
 बगहका" परा पानने मूर्त । धानव हार देग मन पून ॥  
 दाहा या पुत्र किन पर धविपारा । हुवा बौन्ध प्रम भा उजिपार ॥  
 दाहा—रात्र गिच्छ मुत्तमप' मया गया कनस सब" बुर ।  
 यही' दांवा' मुग्घ मई" हुती बही दांन बिधि पूर ॥७४॥

- दाहा—७—१—मा (ग) । २—वेद्य महि (कां) । ३—निरमल (ग) ।  
 ४—जनकहि (कां) । ५—पनरुं (म०) । ६—पु (कां) । ७—पौइइ (म०) ।  
 ८—रक्षि (कां) । ९—इर (स) । १०—किर  
 ११—प्राप (स) । १२—नीरे (ग) । १३—बधुहिनु (ग) । १४—पु (ग) ।  
 १५—हुवा (म०) । १६—जाका (कां) । १७—गाऊ (कां) । १८—माइमया (कां) । १९—पावही  
 (कां म०) । २०—रत्न (कां) ।  
 दाहा—७४—१—पीर (कां) । २—भै (म०) । ३—भ (स) । ४—म  
 (कां) । ५—तिहि (कां) । ६—मप हुये नु (कां) । ७—छरी (कां) । ८—  
 जनें जिय (कां) । ९—मत्रिका (म०) । १०—पार (कां) । ११—पटनिया  
 (कां) । १२—कीन बाक क३ (ग) । १३—नहा परै (कां) । १४—रुमहि (कां) ।  
 १५—जो (कां) । १६—पुग (ग) । १७—इही (कां) । १८—मानिक (ग) ।  
 १९—मै (कां) । २०—हुन (म०) ।



नीचे गरमबत भइ रानी । भा' तन कनक बुपादस बानी ॥  
बलन' घोट हीनक बनू' बारा । भा' इमि भांत गाठ उजियारा ॥  
 छोन पटा' ज्यो गुरज समई । बटा सजोन देइ दिखराई ॥  
 ठंठे मरभ मीळ बड' बारी । मइ तिहुँ जोति मात उत्रियारी ॥  
 ज्यो ज्यो बंद दिनहीं' दिन बाई । त्यो त्यो पंग जोगु' दुठि काडे ॥  
 अर दिन पूज जनम मा तागु । निस महुँ' भयो दिवस परकामु ॥  
 दिया जोति देयत मज मई । बनू रवि किरन प्रकासक भई ॥  
 मुहुँ' पर बांर उवा बनू घाई । जोत अकाम हीगु दिखराई ॥  
 देव जोल पुस्यौ सति पटा । कत यह पीर अर परगटा ॥

बोहा—बई सोच सोचत भकत' पर स्वाम उर भंब ।

अजहुँ प्रपट सो हाय हिय अग' जो कहे कसंक ॥७५॥

बोहा—७५—१—मय (स) । २—विस्तर उबत होय (स०) । ३—असै बाक  
 (का०) । ४—मय (स) । ५—झीने पट (का) । ७—ठंठे (स०) । ८—विज  
 (का) । ९—तिन्ह (स) । १—दिलै (का) । ११—जोति दिव्य (का) ।  
 १२—महुँ (का०) । १३—अ' (स) । १४—भुकत (का०) । १५—अपत बु कहिय  
 (का) ।

बीवी रैन मूर परभाते' । निक्खा ठवहि' हुठा रंग राते ॥  
 निरसठ विन बाटी उबिपाटी । पीर' मयो तन पाएत पाटी ॥  
 तिहि की कटक घाम ली माने । जब निक्खे' ठव मो' गठ ठाने ॥  
 पानी' महन कौन मुण परे' । रबि बहू मप मुरठ' जब" करे" ॥  
 देवठ' त्नाम केय तिहि' सीसा । कीन्हू बहू जनु तिहि" की रोसा ॥  
 तन" कारोष' लगाइ रिखाव । बहू देव प्रम महन बठाने' ॥  
 बट महन ठीसो" पुनि हो" । राहू" रोम देहू विन कोई ॥  
 मा" तिहि' कन सदा तन" राहू । गजहि' बाय एक कर्हू बाहू ॥  
 कन देहू" बर जनु घौवरा" । रहे" म घंज म्प की कप" ॥  
 ठाकी घबि कर्हू कौन बठाने । घोहि' कर्हू जो बरखे मो जाने ॥\*

बोहा—इहि मरुन बाटी मई कप क्य तिहि रूप ।  
 कन कन कर्हू जाम बहू वा मुण म्प घमूव ॥७६॥

- बोहा—७६—१—परभाती (का०) । २—कठ (का०) । ३—प्रम (का०) ।  
 ४—परी लजारी (म०) । ५—निक्खे (म) । ६—निक्खे (म०) । ७—सोफठ  
 (घ०) । ८—जानहू कहन (म०) । ९—परी (का) । १०—प्रम (घ०) । ११—  
 विन (म) । १२—कप (घ०) । १३—देया (म) । १४—किन्हू (घ) । १५—  
 निक्खे (घ०) । १६—तिहि (म०) । १७—घावो म्प (घ०) । १८—बुनाई  
 (का) । १९—एई (म) । २०—मो" (का०) । २१—राहू (का०) । २२—  
 मे जिन्हू (म) । २३—तिहि राहू (का०) । २४—मम (का०) । २५—घवठाव  
 (का०) । २६—बहू (का०) । २७—मी कप (का) ।  
 \*यह बोवा" का० प्रति में नहीं है ।

छत्री रैन भा' छठी बपाबा । मोए' दिवस पुनि नाथं पराबा ॥  
 बरन क्व बुति दामिनि कय । इग्द' त नाथं दमली परा ।  
 सेवा रई पाइ बा चारी । सीकहि रूप राज की' बारी ॥  
 पयो प्यो बई चांद लों बारी । रयी लयी होइ धमिन उबियारी ॥  
 भई कब' पाप बरन महु' बारी । सुदिन बिषार पवन बंसारी ॥  
 पंडित कतिब दिनन' पडाबा । पुनि बिन पका धरम सब' धाबा ॥  
 पढ़" बिबिन पंडित हूँ धाई । नागि गरुड धपड़" धरकाई ॥  
 पुनि पंडित जिन्ह" धरम न' पावै । लोक ज्ञान" सो ठाहि बतारै ॥  
 पंडित भटा" भा' बटमारी" । गूढ" हुइ उमट पडाबा वारी" ॥

दोहा—प्रब ऐसी पंडित मई, क पंडित तिहि देख ।

बलि बुधि ता नारि की सबन" कीन्ह धाइस ॥७७॥

महाराज पब सोई बारी । नारंग फरी होइ रतबारी ॥  
 धी धस भाग साग किहि माका' । ते नारंग धाई' जिन्ह' हापा ॥  
 मई संबोग ठबनि हूँ धाई । दुइज पूज पुयो दिखराई ॥  
 पुरम मई सोरहा करा । धम बोन्ह बुति मछ निरमरा ॥  
 निरकत बदन नैन सिमराही । सॉठ मुख' धमी सु धरन माही ॥  
 पर सधि पहुँ सर जाम न करी । बह सो कसकी यह निरमरी ॥  
 धो सधि पिबन एक निस' होई । यह जम धई धरववा सोई ॥  
 पुनि जो गहु गविरर दुखदाई । सो इग्द' के मित धरन रह्यई ॥  
 जिन' धमाबस हिय" सधि बरी । सो म" सांहु पाय तर धरै ॥

दोहा—एही' जाज सजाइ मन" मा" पुन्यो सधि छीन ।

वे ताने कुछ शाय रिपु' ते याके' धानीन ॥७८॥

दोहा—७७-१-म ((स) । २-तई (का) । ३-तैसो नाम (का) ।  
 ४-परा (का) । ५-कै (म०) । ६-क (का) । ७-ने (का०) । ८-पैवारी  
 (का०) । ९-वर्ष (का) । १०-सो पाबा (स) । ११-पुनि (स०) । १२-  
 पडी (का०) । १३-बिहि (का) । १४-बुटाई (का०) । १५-इहि धपभां तिहु  
 नादि सुताई (का) । १६-बिठा (स) । १७-मया (स) । १८-पितसारे  
 (स) । १९-करहुइ (ग) । २०-मारी (का) । २१-किन्ह (स०) । २२-  
 सबाहि (का) ।

दोहा -७८-१ हातां (स) । २-पावई (स) । ३-बिहि (का) । ४-मई  
 सु (का) । ५-एक जति मूल पति (का) । ६-मनु (स) । ७-पै (का) ।  
 ८-एक छोट (का) । ९-तस (स) । १०-उपाठ मिससरन (का०) ।  
 ११-जोन (का) । १२-धये (का) । १३-इहि (का) । १४-इनही (स०) ।  
 १५-जनु (का) । १६-मयो (स) । १७-झान (का०) । १८-'का०' में नहीं  
 है । १९-ताके (का०) ।

मेरे जान तिहुँ पुर गाहीं । ताके कन घोर पनि नाहीं ॥  
 दुटिय नास्ति' एकी जग प्रानु । कहि न आय तिहि' रूप बखानु ॥  
इन्दर' प्रायि तिनके भयस्यरा । सबकी मन ताके मन हरा ॥  
 मैन समुद्र' रतन जिन हेरा । होइ मन मीन' भय तिन्हु केरा ॥  
 जो पुनि गौर' मोर सों हेरै । कटियां परसि छूट किन्हु' केर ॥  
 बिस्ति बही सो दौर' अन कीन्हैसि" । भयकठ' पतक डीर पुनि कीन्हैसि ॥  
 भयपसि" बरनी हरा बिछाई । जियत मुए पुनि छूट न जाई" ॥  
 तरक तरक जिन बीन तपाना" । इन्हु जारा" पर कहीं छूटाना' ॥  
 जो घस जोन हरि पुनि" हेरा । प्राय हिराजा सो जिन हरा ॥\*

दोहा—जो पुनि कबहु' प्रकाम तै" हरे मैन फिराइ ।  
 सबै देख हाइ किनकिना पिरा" थहे" तहै राइ ॥७६॥

दोहा—७६-१-नामत (स०) । २-तिहु (स०) । ३-इदमोन बिहि की  
 (का०) । ४-तिहि को (का०) । ५-समद्रहि अन जिन (का०) । ६-मैग बिहस  
 तिहि (का०) । ७-कूर मूर (का०) । ८-बिल्ला (का०) । ९-बहु केरा (का०) ।  
 १०-सो अन (का०) । ११-दीनस (का०) । १२-भयकठ (का०) भयकठ  
 (स०) । १३-जाहिम (स ) । १४-करानन छार् (का०) । १५-पाई (का ) ।  
 १६-निबाना (स०) । १७-जारा (का०) । १८-छिटाना (स०) । १९-फिर  
 पावा (का०) । \*जिन हरा सो प्राय हिराजा (का ) । २०-किची (का०) । २१-  
 जिन (स०) । २२-करा (स ) । २३-मछ टहरा (का०) ।

तिहि' का रूप कितनही' घट ध्यापा । भूसा जयत वैश मुन घापा ॥  
 जग म जीठ म जानी कोई । जय बिन जीठ जोठ एक सोई ॥  
 समा समा मही' बह कहानी । मुख मुख इही' प्रेम पुनि बानी ॥  
 नमठ पतंज हूँ जाही परा । बही बयन दीपक बहु बरा ॥  
 जगत' घास राख मन माही । धी किहि' के पूरै' किहि' नाही ॥  
 वै निवान पावै' बहु' कोई । बिहि' के लगन' सखै' पुनि साई ॥  
 ताके' हाथ प्रम मर व्यासा । धी' केहि' बेह करे मतबाला ॥  
 बाकी रीझ बही' वै जानै । धी' केहि'क' भ्रापन करे' मार्ग ॥  
 मिसबो' हाथ काहु' के नाही । सोई' मिसै' नहै' जिन' बाही ॥

बोहा—बयन कर्मन ठाकर बई जापर होइ बयाम ।

समी' परै' भ्रापन करै' रीझ बेह बयाम ॥८०॥

माटिन जब धरज मह कहा । मुनि राजा मोहित होइ रहा ॥  
 धी मुनि नारि रूप कर माळ । सायसि प्रेम बान उर बाळ ॥  
 इहि' निज घटक छटक जिय परी । नम उर' नारि खोंच होइ घरी ॥  
 मन पंघी बरफा घोहि सासा । ठन' ठजि जाइ रहा तिहि' पास ॥  
 मुना बई निज रूप निकारै । मिस ही बिन फिर बाठ बनारै ॥  
 माटिन एक बात कह मोगो । बतुर जान बुझन' ही ठोसो ॥  
 तै' सो नारि पबमिनि क्यों जानी । कौन कौन धंभनि' पहिचानी ॥  
 कह नख छिछ सिपार सब' बाका । बिहि' बहि' जौन भंग तै' ताका ॥  
 जीसो' निज उरुम न मुनीसै । ठीसो' मन भरमक न पठीसै ॥

बोहा—भाव जो मनरथ जो रपी', धी' स्वारथि' पुनि सोइ ।

तळ' सोच समझै' बिना मन' पत्नीठ न होइ ॥८१॥

बोहा—८-१-विभूक (स) । २-बट पट (का०) । ३-मै (का०) ।

४-बटै (स) । ५-बहु (का) । ६-जयत (स) । ७-मघ (का) । ८-

पुनि (स०) । ९-किन्ह (म) । १-गुरुपै (का) । ११-किन्ह (स०) ।

१२-पाइहि (का) । १३-सो (का) । १४-विन्ह जी (स) । १५-

सिख सिखनी (का) । १६-सागे (स) । १७-पुनि (स) । १८-पुनि (स०) ।

१९-किहि का (का) का कहं (म) । २०-ई (का) । २१-मिनाय (का) ।

२२-बिह (का) । २३-समै (का) ।

बोहा ८१-१-भय (स) । २-धो (का०) । ३-मन तजि (का) । ४-

पुसो (का०) । ५-संकन (स) । ६-बो (का) । ७-विन्ह (स०) । ८-जो

सहि (का) । ९-ठीसहि (का) । १-रने (का) । ११-बा (का) ।

१२-ठी मुनिज (का) । १३-बीय (का) ।

महाराज हियं संक मिटाऊं । चारों गारि दखान सुनाऊं ॥  
 एक हस्तिनी एक सखना । एक बिजनी एक पद्मनी ॥  
 पहनें कहीं हस्तिनी गारी । जा महीं हस्तिन' के गति सारी ।  
 धम मुमर' घीबा प्रति छोटी । हया मो निपट कहीं कटि' मोटी ॥  
 घाबे उन पयप मर बामू । प्रो मन खोट करे बिस्वासू ॥  
 प्री महार बहुनै पुनि आई । पछवाई गति जाइ न पाई ॥  
 गज गति चाम काय पुनि नाही । जयत रंय बिदर्ष बहुं छापी ॥  
 पिठ रति' मुल संतोख न करे । पुन्य पराए पर बिसे' भरे ॥  
 डर धर माज न मन महीं घाने । बिन घांरुय नछु संक न मानै ॥

बोहा—जो हठी हठ तब तबे जब घांरुय सर खाइ ।

मोर मूँ न मुम बचन ए हस्तिनी मुमाइ ॥८२॥

दूज कहीं मंखिनी गारी । सिध सुभाइत मान उठारी' ॥  
 उर कति' मुमर कहीं बीवनी । त बोझ छाड़ी प्रति बनी ।  
 बल बिधम धो धमप महारो । जनें विप ज्यों चाम करारी ॥  
 राखे बिस्ति नयाइ उरही' । रुज बदन हँसत मुख नाही ॥  
 मोहन मांस बहुत बदि मानै । प्राय हुनठ' न मुका घान ॥  
 मूक' मै उठे बमारोष बामू । जैसे बहुत दिनत करि माँसू ॥  
 रोवां होहि जांप' उर कैली' । घेक' न करे परब मरबीली ॥  
 बचन न सहे रोम' प्रति घना । घपनें सिर पर घोर न घना ॥  
 पिठ' उर केसि सदैं मख माबै । रगहूँ मै रिम रोस घनाबी' ॥

बोहा—पर पिगार देने पुत्री विधनि ज्यों गुरराइ ।

घपन हो मुख सों' मगन ए संखिनी मुमाइ ॥८३॥

बोहा—८२-१-इहि (कां) । २-मै (कां) । ३-हस्ता की (कां) । ४-  
 कर पय मकर गरी (म०) । ५-खान (कां) । ६-कटु (म०) । ७-माही (कां) ।  
 ८-प्रति मुखहि (कां) । ९-प्रिठ (म०) । १०-मै (कां) ।

बोहा ८३-१-गुबारी (कां) । २-प्रति मकर (म) । ३-खीन (कां) ।  
 ४-चातनी (म०) । ५-घराही (कां) । ६-उतगही (कां) । ७-परापे  
 (कां) । ८-हमति (कां) । ९-मुख (म०) । १०-जा मुग (कां) । ११-  
 घनी (कां) । १२-सग न करे मंजर मनी (कां) । १३-त्रोष (कां) ।  
 १४-कौना (कां) । १५-पाव उर मनें नप पाबै (कां) । १६-त्रिपारि (म०) ।  
 १७-मै (कां) ।

तीर्थ नहूँ बिचनी<sup>१</sup> नारी । रामिन<sup>२\*</sup> धंग साने जनु ठारी ॥  
 जे जे धंग जौन गठ<sup>३</sup> गन । गबै होंठि छाही बिष सने ॥  
 बरन पंच एन जान्ठ<sup>४</sup> निबारी । जैसी धगधर एत प्रद्वारी ॥  
 महा बिचित्र रूप रग भरी । बोलन रखना मीठी पारी ॥  
 देखि सा नाम मराम सबाही । जोने माइ डोरी<sup>५</sup> पाठ बाही ॥  
 सिमावत रिख रोए न जानै । हुमत<sup>६</sup> मुनी सदन मन मानै ॥  
 मोहन प्रसप प्रस्त दोइ जाए । पाए पुहुए सोपे बधि राई ॥  
 पठिबत राखि करै पिठ सेवा । पिठ परमेसर<sup>७</sup> धरै नहि भेवा ॥  
 पवमिनि सौं दोइ मुन बटि होई । धीर बनाव भाव सब सोई ॥  
 दोहा—बिचनि<sup>८</sup> कुमुनि के घरन धर<sup>९</sup> मबासना धंग ।

पवमिनि राठी<sup>१०</sup> कबैस<sup>११</sup> ज्यो एन सुवास धमि धंग ॥८४॥

जोने नहूँ पवमिनि नारी । पवम गुपंच सुर<sup>१२</sup> उजियारी ॥  
 कबैस<sup>१३</sup> बरन धर<sup>१४</sup> कोमल धंग । वाए मुबुध डोली<sup>१५</sup> धमि धंग ॥  
 ना धति पाठर मा<sup>१६</sup> धति मोन । मध्य भाव सुठि<sup>१७</sup> लाब न छोटी ॥  
 बरन कति जनु पुग्यो<sup>१८</sup> बंधा । सरबर चिये<sup>१९</sup> बंध दुति<sup>२०</sup> मंदा ॥  
 सधि ज्यो सोरह कना<sup>२१</sup> संपुरी । प<sup>२२</sup> सधि माहि कसक धचुरी ॥  
 सधि महुँ<sup>२३</sup> सोरह कना बखानी । पवमिन सोरह धंगनि जानी ॥  
 बार धंग धीरव सधु<sup>२४</sup> नारी । बार सुनर नहुँ<sup>२५</sup> खीन<sup>२६</sup> संधारी ॥  
 जने हस ज्यो नाम मुहाई । बोसै पिक ली तिये मिठाई ॥  
 धौ धति चतुर कंत धित जोरे । सेवा सौ मल<sup>२७</sup> कबहुं न मोरे ॥

दोहा—मन सुसा<sup>२८</sup> भुकुटी कटिल मन बचन<sup>२९</sup> गति मीन ।

इत धंगनि देखी<sup>३०</sup> सो बनि सो<sup>३१</sup> पवमिनि परबीन ॥८५॥

दोहा ८४-१—चतरनी (का) । २—ममल (का०) । ३—धंग (का) । ४—  
 सबाहि (स०) । ५—बने (स०) । ६—बोठि लबाई (का०) । ७—जस (का०) । ८—  
 तीर्थ (का) । ९—बोसह (स) । १०—हस्ता (का) । ११—गराए (का०) । १२—  
 चतुर (का) । १३—धो निदासना (स०) । १४—रानी (का) । १५  
 कोमल (का) । \* समिल = सुकुमार ।

दोहा ८५-१ सोरह (का) । २—कमल (का) । ३—धो (का) । ४—  
 कोमल (स) । ५—होइ न (स) । ६—सौं (का०) । ७—कौनु (का) । ८—  
 मुख (का) । ९—करान (का) । १०—ऊ सदान हिवै (स०) । ११—से (का०) ।  
 १२—लखि (स) । १३—ज्यो (का) । १४—कई (स०) । १५—मन पैक (का) ।  
 १६—मुबा (का), सोबा (स) । १७—बचन (स) । १८—बु (का०) । १९—  
 मब (स०) ।

घोरहू प्रग कहूँ जे तेऊ । धीरा कही सुनी नर वेऊ ॥  
 प्रथम केस वीरध धति माषा । घो' वीरध प्रंगुरि सुधि हाषा ॥  
 वीरध' रेऊ घोष तर छोहूँ । वीरध नैन मैन मन मोहूँ ॥  
 सपु सिमाट हुटिया ससि जोडी । घो सपु दसन दिपहूँ जस मोटी ॥  
 पुनि लपु कुच जंभरि' उतमाता । सपु नामा मृग खोज समाता ॥  
 सुमर कपोल रूप रस मरे । सुमर मुखा छाँच जनु' बरे ॥  
 सुमर निठब देख मन भोमा । सुमर बाँप जिमि' कबली सोमा ॥  
 मासिक खीन बदन पर' बाता । खीन' प्रथर जनु कागर पीना' ॥  
 खीन" पेट पातर जनु" पाता । खीन' संक ज्यों छिप बसाना ॥

बोहा—पश्चिमि पहिजानी छा' मै हन प्रंगमहूँ नूप ।

धर" बरनो तिहि' प्रंगमै' धम धम के रूप ॥८६॥

प्रथम केस वीरध सुधरारे । ठाढ़े पाय' पर' धति कारे ॥

कोमल' हुटिम बरन सटनारे' । मरुपदाहि जल नाम बिमारे ॥

जानो मलय धंग पर धरे । सुरहि' घापु मही महलिन मरे' ॥

गागे इछाहि उऊ प्राग' न मही । इहूँ निहारि सोग" जो पही ॥

जानहु प्रेम काँच क" धरे । तहि" उरमि बैतक' मन मरे ॥

प्रथर टारि केस जल झार । निनिहि प्रधन जप दीपक बार ॥

दीपक बरन बाग जनु धरा । विमटि" प्रंपेरा पाछे परा ॥

धी" पुखी देखत धंधिदारी । ठके' पटे लो करी पैसारी ॥

जब" बहु प्रथट बंद नहि धरा । तिहु" कुल रोइ पुकारेसि" लटा" ॥

बोहा—निषी" बधन बारिज पर भवग मुर बहु" प्राइ ।

जि" म सङ्गन रस बिबि रहे रहु सुभाइ सुमाइ ॥८७॥

बोहा ८६-१—घोह पुदण (स०) । २—धंभरहूँ (स०) । ३—वीरध कर  
 बुन रैन तर (स) । ४—उष (ना) । ५—जिन (स) । ६—जनु (का०) ।  
 ७—कहूँ (स०) । ८—प्रथना (का) । ९—रहूँ (स०) । १०—बीमा (का०) ।  
 ११—रहूँ (स०) । १२—जस (स०) । १३—कहे (स०) । १४—जु (का०) ।  
 १५—प्रंगमजो (का०) । १६—प्रथर (का०) । १७—जिन (का०) । १८—  
 टा (का०) । बोहा ८७-१ पाई नि परिहि निबारे (का०) । २—कोमल (स०) ।  
 ३—मुठकारे (स०) । ४—मरुपदाहि (का०) । ५—विमो (स०) । ६—भरहि  
 (का०) । ७—मै (का०) । ८—ठरे (स) । ९—माता (स०) । १०—परानहू  
 कटडी (स०) । ११—तक जीबन (ग) । १२—भाइकर (स०) । १३—जिनहि  
 (स०) निहु (का०) । १४—दीपक (का०) । १५—धमल (स०) । १६—बोह  
 (का०) । १७—बहु धी पटी न करी बिमारी (का०) । १८—जप (स०) ।  
 १९—जिन (स०) । २०—जिगारण (का०) । २१—मुटा (स०) । २२—कटहूँ (स०) ।  
 २३—हूँ (स०) । २४—उबध निमल (स०) ।



का बरनी बहनी धनियारी । बनी धनी शारी कबरारी ॥  
 फूसे कंचस होइ रखवारी । शिर<sup>१</sup> बहु धार बार<sup>२</sup> मये बारी ॥  
 काम बधिक बनू लंजन परे । लोभा ठाठ कीह पगुं फेरे ॥  
 धुनी धनी जूझ बनू बोधा<sup>३</sup> । साभि बान ठाडे भय फापा<sup>४</sup> ।  
 जो मन तहाँ जाइ सो जुझ<sup>५</sup> । जूझ मुसैं कोठ बान<sup>६</sup> न मुझ<sup>७</sup> ॥  
 जाकर काम घाइ निघराई । जाकर बिरिठ बानि पर जाई ॥  
 कोठ<sup>८</sup> न तिया बरनी जिन्ह पीठी । पर उर<sup>९</sup> वान उठे<sup>१०</sup> बनि<sup>११</sup> पीठी ॥  
 सोई काठ लाग जो बाना । ए<sup>१२</sup> धनि एकड<sup>१३</sup> कडे म प्राना ॥  
 तन सों निरुस<sup>१४</sup> जाहि पुनि प्राना । तऊ न<sup>१५</sup> निरुस प्रान ठे<sup>१६</sup> बाना ॥

बोहा—देसे बीषठ कचन<sup>१७</sup> का<sup>१८</sup>, मुनि बीष्या<sup>१९</sup> संसार ।

जोने मुना सो तिया रहा कहि न जाइ बिस्तार ॥६२॥

नासिक पीन<sup>२०</sup> खरम कै बारा । मन तिहि परत होइ सो फारा ॥  
 छवि पर जप कमी बनू राखी । ममय<sup>२१</sup> पुहुप सोंहू<sup>२२</sup> का वासो ॥  
 जो पुनि पहरे फूस पराऊ । कहि न जाइ कछ तिहिकर माऊ ॥  
 सुभटा धपर बिब तनि सदा । ध्यान रूप रखवारी मगा ॥  
 सुबा ठोर का बरनी रायू । यह न<sup>२३</sup> बास यह पुहुप सुबामू ॥  
 बरधि मुना<sup>२४</sup> ठोर धवि भोनी । तऊ कठार न तिहि सर ह्योनी ॥  
 यह कोमल बनू पुहुप बनावै । पुहुपहु ते धवि कोमसताई ॥  
 बन बन सुबा फिरै तप<sup>२५</sup> धाबै । मुदि मुदि धीखिन धलक धपयै ॥  
 नासिक बरन ठोर महु<sup>२६</sup> हाई । पीर जा<sup>२७</sup> मयो काट पुस सोई ॥

बोहा—बनी प्रकासक बदन पर, इमि नासिक बित्त खोर ॥

धमी स्वाद मनु<sup>२८</sup> छवि कुतुर<sup>२९</sup> कीर<sup>३०</sup> निदासी ठोर ॥६३॥

बोहा ६२-१—कनी (घ) । २—सुरको (का) । ३—दान (का) ।  
 ४—नारी (का) । ५—शिलीय (का) । ६—मोडा (घ) । ७—धोधा (का)  
 बोधा (घ) । ८—भूये (का) । ९—ग्याव (घ०) । १०—कोइ न बियाह परी  
 जिहि (का) । ११—पर (का) । १२—मये (घ) । १३—बस (घ) ।  
 १४—(का) । में नहीं है । १५—घाड़ (घ) । १६—मह प्रवासी (का०) ।  
 में नहीं है । १७—(का) । में नहीं है । १८—सो (का) । १९—कडन (का) ।  
 २०—ना (का) । २१—बंभा (का) बभा (घ) ।

बोहा—६३-१—नई (घ) । २—तिनकर (का), ममिम (घ) । ३—ब  
 (घ) । ४—तिनकर (घ) । ५—हंसा मेन मारै बनू (घ) । ६—निवास तिहि  
 (का) । ७—सोह (घ०) । ८—तब (घ०) । ९—गम (का) । १०—बेसर मुखर  
 गठ विबराई (का) । ११—बनु (का) । १२—विध (का) । १३—सुबा (का०) ।

धरत सो धमी भरे रखे राखे । बिन तँबोल रंग सुरम बुधाते ॥  
 कुमुम रंग सर कान्ह न जाई । कहीं मजीठ घोप भस पाई ॥  
 बिन मजाइ जाइ बन फरे । बिद्रुम सङ्गुनि समुद मंहि दुरे ॥  
 बस रनि उरै होइ परमाता । छाहु तँ धरतर रंग राता ॥  
 पाठर निपट पान हुते कीर्छे । पूस होंहि पानन रस मीने ॥  
 कुहु बिन रेख सुजाइ न पाई । जनों काम सो चीरि बनाई ॥  
 जनु बिद्रुम महु मई बरारा । धी जोरा सो रही बिचभारा ॥  
 छीनी मीक माब भस देखा । कनक पत्र पर इमुर रेखा ॥  
 बोसत धरत जान बाइ जाही । नाहित बिचि चारे जनु नाही ॥

बोहा—बचन साज बिचि बलि छवि, परपा बिरहु बस जाइ ।  
 मूनि मया धरतर मनो, पीर न सचयो बनाइ ॥६४॥

बरनि न जाइ बसन हुति माऊ । बिचि जरिया जनु जरे जराऊ ॥  
 हीरा छोम धाम जनु पड़े । रंगे तँबोल रतन मम बड़े ॥  
 औहर गुण स्वाम रय रेखा । बिन बिच सीप सो बने बिसेखा ॥  
 बिद्रुम बिताने रतन जिमि पहरै । काम औहरी पाठहि परै ॥  
 बोसत नैनु मा रेहि दिताई । बिबिच भमक बिच मंहि चुराई ॥  
 विहमत बगड होइ उजियारा । जनु ससि मात्र कौम सहकारा ॥  
 जाफी बिलि परी बहु नीचा । नैनम मानि रई तिन्ह पीया ॥  
 पाहन रतन हाहि सा पातो । हाहि सजोत न जोत जो मोली ॥  
 मेरे जान बिहमि जब बोये । बई भमक अपता हूँ बानी ॥

बोहा—बलि दसन हुति रतन हुनि पाहन रई समाइ ।  
 तिहूँ साज चरया मनी निरुमत धी छवि जाइ ॥६५॥

बाहा—६४-१-रय (स०) । ७-बिनु (स) । ३-पठरे (स०) । ५-परे (का०) । ५-गीतरी (स) । ६-जिन्ह (स०) । ७-धो बहु मुरा मो हिये बिच धारा (स०) । ८-बुहरी (का) । ९-इमि (स०) । १०-बलक (स०) । ११-माही (का०) । १२-बिन (स) । १३-बाइ (का०) । १४-बहु (स०) । १५-कियो (स) ।

बाहा—६५-१-बड़ (स०) । ७-बड़े (का०) । ३-जोया (स०) । ४-सेत (स०) । ५-जना पर तनु भरे (का) । ६-जरे (का) । ७-मानत (स०) । ८-जिन्ह (का) । ९-बहु (का) । १०-नि (का) । ११-मद (स०) । १२-तिहि (का०) । १३-निरुमत मीक (का०) ।

रमना बेद धरय के बीली । घी बोलत कन मधुर रसीमा ॥  
 बीन छार तिहि गुरहि न पूजा । उपमा जाग घोर को हुआ ॥  
 कः जो बेद धरय धरवाई । गुरला मरबन सया हँ आई ॥  
 सरबन' बचन घमी हाइ परदी । राम रोम तन सीतल करही ॥  
 मुरझी बेन पर्यो जिमि' पानी । त्यो' तन पुनकि उठै मुनि बानी ॥  
 मुनने घाघ' मधुर रग बैसा\* । निकट भिरग होइ उठरे नैना ॥  
 विक मुनि बैन साज भइ स्वामा । सांग्ह नगर तजि बा बिसरामा ॥  
 बरती बोल न एक सजानी । बन मई कुहक सीत छ बानी ॥\*  
 यकि छकि यकि हापी मही घाई । तब निशान साजहि छपि जाई ॥  
 बाहा—स्वात बूद तिय' बैन" मुन जातक मिटी पियास ।

लभन सीप हँ धबलटे, बहा" पास तिहँ मात ॥१६॥

कंबल कपोल गोस घति बने । बिमस' नुमर सोमा बुति सने ॥  
 बमनहि बदन' बैइ दिखराई । चित तहँ बसत रपट पं जाई ॥  
 दरपन घोस माज जनु धरे । तऊ जाने बमकत घति धरे ॥  
 जनों कंबल बस मँद बनाई । छुए न कोउ घछूत प्रप लाई' ॥  
 यो' को मामबंत बुनियाही । तिहु कारन घछूत प्रबताही ॥  
 सेब सुरंग प्रेम रस भरे । जनु बाहिम फलसो मिमि धरे ॥  
 तिस कपोल बाई पुनि परा । तिम तिम बसत तिमम तिम करा ॥  
 जिन तिम बैब परा तसबेनी । तिस तिस तलपठ बाइ न छेली ॥  
 कहि न जाइ तिम रूप रिझीना । कंबल बधि उरका घमि छीना ॥  
 दोहा—तिस कपोल पर कोटि छवि कहि न जाइ बिस्तार ।

बचन सीप' छवि' पतय मन देखि" करा मै छार ॥१७॥

दोहा—१६—१—गुरतन (घ ) धरें (का०) । २—जनु (घ ) । ३—यो' (घ०) । ४—कन (का०) पुनह (घ०) । ५—मुन (का०) । ६—प्रस (का ) । ७—सीना (का०) । ८—मूज धबलटे निकहूय बीना (का ) । ९—सजाइ (घ ) । \* उत्तर पर का० में मही है । १—तिह (का०) । ११—नग (का०) । १२—बुही कून तिह (घ०) ।

दोहा—१७—१—समस (घ ) । २—सोमिठ (घ०) । ३—प्रसब घलक बुति बेइ दिखरई (का०) । ४—चितबत (का०) । ५—बून आहूत बीकम खरे (घ०) । ६—बराई (का०) । ७—कुह (घ०) । ८—बुनिया प्रबताई (का०) । ९—मुसीप (का ) । १०—बरनम मनो (का०) । ११—परत पतय (का०) ।

शरसन सीप बनू कनक बनाउ । रिचिहिं दीन म बरि बरार ॥  
 छसि बनू दुई हाप मी दिना । निब कृषे पुनन करे मन विना ॥  
 दुई निब कूटे बगड बरे । बटबहिं हिन सीट नई नरे ॥  
 खनन ब्रपनभाय झाइ यहा । जलहु बंके बंरहि गहा ॥  
 को मुनाइ धंवर गहि कारे । नपि दुई धार कोप सहकारे ॥  
 ननि परकाउ सीरी बदिपारी । बनी नप जगन मनु बारी ॥  
 को मन लही रिचि दिन मयक । इया सी नाम कान बस मयक ॥  
 मूक छनीबर सवन सुहार । नपि सी बार करन निपि भाइ ॥  
सिंहि से पबिकहि इम मूक जाती । तू निपौट इमर दब मारी ॥

बाहा—मूकजो कूटी नग बरी सवन सीनिपहुँ मान ।

नप कवन मनुँ मेट ई दिने नीन करे जाप ॥६८॥

दोहा—१८—१—सब पंख बस कहि (का०) । २—जाट (स०) । ३—जरी  
 (का०) । ४—बाँ (स०) । ५—बंरहि (का०) मक—पबहुँ (स०) । ६—छाय  
 (का०) हरं (स०) । ७—जपकारे (स०) । ८—मुठरी (का०) । ९—बनु धार  
 (स०) । १०—बस (का०) । ११—नाग (का०) । १२—सोक (स०) । १३—को  
 (का०) । १४—हुनु ली (स०) सी लहि (का०) । १५—पबिक कि (स०)  
 पबिक रिहि (का०) । १६—ती सवन म भया जिहु मोठी (का०) । १७—जो  
 (स०) । १८—स्यो बरे (का०) । १९—स्योप यह (का०) । २०—कंवन (स०) ।  
 २१—बनु (का०) । २२—जलन (स०) । २३—घाइ (स०) ।

पुनि' का बरनी' बिदुक' डिठौना । जिन मिस शीठ फेर नहीं प्रीना ॥ \*  
 पिन' बहु देखि छो देखि हेराना । तबि धापा तिहि माहि समाना ॥  
 सहज सुनाइ भवन' बिनु' बना । क्यों' बग्या ल्यो बाह न भना' ॥  
 एक अनेक रूप होइ रह्या । बहु बानिक' कबि' जाइ न कह्या ॥  
 नामहु बरन शीप जबिमार । तिहि तर सिमटि' रहा प्रीधमार ॥  
 कैंधो' राहु' रकत' सति बाबा । काठ करेज पाइ तर राबा ॥  
 कैंधो' कर्षेभ कंदला माहीं । ककि धमि धीन पण मुपि नाहीं ॥  
 कैंधो' रूप रूप' रस धासा । पैम दण्ड मन बसा' विवासा ॥  
 कैंधो' पैम पासा' कर बाळ । तिहि जम पिठ हारै का जाळ ॥

बोहा—बिदुक: नाइ' छवि निवि सवन सति पर तारन तोर ।  
 ठिल' ता' मास' मनोज मन भस्यो' रसिक बितषोर ॥११॥

बीरम पिब' भावन' घस काठी । सुमर' पुछार मई बनु ठाडी ॥  
 बनु कय' बाग गुरी बहि लीन्हा । ठमचुर बई सबर घस कीन्हा ॥  
 हिया काठ बनु ठाठ परेबा । कै मुक कचकि' भयो फर सेबा ॥  
 बनौ प्रेम मब भरी सुराही । पहि' नवाइ रस लै सो' बाही ॥  
 सहसहिं करवी लटक जो होई । मोट परै देखै जो कोई ॥  
 बनू' संवीव नाथ यह पण । प्रीब' मान धाना भवसर ॥  
 पुनि' तिहि प्रीव परी तर रेखा । बूटठ पीक प्रकट सब रेखा ॥  
 तहां मुकत' तर छप जो होई । तरक' भरम राखै सब कोई ॥  
 जो डरि धलक प्रीव पर धारै । सो बनाव निज बरनि न बाई ॥

बोहा—बनु मयर पहि पहि धलक देख' तिसक' द्विमघार ।  
 परबत' कुब पुजा करन जसा' भेंट लै हार ॥१००॥

बोहा—११—१—पूज बरनु बहु (का०) । \* का० में उत्तर पर नहीं है ।  
 २—जिहि जो (का) । ३—धपन (का०) । ४—पूज (का०) । ५—क्यों (स) ।  
 ६—हमा (स०) । ७—बाग (का०) । ८—बिन (स०) । ९—समत (स०) ।  
 १०—कैंहन (स०) कहन (का०) । ११—बाह (का) । १२—बरकठ (का०) ।  
 १३—कोप (स०) । १४—बसा (स०) । १५—बासा (का०) । १६/१—पा (का०) ।  
 १७—यम (स०) । १८—तिहि (का०) । १९—बाठ (का०) । २०—बिहस (स०) ।  
 २१—रस जोर (स०) ।

बोहा—१०—१—करयो (स) । २—जाटा (का०) । ३—संभर पछारि (का) ।  
 ४—कैं बनु गुरी बाग (का०) । ५—धलक (स) । ६—हार । ७—बाही (का) ।  
 ८—धमसहि बीब (का०) । ९—पर ग्यो (स०) । १०—पुति (स०) ।  
 ११—मिकड धलक (का०) । १२—छन (स०) । १३—रेख (स०) ।  
 १४—मुकक (का०) । १५—टप टप (का) । १६—बर्ष (का०) ।

सुभर मुखा प्राँवै जनु बरै । कुन्त कार' मीन मनु पहरे ॥  
 कंचन दंड देहि घटि सामा । बाहन' इमि कदती बस माया ॥  
 परे' पीनार करन जब माया । कै कैं' बह मैन हिय दायी ॥  
 तिहि वृक्ष निधि रिम प्रबहु पुकारै । पापु पुकारै पापुन हारै ॥  
 मुरज क्रांति मूज कर्मण हमारै । राठे जनी रहिर मों बोर ॥  
 घौं पंगुरी सब रहिर बुबाही । बरिन रहिर न पिपठ पपाही ॥  
 पुनि पहरे सवि नखव पंगुरी । जनु' पावक राकसि पह मूठी ॥  
 बा त्रिठ काड हाप पर ल' । सो नित हापन बिस्टि करेई' ॥  
 पहरे बाहु टाठ मनोन । हासउ बाहु हुने यति मोल ॥

दोहा—देखि सजानी इतन गति जा होनग बाहु" दुताहि ।  
 जो पडोन घा' घडिग कम हासहि" घी इन जाहि ॥१०१

हिय सरबर वृक्ष पंगुज करे । संपुन बंधै करेई कर ॥  
 निरुसठ किरन बन मनि दर्ई । निपठ कठोर सकुच होइ' गई ॥  
 ऊपर स्वाम घनिक सखि छाई । न घनि छोन बैठ जनु घाई ॥  
 परै मैन दोउ ल' जिनौना । ऊपर स्वाम मगाइ जिठौना ॥  
 बों मनोर पिटिया' सब तापी । किरौ बुहाई सब तन सापी ॥  
 जोवन जार बरठ हिय पावहि । पापु न नबहि जगत गई नावहि ॥  
 निपन घनीति करे जब मागी । बाधि मैन सीन्हु बर घापी ॥  
 बातापनी कौन्हु निरुमाई । खोल मंत्रीर परे घीघाई ॥  
 मैन' जा पानिन मींचे बारी । मारंग करे मई निरुमापी ॥

दोहा—घनक पम बीगान को' शिया' खन मंडान ।  
 बुच मनाक साखे ठहै मनु घटि' घेन निमाक ॥१०२॥

दोहा—१०१-१-जारी (का०) । २-गरा छ मानो भारी (का०) । ३-  
 इन (का०) । ४-बहना की घम (का०) । ५-निर मुमाइ कर (का०) ।  
 करेई पीठ मैन (का०) । ७-उरक (का०) । ८-उबा मगर बन  
 म०) । ९-मानो किरण बाव को छने (का०) । १०-हरई (का०) । ११-जाहि  
 ) । १२-घम घनिक तेज (का०) । १३-खोलि हासि जय जगि (का०) ।  
 दोहा—१०२-१-मिनि (का०) । २-कौन (का०) । ३-बैठहि घन्याई  
 । ४-मा' (का०) । ५-पर गाने (का०) । ६-घमी पानी बी सीपी  
 । ७-घनक (का०) । ८-मिनि (म) । ९-बाव (म०) । १०-मति

पैर पान पातर मुकुंवाभ । धी' पानी घन करे घहाभ ॥  
 देपठ सबन सचिचकमि सोमा । मन चल रपट परे हूँ सोमा ॥  
 रपट्ट विन' सुमुबंगम जारी । रोमाबसी इसी' हरपारी ॥  
 ताके बिप पुनि जिया न कोई । जो उन इला बया पन छोई ॥  
 जा कवाचि नामिन घीं बाबा । ती ठक रूप दलि तिहि' नाबा ॥  
 जीने' ठांवाहि बिबनी बाडी' । ऊपर मर पयापर पानी ॥  
 बैठि रहै तिहि' ठांहि वितासी । निपटे' बहै नागिन मनबानी' ॥  
 ठठपन' आरि फांसी है मार । नामि कुवा गहिर'' गहि शरै ॥  
 बहुठ हनी'' बुध सरह'' न हारी । ग्याव न बहा' हाठ बटपारी'' ॥

बोहा—नामिरी रोमाबसी बिबनी धीपट घाट ।

नामि मंबर मन परयो तहूँ कहु निकस किहि बाट ॥१०३॥

कर' मु' बीठ पीठ पुनि पाछे । बैरिन' उसट बसी अनु काछे ॥  
 बाक बीर परी बहु पीठी । गिरै पीठ बरसी तिन्हू बीठी ॥  
 जो देख सो पीठ कै जाने । पीठ सरूप बीठ जग मानी ॥  
 बेनी पुनि जो पीठ पै परी । कानिरी गिर' छौं अनु' डरी ॥  
 कै ठन' मलय बास तिहि' घासा । नाग घाई' भिपटे' तिहि' पासा ॥  
मिसे मुस' माया घन बाबी । सवा सो नाय रहै फन काडी ॥  
 सवा कंज' ठाके मुप'' माही । जुगल'' खंज तहा केसि कराही ॥  
 निरखि सो बेनी नाग भिकाई । नाम पतार कुरै सब बाई ॥  
 बघपि फनहि काहि दिखराबे । पै ठै कंज खंज कहु पाई ॥

बोहा—बिप घवार'' मीहन लिये मनि'' मानहु'' हरि बीन ।

अहि बेनी के मूर छौं, रज्ज सरन अनु पीन ॥१०४॥

बोहा—१०३-०—धीपानी (घ) । २—काहन सुमुकन (घ) । ३—जई  
 (का०) । ४—बकि (का०) । ५—तिन्हू (घ) । ६—बो (का) । ७—साही  
 (घ०) । ८—सेन (घ०) । ९—जग बाबी (का) । १०—ठे मुन बुर फांसरी  
 शरै (का०) । ११—बर बर कहु (घ०) । १२—हठी (का०) । १३—बुध न सिंधारी  
 (का) । १४—बैद (का०) । १५—बपारी (का०) ।

बोहा—१०४—१—बीर (का०) । २—मह पू (घ) । ३—घपछरा (का) ।  
 ४—करे बेठि (घ०) । ५—कर (घ०) । ६—मनु (घ०) । ७—की तिन मिनै  
 (घ०) । ८—बसा सो बसा बिसबांसा (घ०) । ९—मोव माना मन बांधे (घ) ।  
 १०—मंजठ के (का०) । ११—मन (घ) । १२—बो कुन (घ०) । १३—घकर  
 (का) । १४—मन (का घ०) । १५—माधे (का०) ।

बना लक्ष ठग जाइ न कहा । कदुर एनि बैठ बन' रमा ॥  
 बना न पूज' निरर भवा गाथा । सापसि बिगड़ कान्ह' पर छाया ।  
 मगघि करि प्रहार निर रई । निर मू बच बिरह दुग दही ॥  
 सब ठग रोम रोम बिर बना । निर धनजन' मानुस' कह बना ॥  
 बनत मंद सखई शिनि नाया । नरु दुख धाप बीब' तिहू माया ॥  
 मय' संक भूमि पा रिप । छद्रपट भनकै बरि" निर ॥  
 निरन सीत" बछु बरनि न जाई । मयि मूठी महू रहा मनाई ॥  
 मन लक्ष जात नीन हाइ जाई । निर कटि की गति जाइ न पाई ॥  
 जीने देख गीत भा मोई । बीभिस" रीमि सपन बिगड़ हाई ॥

रोहा—बिबि कदु सीग्यो नहीं चरों जुग यह नाक ।  
 मरी साइ यहु' पावन नई कर का पाँक ॥१०२॥

नामि सी निर साइ क ठाँक । हौं पबना कहि भाति बडाँक ।  
 प जम काइ काइ मई खरा । नावा जहौं साइ कै परी ॥  
 निरग मोर जगमा रिग सीर । जो' कबहुँ कहिँ न जहोरे ॥  
 जोवन मनुष्य गारि तिदि माहीं । स्वाति बुर रस पाइसि नाहीं ॥  
जिहूँ हन निर स्वाति कर बूपा । टिकत' न पबहु मनुष मूबा ॥  
 कबन कभी ई मुरख न देवा । मुख बाँध निरसी तिगू रेया ॥  
 पौ का मुरख माग का बसी । जाक बिरल सिनै सी कपी ॥  
 पौ को मबर बीपि रस माने । जोवन जतन सुकम कै जानै ॥  
 पति सुबास' ग्यो पुत्र न बाधा । पाइ बास पनि भये रीनासी ॥

रोहा—यहूँ कमागी कह दिई जयन मंबर हाइ मून ।  
 पौ नाके मग्यां पर, कबन' बरि क छुन ॥१०६॥

बादा—१०२-१—मर (का०) । २—गरी (म०) । ३—जोय (म०) । ४—  
 मई (म०) । ५—द' (म०) । ६—घाणन (म०) । ७—मानसि (का०) । ८—पब  
 (म०) । ९—नरि (म०) । १०—जय जयक पुत्र (का०) । ११—गति (का०) ।  
 १२—नहूँ (म०) । १३—घनबीगू बीगू मकस (का०) । १४—दही (का०) पहिर  
 (म०) । १५—आचन की (का०) ।

रोहा—१०६-१—नाम नाम (का०) । २—जिहूँ का हाइ लर का कीरै (म०) ।  
 ३—बिबि बरि मई (का०) । ४—निरन (का०) । ५—मुताम (म०) । ६—दिदि  
 (म०) । ७—बु (म०) । ८—मुकनन (का०) ।



मूमर निर्वन सो कोमल परे<sup>१</sup> । मनिमानिनि लौषा करि बरे ॥  
 सामिठ औष बलत पनि<sup>२</sup> ढनी । ऊपर सुमर बरारी<sup>३</sup> भनी ॥  
 तिन्ह न पूजियै कबगी गामा<sup>४</sup> । जो मिर पाइ कौम्ह तो<sup>५</sup> काजा ॥  
 पाल मराम देखि परसे । बसती छाकि छरीबर बसि ।  
 यज बन<sup>६</sup> मरहि बिमुरि बिमुरी । पुनहि सीस धी बरहि पुरी ॥  
 बरग कँबा कोमल अति बने । राने ज्यो मेहरी रंम सने ॥  
 मंजम लमि बल महं जब बरे । जान सो जब जाबक अठ परे ॥  
 रई पटम्बर<sup>७</sup> पर दिन राती । कै सो ध्यान राजन<sup>८</sup> की छाती ॥  
 बमकहि बूरा घनबट सोनी । सुन विधिपनि<sup>९</sup> बुनि बोसहि मीनी ॥

बोहा—तिन्ह बरनन उरमा जगत रहा भास जिय लाइ ।

सो पुनि पी<sup>१०</sup> का पर बरे रोम न जानी<sup>११</sup> जाइ ॥१०७॥

मुन लवि रूप मूर मन बसा । प्रेम गहन माई बर गसा ॥  
 केस मुषीम प्राब हू परे । ब्रम कंठ परि बहुरि<sup>१</sup> न टरे ॥  
 बेनी नाग कोर परि घापा । धीरर<sup>२</sup> घनी गो अबर बटाबा ॥  
 पुनि बुठिया अवि सभा मिनाटु । तिन्ह बरसन कारन भा साटु ॥  
 बांके मैन श्वां गहे कटारा । सागि हियै मई<sup>३</sup> भय दुसारा ॥  
 नासिक बरग पान उर कीन्हा । धी मुख मोन मोन तिहि वीन्हा ॥  
 वसन<sup>४</sup> भाब बरना अठ कीपा । मारि राग रहा बित बीपा ॥<sup>५</sup>  
 पीठ लटक सोटक मन कीहा । भौह भवाय<sup>६</sup> बाक बित वीन्हा ॥  
 कुब हिय मै बंवर<sup>७</sup> हू परे । हू जो कठोर कठिन हू<sup>८</sup> घरे ॥

बोहा—बरनि जान मुकुटी पनुक तिन बीसे सब वेह ।

बिघमान वीसै<sup>११</sup> प्रबट रोम रोम महं<sup>१२</sup> बेह ॥१०८॥

बो —१०७—१—बरे (घ) । २—मिसे कार बूँदा कर (घ) । ३—कठि (घ०) । ४—बरारे (घ) । ५—सोमा (का) । ६—नौ गोमा (का) । ७—पुनि (का) । ८—पिबक सो पर (का०) । ९—राजहि (का) । १०—बीछी (स०) । ११—बह (घ०) । १२—जानि नहि (का) ।

बो०—१ क-१—दूर ना ठरे (घ) । २—अधिरबह (घ०) । ३—मनु (का०) । ४—इई (घ०) । ५—बरसन (का) । ६—रघाहि हि (का०) । \*हस बीपाई के परबानु (घ) प्रति में १३ बीपाई और एक बोहा अंगिक है । य बीपाई और बोहा बाएँ पृष्ठ पर लिखे हैं कपया ठीक करणें । ७—मुबे (का०) । ८—मुबाह (का) । ९—दम्बर (घ) । १०—भै बरे । ११—यह बीसै (घ०) । १२—सन (का०) ।

राजा प्रबल प्रेम कम मयऊ । घटिबरा मन उदाय होइ गयऊ ॥  
 राज काज दिन दिन न लागी । निमि निद्रा बिनु' परै न जायी ॥  
 तार पिनन छिनहि मरु ठारे । छिन न छिन पुत्ररी के ठारे ॥  
 नीर' लाग विगृह मय रागू । छाड छिहसि घर मय बियासू ॥  
 जो मन राम रव मरु मारी । निगहू न मरी पम भरमावी ॥  
 कम न पर ब्याहूम म रहै । काहु मा मन मरम न कहै ॥  
 मोचरु' माच जरे दिन रागी । जेसु दिपो रिया के बाती ॥  
 पुष्पा' रही न दोमें घामु' । निन दिन एते लाग मन मांसू ॥  
 मा लन निरर राग जो छा' । मूरज बदन यहन मनु' यहा ॥

बाहा—जिन्हू' बट" बाभा पम को पिन" बट रकठ नमाम ।  
 मदिन तज बाठ उफनत' बुइ' निजये हाइ घाम ॥१०६॥

बघपि जीनी पार बमार्दे । नीनों रागसि घपिन दुगर् ॥  
 पै निदान इरु दिन मनपासा । दधी घपिन उर कौमू प्रकाया ॥  
 भर' तन माय पर बंदा । मन मनोर टूट रोइ यहा ॥  
 बिठ न बन तरके मनरागी । रैम रान तरि बिनु पानी ॥  
 कारे बिछु हाक अनु माका । क बन' मिरम घंन म धावा ॥  
 अनु गनु बबिह परवा हाउ । के सोटन गहि भुई उगारा ॥  
 घनि ब्याकम छिन बन न पाव । पन पम पीर प्रबल हाइ घान ॥  
 मुन उनाम निहनें इमि ठापी । मनमुग हाइ जरे निनु छापी ॥  
 घमुहन पर झार उर घारी । मनो चुनपर पून बुझावै ॥

बाहा—तन मन घति ब्याहूम बिकल्प, छिन न' होइ बिसाम ।  
 मन" उनाम तपन भई मखिर भयो हमाम" ॥११०॥

दा०—१०६-१—पुनि (का०) । २—विह (का०) । ३—छोक मुम (का०) ।  
 ४—ब्याहूमना रहै (का०) । ५—वपिजा (का०) । ६—गगनु (का०) । ७—माटि  
 मार (म) । ८—उगा (म०) । ९—अनु (का०) । १०—विह (का०) । ११—तन  
 (म०) । १२ निह (का०) । १३—इवन (म०) घोकर (का०) । १४—कम बुइ  
 (म०) बुई (का०) ।

दोहा—११ -१—मरवाया (का०) । २—वय तनुतो मनु (का०) । ३—पुन  
 मन बंरत क (का०) । ४—तरक (का०) । ५—बहु (म०) । ६—घारी (का०) ।  
 ७—सोहि (का०) । ८—जापी (का०) । ९—बिहारी (म०) । १०—बिन न  
 (का०) । ११—वबट (का०) । १२—हमाम (म०) ।

कबहुँ मिर' पपेठ होइ जाई । मानो' महुर छरर कै धाई ॥  
 जैसे बहूत दिननि करइसा । बापा बिल सा छुट परगमा ॥  
 गाररु' बहु मंत्र पुहराबहि । मंत्र करहि जो उतर न पाबहि ॥  
 किन्हु बारे नागिन कर पावा । पकर न देइ जेन मुख प्रावा ॥  
 जनु पबबूत रोक तन स्वामा । मन सँ पयो प्राप्त कै पासा ॥  
 काया गहन' धाप सौं ग्यारी । रक्षा मगाय त्रिहि सा ठारो ॥  
 पब तन सौं बसु रक्षा न माना । मन तन स्वाम मीठ रंग रावा ॥  
 जहाँ सोग परान' संभारा' । बहु सुभ्र सब सरग पजारा ॥  
 जो प्रावा दिन काया पूषी । इन' इह' नरी' वरी' कै छुषी ॥

बोहा—मन जब रावा मीठ सँ सब तन नो कछ माहि ।

भाई मोटो भूइ परा, भाई मग्ग्या माहि ॥१११॥

पुनि जो कबहुँ जेउ महुँ प्रावा । जनि काहु गुड' ई बीरावा' ॥  
 भइ जनु' धीन पावन' की कर । देव सुरग ते' धरती परा ॥  
 बड' धम रहै टकाला साई । जानहु मूरति' किन बनाई ॥  
 पुनि उठि बैठि तर्कै जहुँ धोरी । बाबर स्वान जस जस' होरी ॥  
 बुबहि' नेन जानी' विचकारी' । रंग गुनाम प्रस' रकठारी' ॥  
 मपट' उठहि नहि जब स्वासा । जनु होरी साई जहुँ पासा ॥  
 मूठी मरै बुर' नहि मेले । बिरही बिरहु बुरखी' जस ॥  
 कबहुँ सीस घुने पछिटाही । मनहु नाय मनि बैठि गवाई ॥  
 बूझहि' लोग जाह' गहि बावा । छतर न देइ पेम मरमाठा ॥

बोहा—मन उरका उठ पेम जेह छटे तो इठ सुष मइ ।

तन' मृता थिय पीब वै कहु को उतर देइ ॥११२॥

बोहा—१११-१—कर (स०) । २—जानहुँ (का०) । ३—काक (स०) । ४—  
 भये (का०) । ५—जर प्राबहुँ (स) । ६—के (का०) । ७—समुझ (स०) ।  
 ८—जाने (का०) । ९—परा (स०) । १०—बभारा (स) । ११—धम (का०) ।  
 १२—हिय (स) । १३—धरे (स०) । १४—धरी (स०) ।

बोहा—११२-१—गुड (का०) । २—बुराबा (स०) । ३—मनो (स०) । ४—केह  
 (स०) । ५—सौं (का०) । ६—दिम (का०) । ७—भरत (का०) । ८—ठठ (का०) ।  
 ९—सौं (का०) । १०—जो नहि (स०) । ११—जाहिं (स०) । १२—पुचकारे (स०) ।  
 १३—मासोक (स) । १४—कठारे (स) । १५—मसठहिं (का०) । १६—छार  
 (स) । १७—बुरखी (का) । १८—पूषी (का०) । १९—नाथ कहु (का) ।  
 २०—बट (का०) ।

प्रम पहन गाद रवि गद्या । जग मई मखकार हू रद्या ॥  
 मई बंधु मवन मूख माहीं । नया निरु भुर पक्षिगाही ॥  
 जावत धुन' मुरे मख झाई । पई पुरानिक बर बुसाई ॥  
 ठावत धाम्ना मुना मयान । जनक मगर हुन मख मान ॥  
 दबहु' समुन्दि बिचारहु' रामू । किहिं मजाम ना बन बिपामू ॥  
 कबी निरु कीरु मबिचारी । तिहिं बालन मरु म्याहुपतारी ॥  
 कै बाहु बरी बछु कोन्ही । दानव नर बस काउ शीम्हां ॥  
 क बनि पुरप दधि पति माना । काहु नारि काहु कछु टाना ॥  
 ठाई मयन ठनन' ठन दारी । मा पाबा' धौ का बटपारु ॥

बाहा—नारी बेनि दबाइ कर, बिना धार मरुबाइ" ।  
 समुन्दि बिपा ठहराइ निरु ठाकर करहु उगार ॥११३॥

प्रपम बीर राजा पहं पावा । मयन नबाइ बीठ मुम्ताबा ॥  
 पुनि गहि हाय निहारिय नारी । मरुम' धौर दुपन' मों म्याठ ॥  
 देखत बीर बकिठ होद रखा । बठिन रोम बछ जाइ न बहा ॥  
 दुई छिर नारी पब गही । मयन' मान राजा ठव बहा ॥  
 प्रम पार कहु बीर मनारी । छिर छिर का बखसि करनारी ॥  
 मन मरु मन पीया कै नारी । बहै निहार' मा बाई' निहारी ॥  
 नाहिन उठ का मरु' मगबसि । बरती मदिन नम का नाबसि ॥  
 बह पीया कर उई उपावा । जाई बगन बाज कर पावा ॥

बाहा—तू छिर छिर नाउ गबसि माउ उर में बाब ।  
 मुना न मवपी बाब का नारी दनि उगार ॥११४॥

दा०—११३-१—रवि जो बन काई कर (म०) । २—बिह (म०) । ३—जागु  
 पन्थ हुती मख जछई (म०) । ४—जावत (म०) । ५—बैपहि (का०) । ६—समन्  
 (का०) । ७—बिचारहि (का०) । ८—जीमका (का०) । ९—नया (म०) । १०—  
 दारे (म) । ११—बहु जो (म०) । १२—धमुपाइ (म०) ।

दोहा—११४-१—छान (का०) । दुपु (का०) । दुपुन (म०) । ३—घान  
 मल (म०) । ४—दह (म०) । ५—तिहारि (का०) । ६—बाहु (म) । ७—  
 बाब मर उठकाबसि (का) । ८—मम पावम (का) ।

मनि यह परम बंद उठि घाबा । पक्ष जनन बहं घान सुनाबा ॥  
 राजा भग राम कछु माही । बिरहु बान मानहि उर माही ॥  
 ठिहि के पीर पन हरि सीम्हा । घोसर' बस मन बावर कीम्हा ॥  
 काक बबनि बान भी छुटे । रोम रोम सगरे तन फूटे ॥  
 करहु उपाइ बिसंब न माबहु । राजा बहं बहु मीत भिसाबहु ॥  
 गाहिय कठिन पेम क पीरा । दिन बाइ में प्रति बरे घपीरा ॥  
 पेम अगिन पीने पट परै । तन मन बार जीवै सी घरे ॥  
 जीसी जाउ कहू पिठ' त मिलावे । पिठ मुख पागिप पान न पावै ॥  
 तीसों' जगत रहे न सिराई । मी न पटै नित होइ सबाई ॥

बोहा—बेबि संमारहु सुबि करहु राजा तन मन देहु ।

पस दिन प्रंजुरी नीर ज्यों छोडत है तन नेहु ॥११३॥

तठसन प्रहृत' सैन परमानु । घाबा' तपठ हुवा जहं भानु ॥  
 घाइ नबाइ सीस भा ठाडा । समै बिचार बचन मुख काडा ॥  
 बड़ परछाप अछंडित रामु । मन बाछित' पुरबै बिधि कावु ॥  
 तुम्हरे पीरा जगौ हमारे । अपे बोर्ता तुम्हरे' उजियारे ॥  
 जो' तै प्रबिमीपति दुप पाबा । घा' अस बाल नवर' महं घाबा ॥  
 तुम्हरी बिबा नगर कहं' ब्यापी । मयर कि मनु' सब बिबस संतापी ॥  
 जो देख ताको मन गहा । काहु के मुख रकठ न रहा ॥  
 बँते गहन' धुबज जब होई । जगत' पियर' देखै सब कोई ॥  
 काहु के तन मह बोड माही । बिठ सबको तुम्ह बिज माही ॥

बाहा—ज्यो असुबा' सुत सुटति कहं गोपी' भई अर्षन ।

त्यो तुम सुख सुख स्वाति लबि सीप मए जन' नैन ॥११६॥

बोहा—११३-१—कहि (का०) । २—सासु रेप (का) । ३—पेम (स) ।

४—जीलहि (का०) जो लहं (स) । ५—पीन (का) पड (स०) । ६—जीलहि (का) तौ लहं (स०) । ७—अपन (स०) । ८—मेहि (का०) ।

बोहा—११६-१—परहृत (का) परबट (स०) । २—घाब (का०) उवा

(स०) । ३—घाकठ (स०) । ४—घा सबो (स०) । ५—अपह (का०) । ६—  
 तुम राज (स) । ७—अमरै (स) । ८—उपसा (का०) ऊपसा (स) । ९—  
 जगत में (का०) । १०—मै (का) । ११—मग (का०) । १२—सरजबन (स) ।  
 १३—प्रबन बबठ (स) । १४—पीरो (स) । १५—असुबा सु सुटति कहि (का)  
 बँदा सठ सरप कहं (स०) । १६—कोपे मये (स) । १७—नम होन (स) ।

बिना होइ सो परबट कीजे । बुरे रोम बाईं तन धीजे ॥  
 श्री पुनि रोग जो ममहि समाना । कहै बिना कछु बाइ न जाना ॥  
 कही मरम प्रापन जस प्राही । सबक सों न दुखवा पाही ॥  
 जो कौनों कामनि बिठ परी । कहो मंगाइ छौंजु इति परी ॥  
 महाराज प्रायसु जग प्रागै । कहै प्रस जीव जो राखै मार ॥  
 जो काहु राखा कै बाटी । भीरे' देम सुनी उबियाटी ॥  
 ताको रूप सुनत बिठ गहा । इहो सुगम कृप्य अपरि न रहा ॥  
 पाटी भिखि प्रब' बेगि पठाऊ । ज्यों के त्यों सुखि' सोधि मंगाऊ ॥  
 जो अपघरा निधि मई चाई । मतर सफित सों देऊ मंगारै ॥

दोहा—प्राय रात्र परठाय प्रस इन्द्र मबाबा माव ।  
 जो चाई सोई करी जगत तुम्हारै हाथ ॥११७॥

विहि उत्तर राखा तन बीजा । बिरह मरम पोषा गर खीसा ॥  
 सुन परवान कही तो पाहा । जैसी कछु बीठी बिज' माहा ॥  
 वह बु एक भादिन ठह' मारै । जिन परमिनि कै कथा सुनाई ॥  
 सोई कथा प्रगिन होइ' परी । तबसों सुगम सुलम सब परी ॥  
 जब ली भीरज संग पहुँचावा । लीनों तन यह बोझ छठावा ॥  
 प्रब वह भीरज दूदि मुई परा । तन निरास निरबल' होइ उरा ॥  
 ताते प्रब ही कही हुँकारी' । बडा बिरह शरत माहि मारी ॥  
 जो प्रब' बगि हीइ नहि मेमा । तो जीवन प्रति' निपट दुहता ॥  
 यहै निदान प्राइ नियरावा । बेह जाइ कै होई मिलावा ॥

दोहा—प्राय बस जलि मीठ यहै मिलन प्राय तन प्राय ।  
 जो' प्राय विहि छिन छुटै विहि छिन मरन निदाय ॥११८॥

दोहा—११७-१—सेउ (स०) । २—रात्र (म०) । ३—उई (बा०) । ४—  
 विहि (बा०) । ५—उहावा (बा०) ।

दोहा—११८-१—प्राहि (बा०) । २—बस (म०) । ३—उर (बा०) । ४—  
 उहावा (बा०) । ५—मिलन (बा०) । ६—उरा (म०) । ७—हुकारी (स०) । ८—  
 विहि (बा०) । ९—पुनि (बा०) । १०—स्वाया (म०) ।

प्रहृत' सेन बिनाबां कर जोरै । प्रबमीपति बिनती सुन मोरै ॥  
 जिन बिपना तनु बिषा उपारै । तिन भोपद पुनि प्रबम बनारै ॥  
 जिन बँसी पुण्या' उपचारै । तिन्हू तैसो भोजन पटु'बासै ॥  
 जब बहू करै रैन' अंधियारा । तब बारै दीपक उजियारा ॥  
 दुख बिपोग महं पीज परीजै । ता पयाम कह घास करीजै ॥  
 यो इहू पेम इउ यँम न जानहु । उतहु चाह बई पटु'बासहु ॥  
 पेम वाह ताही' वै बाहै । जाको पीठ पिरीठ सों' बाहै ॥  
 निज पिठ चाह पेम दुप जानहु । पेम दग्ध कछ घोर न मानहु ॥  
 जब प्रति प्रबम घबस्या' होई । तब बरसा' सखह न कोई ॥

बोहा—कहु को' दुखी जो पेम बुख जिन' सुधि पिय ना छह ।

बेद जिये घीउख निकट' पीर बिना कहू बेद ॥११६॥

प्रहृतसेन प्रति बीज बंधावा । पै राजहि बिन नैन न पावा ॥  
 प्रेम प्रबल मन बरै न बीउ । पीज दिये बाई प्रति पीर ॥  
 बिरहा ब्याध भयो जित सेबा । तरफे जिउ' ज्यों' बन्धा परेबा ॥  
 अरपि नैन मेव भर जाबहि । धासु नीर उर नबी बहाबहि ॥  
 तबपि शिठ जातक न सिराई । यो' तिहि स्वाति बूँद लव जाई ॥  
 बिन ज्यों' त्यों' बुख पीर संवारी । बिरहू रैन पुनर प्रति' भारी ॥  
 तथा पुर दिन भा निधि मांहीं । नीरज नैन बल न मू'वाही ॥  
 मन भा बंधर भई बहू मोरा । एक कमादनि ज्यों' बहि मोरा ॥  
 बनें कखराते तपत अस्वासा । बड़ी पेम मव पीठ पियासा ॥

बोहा—राजा कै यहू गठ मई ज्यों' बखी समि मीन ।

तरफे तपै खपै बिचै मुरत पीर घापीन ॥१२०॥

बोहा—११६-१—परहि (का०) । २—कथिया (स०), पुवा (का०) । ३—  
 बकत (का०) । ४—घटहुं (स०) । ५—बही (का०) । ६—कर (का) । ७—  
 मनिसबा (स०) । ८—पुरपानि (का०) । ९—किहि (का०) । १०—ता (का०) ।  
 ११—बकत (स०) ।

बोहा—१२०-१—ज्यों' (का स) । २—उरभाह (का०) तो बन्धा  
 (स०) । ३—तिन (का०) । ४—मई (का०) । ५—बिहि कर घटप्ट (का) ।  
 ६—बिनती (का०)—बँसी । ७—तरफ कइ तैसै कइ (का) । ८—कीबै  
 मुरत (का०) ।

पक' प्रति भूरे बड़े धो रोई । धोरन सोवन देय न सोई ॥  
 तोहि' बियोग यह गति भइ मोरी । तन प्रन्तहि' जित ता पहि गोरी ॥  
 प्रपन्न राज तन मा दुख खानी । दुख दखन मुख रैन बिहानी ॥  
 स्वार छाह' सुख होइ तई । राज पाट मा पावके' मई ॥  
 धनिन समुद्र बिरह' भा लोरा । सीहां परा बाहित तन मोरा ॥  
 उपटी' सपट सह्र बहु पासा । मनो जई सज भूई प्रजासा ॥  
 सीसोह' चाब' पवन होइ बई । पौन प्रगिन राखी क्यों रई ॥  
 मन उरम्य सांकर महं पर । उरस न सकीं जड़ाही' जरा ॥  
 पुनि पाखे किहि काज समारा । जब' जर बेह उई होइ छाए ॥\*

दोहा—देह प्रबहि' जर जाऊ किन इह' माहि सोच न कोइ ।

हरौ किती' निकसक मगि, ताहि' बसक न होइ ॥१२१॥

सुनिपठ हुती एक धंय प्रीठी । सो दखा ह्यपही पर बीठी ॥  
 ही जायीं ताहि सागि समावत । ताहि मुख चैन नींद किठ' मावत ॥  
 ही भै भंकर भव बँटणी । तू खरोब' मुख सर धनुरापी ॥  
 ही जातक पिड पिठ' रट मोरे । तू स्वांती माय महि तारे ॥  
 मो मन बिन खबार बिन देख । तू मा खर लोर महि सख ॥  
 मो मति थ्यों मछरी बिन पानी । तू अपने पानी धमिधानी ॥  
 कही' को पेम परस्पर लागी । जो जिहि सगै सो तिहि नम जाय ॥  
 सो न मांख यह झूठ कहानी । सोगन झूठ सांख कै मानी' ॥  
 सांख होइ ता पेम बिछापी । तोहु उपज हाइ तन भापी ॥

दोहा—कै जनु छोरे पेम हुय पेमो तोहि बराइ ।

धतक' कांय फंदन फरौं, इर सा निकट न जाइ ॥१२२॥

दोहा—१२१—१—एकै (का०) । २—तू (म०) । ३—रितइ प्रीठा यही (का०) । ४—बिन नि (का०) । ५—जावर (म०) । ६—धपबई (स०) । ७—जमो (का०) । ८—गोहम (का०) । ९—जाड (का०) । १०—जराही (स०) जराहूँ (का०) । ११—धव (म०) । \* इम जोराई क परभाव 'स' प्रति में यह बसनीं जोराई धोर है — 'तन जर छार होइ जा पाई । बरसन चाब जित जित में बड़े ॥' इम प्रशिष्य समझना चाहिए । धंय में नियमत मो जोराइयो क परभाव दाहा पाठा है । १२—एह (का) । १३—हिप (स०) । १४—कि तू (का०) । १५—ताहि (का०) ताहि (म) ।

दोहा—१२२—१—क्यों (म) । २—नीरज (म०) । ३—भरत (का०) । ४—जव (का०) । ५—महि कर (का०) । ६—जाओ (का) । ७—प्रपन्न (म०) । ८—जिठणी (स०) । ९—धतक बांख फंदन (स०) ।



मो सों पिपती पै बन धारै । होइ सो बहै जा पिठ की भाव ॥  
 ही धधीन बनि दीनता' कसं । बिरु मे हाथ पाइ तर बसं ॥  
 पूजी यहै प्राण हा मोर । सो कीनो ज्योसावर तोरें ॥  
 तोर पेम प्राण को जाई । ता पासों पुनि कहा जमाई ॥  
 मै मापा' हारा त जीउ । सब तोहि' बने सो तू कर मीठा ॥  
 जो कोंऊ जा लागि बिरु देखै । ताकी सुधि सोऊ' पुन लेई ॥  
 सो पुनि यही बात कह्यु माहीं । सब जम नीन देख तू' माहीं ॥  
 जाकीं हृषा दृष्टि कर हेरसि । ताही के बुझ पाह निबेरसि ॥  
 तोरें हाथ बात सब बाता । यहै' सो जाहि देख जैमाता ॥

बोहा—जब जानै बाउर भयो माप माप बतराइ ।

ए बावें सब भीत सों कहा सुरति भति ताइ ॥१२३॥\*

जब इहि माति बिरुल भयो राखा । कोने नाम' बचन तजि लाखा ॥  
 लोप कुटब मीठ बनुरागे' । यहू पास समझवन जाने ॥  
 राजा तुम सज्जान' सवान । बुद्धिबाग पंडित जम जाने ॥  
 कोने मति तुम कई सिख दीजे । पै जब' जीव जरी का कीजे ॥  
 पेम पंच जानहु न सुहेसा । भीर बिबारत निपट सुहेसा ॥  
 जिन पवि गरो राज तुल मानो । कोने काज देख तुल साना ॥  
 बहो पेम तई भूष न प्यासा । जगत भोज सो करै चबासा' ॥  
 जने देख महं हास कहानी । राजम मह होइ ही प्रपमानी ॥  
 जीव जरी मन जिन मरमाजी । जन पठाइ पिठ' छीष मंगाबी ॥

बोहा—बिरुह बाव' उर मूय के ताकी मिसन उपाव ।

जीव बचन बसों ज्यों सुनै, साये बाव पर बाव ॥१२४॥

बोहा—१२३—१—छीया (स०) । २—माको (स०) । ३—साहि (का०) ।

४—सोइ प (का०) । ५—तब (का०) । ६—धिय (स०) । \* इस बोहो की नीचे की पंक्ति 'का०' प्रति में पहले है ।

बोहा—१२४—१—लोग (का०) । २—सर भाये (का०) । ३—सुजान

(का०) । ४—जस कई सोई पै (का०) । ५—निरासा (का०) । ६—तिहि (का०) ।

कुनि राजा सिप बचन दुनारी । प्रेम धयिन बिनसी' मुख भ्यारी ॥  
 का मोहि गिर्य सीख' सिखराबहि । बरत धयिन तेन जिन नाबहि' ॥  
 पैम समुद्र प्रधाइ प्रपारा । तहाँ परे को बानन हारा ॥  
 मरी समाइ जाइ इक घोरा । का मिल बूद करै तिहि घोरा ॥  
 जब बर पैम धमल बी माई । धंजसि जन छिरक न सिराई ॥  
 पैम पहार प्रकाम उचाही । मिल सोना ना ऊार ताही ॥  
 श्री' तुम पैम खोल गहि खंसा । मग न प्रबहु पैम कर बेसा ॥  
 पैम लम कर मरम न जानौ । मूठे खीरै रहिर न छानौ' ॥  
 पैमी मीप' दग्ग बिन माई । धयिन बरा मकै न मिराई ॥

बोहा—मोरे मन' भब जिउ राज मीठ' मुरत कर मेहु ।

भेक' स्वास तन पैम लम सो तुम काडे देहु ॥१२२॥

जे तुम मने सीख मोहि देहु । बचन बचन कर ऊतर मेहु ॥ \*  
 यहै तुम प्रपम कहे हो हेता । पम पंथ जानहु न मुहेता ॥ —  
 सो तो मूमठ तुमहि दूहमा । बिनहु न भया पैम कर बेसा' ॥  
 उजम न हिरे बिट्टु बेरायू । नयो न धयबहु कं विदनायू ॥  
 तिन यह पंथ मुगम करि जाना । जिगु कर पैम पंथ मन' घाना ॥  
 हौ सिख सीख बरत कर पाऊं । पैम' पैम बन जाइ बडाऊं ॥  
 बसौ न बांध रैन बिन बसू । ती सगि जो मयि मीठहि मिसू ॥  
 ज्यों ज्यों बसू उरपय त्यौ होई । पैम' पम पर परक न कोई ॥  
 जो तन हार रई ठरि जाऊं । मन पग विउ मय मौ न दिग'ऊं' ॥

बोहा—पैम पंथ मोहि धरि मुगम, मुख प्वास बर माहि ।

कसक करेवै काटही' मीर' सु मीनन' माहि ॥१२३॥

बोहा—१२२—१—जया (स०) । २—विपहि (का०) सोसा (म०) । ३—  
 पाबो (का०) । ४—सी (म०) । ५—दियरहि दयन उपरहि छाई (का०) । ६—उजम  
 (म०) । ७—रहर (का०) । ८—जानहु (म०) । ९—दियरि (का०) । १०—मन  
 उरका या मीठ कं (का०) । ११—मुरति रदा कर (का०) । १२—निबग (म०) ।

बोहा—१२३—\*जयपुर की प्रति में इस जोराई के प्राय छठवीं जोराई है — 'हो  
 मिल सीन'—' । १—बेसा (का०) । २—धरहि की (का०) । ३—मई (स०) ।  
 ४—देग देग कर (का०) । ५—देक नाव बरि (म०) । ६—विधि पाऊं (म०) ।  
 ७—कई (स०) । ८—जाटही (म०) । ९—हीन मौ (म०) । १०—नयने तिन  
 (स०) ।

पुनि तुम कहा वेम पप हेसा । धीर निबाहुत निपट कुहेसा ॥  
 वेम र्वन महुं धीर न कोई । उर पिठ<sup>१</sup> धोर घोर मब सोई ॥  
 वेमी वेमहि धोर न बाई । यहू नेम<sup>२</sup> गहि धोर निबाई ॥  
 वेम समुद्र मांझ जा परे । धार घोर<sup>३</sup> कर घास न परे ॥  
 बाई घोर सो<sup>४</sup> घायन घारां । धीर घास तबि मने<sup>५</sup> पिठ धोरां ॥  
 जाऊई नेह देह मों होई । जमम धरारप सोई सोई ॥ \*  
 तीसै एक धोर कै दारै । तब इहं धार घाह पग धारै ॥ \*  
 वेम सोम महुं माये बाबी । सो लोमं जा इह पर रात्री ॥  
 यह देखो<sup>६</sup> पुनि अचरज<sup>७</sup> रीता । आ हारै जानहुं<sup>८</sup> तिन जीता ।

बोहा—वेम समुद्र धारार घति नाहि<sup>१</sup> धोर गहि धार ।  
 जे बुझ<sup>२</sup> साई तिरं यहू पम दधि<sup>३</sup> धार ॥१२७॥

पुनि मोहि इह<sup>४</sup> विषया यहू घामहुं । जनि पबि मरा राज सुप मानहु ॥  
 निहि बिधि होइ राज सुस भाई । जो न भिसं पीठम सुबरा<sup>५</sup> ॥  
 तुम्हरे शिस्टि राज जा<sup>६</sup> घाबा । सो न राज यहू घरे घराबा ॥  
 बुध समुह तुम सुग कै माना । देखो का यहू जगत भुलाना ॥  
 यह सम्मति जो सपन समाज । तिनह कहूँ भूम कही<sup>७</sup> जिन राजू ॥  
 धूषे बाजहि राज निमाना । का तिहि पर जित घरो भुमाना ॥  
 ही घस राज न मन मै साडं । बिहि सुस उरभि मीठ विघराडं ॥  
 जो जित<sup>८</sup> मांझ भिसे पिठ सोई । ती यहू राज कुसन पे होई ॥  
 माहित वेम घनिन तन जारी । झूठे राज जतम का हारी ॥

बोहा—हार जतम राजा घने गए उभाइ भिसान ।  
 ते जीते जेई<sup>१</sup> पर जूझ वेम मंत्रान ॥१२८॥

बोहा—१२७-१—प्रेमी धोर छूर पुनि (का०), उर पिठ धोर घन (स०) ।  
 २—वेम कहि (का) । ३—धीर छठ की घास न (का) । ४—बाही (स०) ।  
 ५—घोर सही घोर (का०) । ६—यहूँ धोर (का०) । \* (का०) । प्रति में यह  
 बीपाई नही है । ७—सबही (का०) । \* (का०) । प्रति में इह बीपाई के परचाह यह  
 बीपाई है—प्रेम ही धीर न मांगो कोई । मीमी का नर प्रेम न होई । ८—हुलो  
 (स) हुप (का०) । ९—अचरज है (का०) । १—जानै तन (का०) । ११—  
 नातिहि (का) । १२—झूठे (स०) । १३—बिधि (स०) ।

बोहा—१२८-१—घाह (स०) । २—इहि (का) । ३—झूँ (का) । ४—  
 जाना (का०) । ५—गहि (का) । ६—महो (का) । ७—बिहि (का०) । ८—  
 घने (का०) । ९—अचर (का) ।

पुनि तुम यह सिव' बभन बबानी । कीने काज' देह दुल सानी ॥  
 का यह देह धमर तुम जानी । जा सवि भयो' वेम धपमानी ॥  
 देह निदान पा कर्ह धारि । मने जा वेम पम मर्हि धारि ॥  
 का जीवन जग' वेम बिहूना । धधध प्राण तन पंजर सूना ॥  
इहि के सुख तुम नर्ह का साहा । काठिक' जनम तुमहि इन वाहा ॥  
 बार बार भर पर पीठरई । याही देह मोह के बरई ॥  
 धपनी जात देह तुम जानी । धजर्ह समझी रे धजानी ॥  
 जैसे बट पट भीतर ग्याप । उरसे तुम यह पट मंझारा ॥  
 धपना मूल मोहि मुलाबहु । पम छुड़ाइ देह मर्हि साबहु ॥

बोहा—जा पीठम के वेम सौं भीठी<sup>१</sup> होती देह ।  
 सजी<sup>२</sup> वेम सवि देह कौं बार न करती बहे ॥१२६॥

पुनि तुम मोहि भाव मर्ह' भासा । जहां वेम तहां मूख न प्यासा ॥  
 मोरे वेमहि' मूख पिपासा । पम छाड़ि पूजा नहि धासा ॥  
 मोजन मूख पिपासहु पानी । ए नहि भुक्ति' वेम रवि मानी ॥  
 इहे मूख मोहि भीर न कोरि । वेम मूख इहु मूल न होरि ॥  
 जाए मी जो बड़ा तन मानू । सो तन घंठ होइ पुनि नामू ॥  
 मी मन धपना सत के परा । तन सौं निकस वेम जिठ परा ॥  
 एही मूख जगठ सर' नावा । वेम नेम सब कर बिसरावा ॥  
 का मुख होइ जो मूख न होरि । मूख समान सनु नहि कोरि ॥  
 सा तुम मूख मार' के जानी । वेम कथा कछु मतहि न धानी ॥

बोहा—जो यह वेम बिनास सो, मूख मसी निधि होइ ।  
 पीन रोक मध्यातमी मूख न' धारै धोइ ॥१३०॥

बोहा—१२६-१—मूख (स०) । २—तन (स०) । ३—बहे (स०) । ४—  
 बाको (स०) । ५—पर (बा०) । ६—बन (स०) । ७—नेह देह (स०) । ८—  
 कोपुन (म०) । ९—मया (का०) । १०—मन (बा०) । ११—भीकी (स०) ।  
 १२—मबने (म०) ।

बोहा—१३०-१—बहु (बा०) । २—प्रम न मूख न प्यास (बा०) । ३—मबति  
 (म०) । ४—बहु इहि नामउ (बा०) मन धब नामउ (म) । ५—मब (बा०) । ६—  
 मूर (का०) । ७—निशार्ह (स०) ।

पुनि तुम कहा वेम वहं थामा । जगत मून सों बरै उवासा' ॥  
 बिन' संजाग भोग कत होई । दुस बिभोग' महं सुनी न कोई ॥  
 जो लहि मिसै न पीठम पीऊ । बीबन मूर बीउ कर पीऊ ॥  
 तौसहि यह जो होइ तने मागू । भोग न जगत जनम कर रोगू ॥  
 जब पिउ मिसि तने मय होइ पाई । तिहि सुख घापा देख हिउई ॥  
 तब सुख भोग निहृष सुख नाहीं । के सुख पीठ वेम दुख माहीं ॥  
 जा महं मीठ मिसन नै भासा । जो मन सबा' रई पिउ पासा ॥  
 पीठ भिन बिन तजौ न पेम् । कैतै तबी बीहू मे नेम् ॥  
 के पीठम सम बीब गबाऊं । के बिउ' का बिउ पीठ सी बाऊं ॥

बोहा—जगत रोग' मय' भोग' जो' जो लय मिसै न' पीऊ ।

तो लय हा पिउ वेम सों नेन न टारौ पीऊ ॥१११॥

पुनि तुम बहु सिद्धा' मुस घानी । जने देस महं हास कइानी ॥  
 मेम साम भाहिं हसी जो कोई । पोषा बार वेम सुख होई ॥  
 क्यों क्यों बाज जेप नहं हसी । ल्यों र्यों ताहि वेम परपरी ॥  
 तीसं हसी बहुष ही रोऊं । पल भर वेम' मीठ न बिघाहूं ॥  
 वेमहु ठो रोए सुन पाई । तिहि कारण रोबन मोहि मारे ॥  
 जो बिन नेनति' नीर न बरै । वेम मीठ सां प्रंठर पर ॥  
 बिउ बिउ पद' पिउ वेम गो प्राणा । मही जाय जब मरन निराणा ॥  
 सपने सुनी हंसव मल माहीं । तिहि रोऊं सपने जग माहीं ॥  
 सपन सन' सख घामम होई । जे रे हंसहि रोबहिं पुनि सोई ॥\*

बोहा—इतौ न हास कसक सों जा वेम रई मन माहिं ।

इहि भांगू' परबाह जम, किउ कसक' ठहरहि ॥११२॥

बोहा—१११-१—निरासा (का०) । २—पुन (का०) । ३—पीठक (घ) ।

४—मीठम मिसै न पीऊ (का०) । ५—जो (घ०) । ६—तन मई (का०) । ७—बहुष (का०) । ८—पाही (घ०) । ९—पुनि रई सबा तिहि (का) । १०—बिहि बीनु (का०) । ११—भोग (का) । १२—महं (घ) । १३—बीब (का०) । १४—पीठ (घ०) । १५—यू (का) ।

बोहा—११२-१—वन्धिया (घ) । २—पम न नीठ (घ०) । ३—नैन (घ०) ।

४—बरै (घ) । ५—पम (का) । ६—रोए (घ०) । \*इसके परबाह 'स' प्रति में निम्नलिखित भीपाई है या का' प्रति में नहीं है —

जन जो नैन वेस लग रोबहं । प्रवृत्त मुक्ता मान पिराबहं ॥ जेपक है ।

७—इहि स्वास (का०) यई जो घास (घ) । ८—राबे (घ) ।

पुनि तुम यह बोले सिय बानी । राजह महं होइ है अपमानी ॥  
 यह है अपमानी म' मानी । यही अपठ मैं पठ कर बानी ॥  
 और न मान मान मोहि सोई । पेम मान अपमान न होई ॥  
 पेम मान माना अपमानु । सो अपमान मार अभिमानु ॥  
 बासी होइ पेम समाना । सो अपमान मान में माना ॥  
 धी किहि कर होई अपमानु । बिठ बिह कर तिहि माह समानु ॥  
 भुनी बेह सेह कर बेरी । तिहि कै मान कौन पठ मेरी ॥  
 बेह मान तिनही प माना । बिह मन पेम ग्यान महि धारा ।  
 का इहि छु छे मान भुलाबहु । पेम मान अपमान न जानहु ॥

बोहा—भूठ मान ए' मान मत्र काया के सममान ।  
 मान कियो में मान सी' रीठ पेम अपमान ॥१३३॥

पुनि तुम मोहि यह बचन भुलाबहु । धीत्र घरहु मन बिन भरमाबहु ॥  
 यह बचन फिर फिर मुख भाषो । कहा करहु छिन' जिम मत्त राखो ॥  
 धीत्र बचन मोठो मोहि सारै । यातै पेम अगिन उर जाये ॥  
 ज्यों ज्यों अगिन होयें महं बहै । त्यों त्यों पम लामि' मन रहै ॥  
 तिहि कारण माहि अगिन सोहाई । बरती अगिन पेम सियराई ॥  
 नें सी' जरी धीत्र सुन बैना । तब छावन होइ बरदाहि नैना ॥  
 तने भुटाइ ज्यों धाक' भुटाही । दगाय नदी बहूँ दिधि उमड़ाही ॥  
 मपट उसास सो पवन हिमोरा । बाई मैह अगिन कर जोरा ।  
 अखिन लामि रहै वनाबत । दामिन होइ हिय चमक दिखाबत ॥

बोहा—धीत्र बचन मोहि अगि बचहि सुनि हिय होइ हुमास ।  
 उमगि पेम तन' बाक' मन' से राये पिठ पास ॥१३४॥

बोहा—१३३-१—जुमहि (का०) २—इहि (का०) । ३—ही अपमानी (का०) ।  
 ४—अपमानो (का०) । ५—होइ है (का०) । ६—बीजो तिहि कर सहा समाना (का०) ।  
 ७—हेरी (का०) । ८—मान मत्र मान ए (का०) । ९—से (स०) ।

बोहा—१३४-१—छिन जौम न (म०) । २—मया (स०) । ३—छावन बक  
 (का०) । ४—मादो (का०) । ५—वन (म०) । ६—प्राग (स०) । ७—मास (का०) ।  
 ८—वन (का०) । ९—गाइ (स०) । १०—वन (का०) ।



पुनि तुम' यह बोले विप बानी । रात्रह महं होइ है अपमानी ॥  
 यह' है अपमानी मे' मानी । यही अपत मे पत कर बानी ॥  
 धोर न मान मान मोहि माई । पम मान अपमान न होई ॥  
 पेम मान माना अपमानु । सो अपमान मोर अपमानु ॥  
 आसीं होइ पेम मन्मत्ता । सो अपमान मान मे माना ॥  
 भी किहि कर होई' अपमानु । त्रिउ त्रिहं कर' तिहि माह समानु ॥  
 मूनी देह यह कर बरी । तिहि कै मान कौन पत मेरी ॥  
 देह मान तिनही मे मानी । त्रिन्ह मन पेम म्यान महि घानी ।  
 का इहि छु छे मान मुसाबहु । पम मान अपमान न जानहु ॥

बोहा—भूठ मान ए' मान मब काया के सममान ।

मान किपो मे मान मो' रीन्ध पेम अपमान ॥१३३॥

पुनि तुम मोहि मह बचन मुनाबहु । बीत्र बछु मन त्रिन मरमाबहु ॥  
 यह बचन फिर फिर मुख मानो । कहा कछु छिन' त्रिय मस राखो ॥  
 बीत्र बचन मीठो मोहि मागि । पाई पेम अपिन उर जाय ॥  
 ज्यों ज्यों अगिन होय महं बहै । त्यों त्यों पम लागि' मन रहै ॥  
 तिहि काल माहि अगिन छोहाई । बरती अगिन पेम तियराई ॥  
 म दी' बरो बीत्र सुन बेना । तब सावन होइ बरगहि नैना ॥  
 तने मुराह ज्यों धाक' भुराहीं । दगप नदी बहूँ दिशि उमड़ाहीं ॥  
 सपट उपास जो पवन हिनोर । बाई देह अगिन कर जोरा ॥  
 अगिन सायी रहै बनाबत । दामित होइ हिय चमक दिखाबत ॥

बोहा—बीत्र बचन मोहिं अति रचहिं सुनि हिय होइ हुआग ।

जमगि पेम तन बाह' मन से राये पिठ पाय ॥१३४॥

बोहा—१३३-१—तुमहि (का०) २—इहि (का०) । ३—हैं अपमानी (का०) ।  
 ४—अपमानी (का०) । ५—होइ है (का०) । ६—जीउो तिहिं कर तहाँ समानी (का०) ।  
 ७—देरी (का०) । ८—मान मब मान ए (का०) । ९—सें (न०) ।

बोहा—१३४-१—दिन जिय न (म०) । २—सदा (स०) । ३—सावन उर (का०) ।  
 ४—मानी (का०) । ५—मन (न०) । ६—आय (स०) । ७—मास (का०) ।  
 ८—मन (का०) । ९—दाड (न०) । १०—उन (का०) ।



पुनि तुम माहि उरुन पंगारु । उन बहार विउं लोच बंकावु ॥  
 बड़ी रवाई उन दुवारु । तब बर लगी बड़ी बंकावु ॥  
 फादि डार पारुन बनिा । घावुन विना बरन न दुवारु ॥  
 के गो पादि जो लंगा हारि । दिदि धो गारुहि भर न हारि ॥  
 ग्यादि जाय घावु बरु बागी । बा बरुने घावु बर जाही ॥  
 के गो पादि दिदि घावु बहारि । येम बगी होर पदुवारु ॥  
 जो अपरि बरुने उन को । गो घावुन पुनि उमटि न होई ॥  
 हेरि ज्ञा बहु उरु दिवारु । दिदि विन घावा देर गवारु ॥  
 ११ बनि गारु गिउ केर । बाउ न विरा विरुहि नृप हेरु ॥

रोहा—बादि बगारु पीरु पदु को बा विरु का होर ।

एरु जीउ के बर विनु पीरु न वारे कार ॥१३३॥

अपरि रावा बड़ी गमवारुहि । येम गमरु पाह नहि पारुहि ॥  
 एरु लने छावा बग करे । भवनक महर न राव रहे ॥  
 बाडा विरु उरुन बेरागा । मा भा नबर कउम घमुराणा ॥  
 रावा येम मरुद गवारु । बा बाउ बारापड़ी पडारु ॥  
 ये सब सींग गिगारुन गए । येम कथा छनि पेनी भए ॥  
 मुन पेनी मरु बपन बवारु । गवरी येम घावु पण हारु ॥  
 घावुनी सींग विमरु सब यरु । उरुनी येम सींग उन लरु ॥  
 उरुनी घना छावा बरु बघानु । रोवहि मुवहि साद मन घ्यानु ॥  
 येम समुह छावा होर रही । घावु प्रबाह मरी जल बही ॥

रोहा—रावहुं गमुम्वरुन गए, घाए समुभ गवारु ।

घावु बमुम्वरुहि येम छौ पुनि छैतहि वरि जाद ॥१३६॥

रोहा—१३७-१—के (बा०) । २—मपम (छ०) । ३—पराई (छ०) । ४—  
 विरु उरु मरुहु (म०) । ५—गानहि (बा०) । ६—बाउ मरुद (छ०) । ७—विनु  
 (का०) । ८—मन (छ०) । ९—रुगही बचन (म०) । १०—गुण (छ०), सुउ (का०) ।  
 ११—पण (का०) । १२—गुनी (बा०) । १३—यो छके सुउ देर पुनि (बा०) ।  
 १४—नव (का०) ।

रोहा—१३६-१—वणि (बा०) । २—महो रुदि न रासी (का०) । ३—ऐरो  
 (छ०), घंघु (का०) । ४—बिना घेउ (म०) ।

राजहिं पवन अगिन मा वेम् । मूसा मर् वेह इव नेम् ॥  
 रातहिं विषत रहे बैरागा । यद तन सुरत वेम मन सागा ॥  
 राज काज सब बीहू बिमारी । सीन्हू वेम कर्ह' धालाकारी ॥  
 जित देखेँ तित पीठ पिपारा । दाही रूप ठकेँ संमारा ॥  
 धापा बिबर बही' होइ रहा । ऐसे गहन' वेम मन गहा ॥  
 सोई' बाप परे हुर स्वामा । धीर छाडि बीहूसि सब धासा ॥  
 जो कष्ट बाठ रखा' मुक्त बाहा । बाठ कहत बहू सुरत निबाहा ॥  
 बोधो गृहो' डोर अनु लाई । एको स्वाँठ पकेठ न काई ॥\*  
 का मा कर्ब जो वेम कहानी । ऐको पम पगे' तब आनी' ॥

रोहा—मिसा जो काहू पीऊ सो, तो" वेम करो मह" नेम ।  
 प्रेमी" प्रीतम' मितन को, बीप बनीठ सो वेम ॥११७॥

जो कोऊ बाके रंग रात । सोऊ पुनि ताके मर मात ॥  
 या जिहिं बहै बहै तिहिं सोऊ । एकहिं ताप तने मिसि दोऊ ॥  
 वेम बनीठ एक बुहुं भोरा । बहू सुरत डोरी कर जोरा ॥  
 मोची प्रीत न रहे दुखानो । जिन पासो मारि तिन जानी ॥  
 तन यहू विस्ति मान सो' म्प्राय । सा एकइ जो जानन' हारा ॥  
 धी' पुनि पचन प्रीत अब होई । तब तिनहुं महू मर न काई ॥  
सैन इहां जो' रकत नडाबा । बहू मजनू के' नैनहिं धाबा ॥  
 घंठर' लीनी बेह दिबाई । जीनी भे तू बीच कपाई ॥  
 तनमै भए' न घंठर कोई । तन धो प्रान सो एकै होई ॥

रोहा—तन' सब ताहि" घतन मई घतन सब तन माहू ।  
 बहू घतन तब मै" भयो घतन दुखिय पुनि" माहू ॥११८॥

रोहा—११७-१-की (का०) । २-बैहू (म०) । ३-बहन (स०) । ४-जोई (स०) । ५-कहा (का०) । ६-करी (स०) । ७-जिन (म०) । \*का' प्रति में नीचे की चौपाई परसे है । ८-मारै जो प्रेम (का०) । ९-बकी (का०) । १०-जानी (स०) । ११-तू (का०) । १२-बहिं (का) । १३-प्रमे (स०) । १४-प्रेम (का०) ।

रोहा—११८-१-जो (का०) । २-जाकिन (म०) । ३-धीर (म०) । ४-इहां नैन (का०) । ५-नै (का०) । ६-ही क बहिं (का०) । ७-घण्ट (म०) । ८-जहीं (का) । ९-सोई (म०) । १०-नब (का०) । ११-जाण (म०) । १२-जन (का०) । १३-दुखिय तब माहू (म०) ।

जब घनि नेम बरिह नर मया । ननु गांधा हिर नह' रया ॥  
 गल्ल तरल निग उ' समाप्त । मर गांधे निग नर घावत ॥  
 नी घा निगा भइ ठागी' । बाडी रैन राव विमि बागी ॥  
 नंजन मन पार ननु परे । नूनन बम्' गा लम्पट्टि' नर ॥  
 बरति मने मनुग दुवाया । गाहि मने गिहि' पनर विवारा ॥  
 तीउ न उरळ' निग' के हरे । मानी' बरनी बागा परे ॥  
 लही' भरम जगत नर बाबा । नाहिन रिग' बापा वहु बाबा ॥  
 द्विपरे' हाग पना चधिपारा । गारे दिने पार उजियारा ॥  
 इतही घानि राग निग लाई । मर जाने दुग घोर न जाई ॥

दोहा—पम बरिह सोका छा मर, जना छारि हिय माहि ।

मिना पाव गां' रका पानन कोळ माहि ॥१३९॥

प्रथम नर मन बिन बलाया । गल्ल नमुम' ताके रंग' घारा ॥  
 रनि गा घनन बरन उजियारा । परा हुना हिर' बिनपारा ॥  
 जब मणि सोन पनन गा जाया । गुणगा हिया जलन उन लाया ॥  
 बरिह बिपा मर जाइ न बाडी । ज्यों ज्यों दुई चधिप' रयो बाडी' ॥  
 रागहि' सगी राइ जब जागी । उ' बे' मन र विउ माही ॥  
 हाव बिन मं टकी मपारे । मन इहां मन' वहा मियाई ॥  
 गाइ मुरा टागी पुनि रोने । मैक न मैम' नीर बिछोरे ॥  
 गमि कहे मरा मुरज का' ध्यानु । पाव रैन निठ करे बिहानु ॥  
 नी' जो गई गो फिर' ना घाई । घाई' उभिक भोके' फिर' जाई ॥

दोहा—नीर निराम' घाई के कोन ठीर ठहराह ।

मैन जो मंहर नीर के तहं विउ रहा समाह ॥१४०॥

दोहा—१३९-१—बहा (स०) । २—माहि (स०) । ३—परे (का०) । ४—सानी (का०) । ५—घावत (स०) । ६—ठागी (स०) । ७—नोनुम (स०) । ८—पली (का०) । ९—का० प्रति बे मही है । १०—गा बहि (का०) । ११—ऊँड़ (का०) । १२—जानों (का०) । १३—घागहि (स०) । १४—एह (स०) । १५—द्विपरे (का०) । १६—ठागी (स०) ।

दोहा—१४०-१—कवन (स०) । २—कर (स०) । ३—हर (स०) । कवन (स०) । ४—सो (का०) । ५—काही (स०) । ६—तके (स०) । ७—मनहुं (का०) । ८—घोरन घोवन देह न गां (ग) । ९—बर (का०) । १०—बहुर (का०) । ११—रोई (का०) । १२—छांग (स०) । १३—मर (स०) । १४—मिती घाई बह (का०) ।

मिस दिन रहे वेम धनुषपी । सुधा बटी तिरछा घटि जागी ॥  
 वेम सबर' (सबल) भा ठग भा हीना । साग बाध नीर घटि भोना ॥  
 पठा कबन विपर दिखराबा । धनु' पिउ वेम गहन मह पाबा ॥  
 बैठि उठै' बुद्ध बने पमऊ । धनुहुं सखी न जानहिं मऊ ॥  
 रूख रूख बोनी तिन्ह पाहा । रोइ रोइ भुरखे मन माहा ॥  
 पामु निघरि' नई बस इरा । मुख बाने देपे' जल मरा ॥  
 इहि मिस घामु डार सब लेई' । रूढ बरी छु छी के देई ॥  
 जोन तिन्हईह प्रमुखा इर जाई जो' घाल्न मिस नेइ जंभाई ॥  
 देखी कौन परी मोहि बानी । प्राखिन इरे जंभाइन पानी ॥

बाहा—दिरह दुराई' विरहिनी मिन जानो कि मराइ ।  
 रबी" पियन सीपर" रहे, खुने" यीन' हाइ जाइ ॥१४१॥

इक दिन पान गोइ जई परा । कानि यह मरम नीरु मइ खरा ।  
 महा विचित्र कत बहु खेने । उरद मूग पापर सब बेने ॥  
 कौन खेम जो तिन्हु मई खेना । गुरु निवार कौरइ बे बना ॥  
 बैठ इकन कहसि कस बारी । पुनी मसि धुवर उत्रियारो ॥  
 पच्छर' पौन कौन' यह बहा' । फिरल प्रकाम राफ घस रहा ॥  
 बदन दिना जोवन घिउ' मरा । बालन का धुमर जिहिं बरा' ॥  
 साम न पबहु पम बीमाया । बिउ पातक जिहिं हाइ जामा ॥  
 पनरुय मेम नैन कम' भर । किहिं बंभार' प गुंजन परै ॥  
 मोहि तुम हाइ विंड' इक प्राता । मोषो कहा मरम मिन घाना" ॥

बाहा—मोहि तुम्हारे मुञ्जमुक, सो तुम्हरे दुख दुख ।  
मेक" जो देखी घनमनी भी मन नाही मुकन ॥१४२॥

श्लो—१४१-१—पनु (का०) । २—पानी (म०) । ३—उहि जन (का०) ।  
 ४—नीर (का०) । ५—इक बे जल परा (म) । ६—देई (का०) । ७—एता परी  
 (म) । ८—हू (का) । ९—निघरिं मीम (का०) । १०—इरावे (म०) । ११—  
 धाने (म०) । १२—मो टारी (का) । १३—नेन (स) । १४—पियन (का०) ।

श्लो—१४२-१—पुन मुर (म) । २—पौन (म०) । ३—मरा (का०) । ४—  
 विरिं (का) । ५—बहिं (का) । ६—परा (का) । ७—जम (का०) । ८—  
 जंभाइ (का०) । ९—परे (का०) । १०—गर (म) । ११—जाना (म) । १२—  
 गरी (का०) ।

जब प्रति पैम बधिक मल गह्रा' । उतहुं सोचा हिय मड' रह्या ॥  
 तरफ तरफ मिस उठै' समावत । मल साम नित्रा कत घावत ॥  
 नीर थोटे' थिगता मड ठाटी' । बाडी रैन आम किमि काटी ॥  
 कबन नैन फार जगु परे । नूतन' बन्ने' सा' तरफहिं खरे ॥  
 बचपि कुसे मजूस बुबारा । नाहि मनी तिहिं पसक क्रिबारा ॥  
ठाौर' न उठक' निपट कै डरे । माली' बरनी कोपा परै ॥  
 एही' भरम जगत सब बांधा । नाहित किस' बांधा यह बांधा ॥  
 हियरे' होत जला धंधिबारा । ठारै पिनै जाब उबिबारा ॥  
 इनही भाति आम मिस खोई । मन जानै दुख धोर न कोई ॥

बोहा—पैम बधिक सोचा सो मन, हुना ठाकि हिय माहिं ।

मिखा पाब ठारै' रकठ खानत कोऊ नाहि ॥१३६॥

प्रथम पत्र मल बिज बगाबा । सहज कृपुम' ठाफे रन' घाबा ॥  
 बेखि सो धनम बरन उबिबारा । परा हुठा हियरे' थिनगारा ॥  
 प्रथम सगि पौन पबन सो जाया । सुसगा हिया बरन उत लाग्या ॥  
 कठिन बिबा मुख बाह न काडी । प्यो' प्यो' पुरै धधिक ल्यो' बाडी' ॥  
 पठहिं सखी थोइ अब बाही । उठ बेटे मन बै पिठ माही ॥  
 हाप बिज से टकी लगाबे । नैन इहाँ मन' बहाँ मिलाबै ॥  
 नाह सुरत डोपी पुनि रोबै । नीक न नैनन' नीर बिखोबै ॥  
 सधि कई सदा सुरज को' ध्यानु । जान रैन मित करै बिहानु ॥  
 नीर जो नई सो फिर' ना घाई । घाई' उमिक भाक' फिर' जाई ॥

बोहा—नीर मिरासै' घाई कै कौन ठौर ठहराइ ।

नैन जो महर नीर कै वई पिठ रहा समाइ ॥१४०॥

बोहा—१३६-१—कहा (स०) । २—गाहि (स०) । ३—परै (का०) । ४—साली (का०) । ५—घावत (स०) । ६—ठाटी (स०) । ७—मीनुम (स) । ८—मली (का०) । ९—का० प्रति में नहीं है । १०—ना बहि (का०) । ११—ऊँठ (का) । १२—जानो (का) । १३—आपहिं (स०) । १४—उह (स) । १५—हियरे (का०) । १६—ठापी (स०) ।

बोहा—१४०-१—कबन (स) । २—कर (स०) । ३—हैरे (स०) । कपन (स०) । ४—सो (का०) । ५—काडी (स) । ६—ठके (स) । ७—मनहुं (का०) । ८—धीरन धोवन बेइ न सारै (स०) । ९—कर (का०) । ११—बहुर (का०) । १२—रोई (का) । १३—खान (स०) । १४—सर (स०) । १५—मिठी घाई यह (का०) ।

मिस दिन रहे पेम धनुषानी । सुभा पटौ तिरखा प्रति जाती ॥  
 पेम सहर (सबल) भा तन भा हीना । साम बाध नीर प्रति भीता ॥  
 यता क्वल विरर दिखरावा । धनु' पिउ पेम गहन मह प्रावा ॥  
 बैठ उठे' बुद्ध बने' पसऊ । धनुहुं सखी न जानहिं भऊ ॥  
 छह छह बोनी तिन्ह पाहा । रोह रोह भुरबे मन माहा ॥  
 धांगू निररि' बहे जव डरा । मुब बोने देपे जल मरा ॥  
 इहि मिस धांगू डार सब लेई' । छह बरी छु छी के देई ॥  
 जोन तिन्हहिं' धनुषा डर बाई । ती' धारन मिस सह जंभाई ॥  
 देखी जोन परी मोहि जाती । धाखिन डर जंभाइन पानी ॥

बाहा—बिरह दुराई' बिरहिनी जिन जानी कि सजाइ ।  
 दबी' मगिन धीपर' रहे लुनी' खीन' हाइ जाइ ॥१४१॥

इक दिन पान गोद जहं परी । मधि यह मरम बोक भइ खरो ।  
 महा विविध लस बहु खेने । उरद मूग पापर सब बेने ॥  
 जोन खेम जो तिन्ह गहिं धेपा । पूरु खिमार कीन्ह बे जता ॥  
 बैठ इकट कहति कम बारी । पूनी सति पूरु जत्रियाये ॥  
 धरु' पोन जोन' मह बहा । किरन प्रकाम राक पव रहा ॥  
 बदन विधा खोबन धित' मरा । कारण का भूमर त्रिहिं बरा ॥  
 लाग न धरु पेम जोभावा । बिज बाधक त्रिहिं होइ उगमा ॥  
 धनकट मिय मन कम' भर । किहि बंभान' ए लजन परी ॥  
 मोहि तुम दोइ विडे' इक प्राणा । मामो कहा मरम निज घाना ॥

बाहा—मोहि तुम्हारे मुबनमुब, मो तुम्हरे दुख दुख ।  
 मेव' जो देखी धनघनी मो मन नाही मुबन ॥१४२॥

दोहा—१४१-१-धनु (का) । २-घानी (म०) । ३-उहि जल (का०) ।  
 ४-नीर (का०) । ५-इक सेंजन परा (स) । ६-देई (का०) । ७-रखन परी  
 (म०) । ८-है (का) । ९-निजाई खीन (का०) । १०-डरावे (म०) । ११-  
 जाने (म०) । १२-सी टापी (का०) । १३-जल (स) । १४-विमन (का०) ।

दोहा—१४२-१-धरु मर (म०) । २-पौन (म०) । ३-मरा (का) । ४-  
 विने (का) । ५-बहि (का०) । ६-परा (का०) । ७-जम (का०) । ८-  
 पांवाज (का) । ९-बिरे (का०) । १०-गर (म) । ११-जाना (म०) । १२-  
 बही (का०) ।



बस दिन दुरै' रहै तुम्हनाती । जम बवंन बेन बिनु पानी ॥  
 सो परकीनी' मने ठे सूरी । घानद' मूर पेस बुल मूटी ॥  
 संप सखी' मूठ जोरन मापी । बाटी कहु' बिपोग बैरापी ॥  
 हे हो कछु तुम्हरे मन पाबा । ना बसि म' यह मरम न पाबा ॥  
 कछु तो यहै बार मह काप । मारे मनहुं' पय जफकारा ॥  
 परने लना हूसी बिहमाही । सब' इन ठिमह तेन कह नाही ॥  
 सब तो रहै दुरै दुख मरी । हे कारण बिहि काबै बरी ॥  
 ना कह तेम न सेई माता । हो' हुं करठ' सगै कछु' जाता' ॥  
 परने' बिन' इनके' म्योहार । देखो तेम तेन कै बाप ॥

दोहा—रहिष' तुम्हार' किसान' कौ' का मय' सीम्ह जा बूट ।

धोर पहूँ जानिय बिहि कर बैठे ऊँट ॥१४६॥

निसि जागी ताकर इक सखी । तिन यह मरम बाठ एव मखी ॥  
 का देखै बैठी मन मारे । सब' निसि कर दिया का बारे ॥  
 सोचहु' मीच रहै होर बाती । निरुट म प्रीतम तेन संपाती ॥  
 बिमल बदन भूमर होर रहा । पसट जाति हियरा' पै रहा ॥  
 धारी बिब मिन मन पाड़ी । पायू' पेस प्रबाहु बहाड़ी ॥  
 धालिन ते' कह बिब न टारै । बिब मई सो बिब निहारै ॥  
 मन उठ जाइ रहा बिब पीऊ । जीब बिब महं ठन बिन बीऊ ॥  
 लखन सखि सो' हूँनी पुझारी' । काहै उठि बैठी कुम बापी ॥  
 सो यह कौन बिब कुम पाहा । बिब मई बिबन बिहि' माहां ॥

दोहा—बिब तुम्हारो मगत जिउ ना मो बिब निरखीउ" ।

रीम पाप पर घायनीं पाप हउडु" बिब पीठ ॥१४७॥

दोहा—१४६—१—रिन (का०) । २—घादि करत जोही सब छुटै (स०) ।  
 १—घानन (स०) । ४—दुनी (का०) । २—परखी (का०) । ६—हियमडु (स०) ।  
 ७—ठा (का०) । ८—गम (स०) । ९—बिन (का०) । १०—बुताबा (का०) ।  
 ११—मनहिय (का०) । १२—बटवारत (स०) । १३—हूसी ही भाही (स०) ।  
 १४—जम (म०), मन (का०) । १५—हानिह (स०) । १६—करठे (का०) । १७—  
 य (म ) । १८—बाप (का०) । १९—करछुबह (स०) । २०—कौन्द (का०) ।  
 २१—एक (का०) । २२—नाहिन (म०) । २३—लार (स०) । २४—विमान (स०) ।  
 २५—का (स०) । २६—बिहि पामेहि (का०) । २७—उर मो पने (म०) ।

दोहा—१४७—१—बर निया जैमे रिन बाटी (का०) । २—मा बिहि (का०) ।  
 ३—होरा (का०) । ४—एक (म ) । ५—मज (म०) । ६—संभवन (का०) ।  
 ७—ने (का०) । ८—हूँबारी (म ) । ९—त्रिय (का०) । ११—परि जीब (का०) ।  
 १०—होहि (का०) ।



माता ना सपने मिथि बरी । ना दिन बेधि छराबा छरी ॥  
 डर छर ताहि जो बोह कर जाने । उर बायी सो घंवर ठाने ॥  
 मोहि ता' बिन जा हिई समाना । डिस्टि न परै कतहुं कछु घाना ॥  
 जो सपने देखी ता सीई । सापर ता पुनि धीर न कोई ॥\*  
 मन मोरा एकाहि रंभ राता । बिन भरमक जानहु मोहि माता ॥  
 धंभ बिबा पुनि जानि न जाई । काया भी' काहे पियराई ॥  
 हाँह यह कछु मरम न जानौ । जो जानौ तो कस न बखानौ ॥  
 मोरे जान बिबा कछु' नाही । देखौ समझि बुझ मन माहीं ॥  
 जो पै' कटुक तुमहि बिठ होई । बूझी मुनी गारक कोई ॥

बोहा—येमी पीतम को मरम कहे न काहु पाहि ।

जाने ताहि जनाइये सोपन सो कछु नाहि ॥१४७॥

माता पंडित बेद बुजाए । भी सब मुनी गारक घाए ॥  
 पीर छार बडे मब धाई । बोलि बेद नारी बिलराई ॥  
 बेद सो बेद बाटी' के नारी । कह' धारोब' उठि बला बनारी ॥  
 ताबत अंभ मत्र बरे घाए । इक वस' परसून विबा बघाए ॥  
बहा' पछन भोम्हा प्रसु'धारे । मुनी गारक मंत्र पडाई ॥  
 मीनागा' मिमान बिनहु ठानी । परै खिमा'बहि पडाहि बुजाए ॥  
 सबै" मुनी घापन गुन कीहा । पै निज मरम न काहु भीम्हा ॥  
 सबही कहा बिबा कछु नाहीं । बिन बिठा भानहु मन माहीं ॥  
तिहि" सो बिबा बिहि कोठ न जानै । जो ननि प्रपने मुक्त न बखानै ॥\*

बोहा—भोम्हा कराहि उपाह" मिसि मुस्ता पडे बुवाइ ।

ना नस" मिसै न कस परै, बीसैं बीब' हराइ ॥१४८॥

बोहा—१४७—१—माता जो (का०) । \* का० प्रति में यह बीपाई नहीं है ।  
 २—एकै (का०) । ३—बहुं (स०) बेहि (का०) । ४—मन की (का) । ५—मोहि  
 (का०) । ६—पुनि (का०) ।

बोहा—१४८—१—नारि (स०) । २—खर (का०) । ३—रोग (का०) ।  
 ४—मातल (स०) । ५—पर (स०) । ६—ऊपरस बिरहन (का०) । ७—भोम्हा बने  
 (का०) । ८—बब बाहीं (का) । ९—बत पिताबे पडे बुवाइ (का०) । १०—पूकठ  
 रई बहुत पछाई (का०) । ११—छेई (स०) । १२—इहि (का) । \* इसके  
 परभात् स० प्रति में निम्नलिखित बीपाई है जो का में नहीं है —

निज मन मरम जान पिठ प्यारा । जो बिठ सौं पत क्षिण नहीं म्यारा ।

१ से अधिक होने के कारण प्रक्षिप्त है ।

१३—बुवाइ (का) । १४—मिल परी न प्रति को (का) । १५—जु घाय मुंभ  
 धमनाइ (का०) ।

बह दिन दुर्ग' रहे कुम्हिलानी । जयै कबल बेन बिनु पाता ॥  
 पा परकीनी' मयै ठे छुगी । धामय' मूर पेम बुल गूटा ॥  
 संय सखी मुख जारन लानी । बारी बह बियाग बैरापी ॥  
 हे हो बघु कुम्हरे मन धावा । ना बनि म' यह मरम न पावा ॥  
 बघु तो यहै धार महै काय । मोरे मनहूँ परा उरुकारा ॥  
 पहलै लया हूँ बिलहाही । धब' इन तिलगह तेम बह गारी ॥  
 यह तो रहे हुरै दुम मरी । हे काल बिहि कायै बरी ॥  
 ना बह तेम न सेम मीठा । हाँ हूँ कण्ठ' सयै कछु' भाजा ॥  
 बरबै' दिन' इनक' व्याहार । देखी तेम नेम ई पाय ॥

बाहा—रहिष' कुम्हार' विमान' कैं' ना मय' सीम्ह जो बूट ।

घोर' पहुँचै जानिय बिहि कर बैठे छै ॥१४६॥

निधि जागी लकर इक मली । तिल यह मरम बाठ सब लली ॥  
 का देखै बीटी मन मारे । मब' निधि बरि दिया जा बारे ॥  
 सोबहूँ मीच रूँ होर बारी । निकट न प्रीतन तेम मचायी ॥  
 बिमल बदन भुजर होर रूँ । पसट जोति हियर' वै बहा ॥  
 धाम बिज मित्र मन मारी । धामू' पेम प्रबाह बहाही ॥  
 धाडिन तै' बह बिज न टारै । बिज मई सो बिज निहारै ॥  
 मन उठ जाइ रहा बिज पीऊ । जाँब बिज महै लन बिज बीऊ ॥  
 लजबन मखि सो' हूँसी पुकारै । काई उठि बैटी गुम बारी ॥  
 धी यह कीज बिज गुम पाहं । बिज मई बिजबन बिहि' माहं ॥

बाहा—बिज कुम्हार भाउ बिज ना सो बिज निरखीठ' ।

टीक धाम पर धापनी धाम हरहु' दिन पाठ ॥१४७॥

बाहा—१४६—१—रि (का०) । २—घाँ करण जाही मब छुँ (स०) ।  
 ३—धामन (म०) । ४—दुर्गी (का०) । ५—बराही (का०) । ६—हियनह (म०) ।  
 ७—ना (का०) । ८—गन (म०) । ९—मिन (का०) । १०—बुटावा (का०) ।  
 ११—बनहिय (का०) । १२—दरुकारा (स०) । १३—हूँसी ही भाही (म०) ।  
 १४—उन (म०), मन (का०) । १५—हानिह (स०) । १६—करा (का०) । १७—  
 बघु (म०) । १८—बाटा (का०) । १९—बखुबह (म०) । २०—कीन्द (का०) ।  
 २१—एक (का०) । २२—नाहिय (म०) । २३—खार (म०) । २४—विमान (स०) ।  
 २५—को (म०) । २६—बिहि धामेहि (का०) । २७—उरमो वंश (म०) ।

बाहा—१४७—१—बर दिया जयै दिन बारी (का०) । २—ना बिहि (का०) ।

३—हीण (का०) । ४—एक (म०) । ५—मंय (स०) । ६—धंभुवन (का०) ।  
 ७—न (का०) । ८—हूँकारी (म०) । ९—जिय (का०) । ११—परि जीव (का०) ।  
 १२—हूँहि (का०) ।



पिउ है सवन दिनी कुल घोरी । सो दिन बनति मुक्ति कन घोरी ॥  
नन मुह पर मन फिर ॥ प्रकाश । जेय ज्यों मुरल डारि के घामा ॥  
 घनि ब्याकुल तल तरई परा । ज्यों पंथी उड़ई जनु गिरा ॥  
 ना बिउ निकम जाइ म रहे । सीसा सीसी मरु तन वही ॥  
 जयनि तार बिच मो पाई । रात दिवस बिउवो निहि माहा ॥  
 घबियां तो ठायी बिरमाऊ । मन बचन घब न उहाऊ ॥  
 जो तारे निर मुरल पाई । घात वही घी नन क हाई ॥  
 त्रिये निर नन ॥ कन कर मुखा । निहि कर बिच दिवावन कना ॥  
 वह जान यह बिच न ॥ बीऊ । त्रिये ॥ को बीऊ प्रात मो पीऊ ॥

सोहा—त्रिये ॥ ब्याकुल प्रीतम दिनी नन दुख मन ॥ प्रकमाइ ।

मो ॥ इन दुख शोनी नई पीठ मिन फिर ॥ १२३॥

प्रीतम शबि घवार दुख तारा । उर महर पर नदर हिमारा ॥  
 तन बौहिन भा बगजर घाना । राम राम दुख नीर ममाना ॥  
 जयनि त्रिये उलिपहि हाइ मीना । उऊ मो नीर हाइ नहि रीना ॥  
 रम मगाइ इवन पर घावा । नहि ताहि बिन काठ तीर सगावा ॥  
 जा घब बगि पीन होइ पावनि । यहि घवाम नै तार सगावनि ॥  
 ती बाई नाहिन निहि घामा । घोर जवन उठई न टवामा ॥  
 प्रीतम काठ परे मुख कारी । काइ बाल मुख मों यहि मीरी ॥  
 पिउ तन मन जावन त्रिये ठाय । या धन म कछु नाहिन मारा ॥\*  
 घासी बस्तु घात किन नहू । काज पठा ॥ कीर कन दऊ ॥ १

सोहा—प्रीतम नू दिन नरनि मयि परी प्रथ रधि माहि ।

घब उलटे इवन मयी ठरी हाइ ही माहि ॥ १२८ ॥

सोहा—१२७-१—निरट निरुट मनि (वा) । २—निरु म (म०) । ३—मरी (म) । ४—घबियुन (न) । ५—घायो (वा) । ६—मरमाऊ (म) । ७—बहाऊ (का०) । ८—मन (स) । ९—यो (वा०) । १०—निग (वा) । ११—बिदाऊ (वा०) । १२—यी कर प्रीतन (का०) । १३—मन (वा) । १४—मन (वा०) । १५—तन (का०) । १६—त्रिहि यहि (वा) । १७—नव (म०) ।

सोहा—१२८-१—त्रिये (न) । २—नव (वा०) । ३—बुवन (वा०) । ४—माहि (वा) । ५—ताहि (स) । ६—नीर (म०) । \*घर बीगाई म० प्रति में नहीं है । १ इनके बरवान् म० प्रति में घर बीगाई है —“निर बिन कीन पार चरुचरी । घावा बीन सो बीन निदाई ।” ७—मो लेटी हो (वा०) ।

एक दिन बिरह दाह उर' वही । बैठ इकठ बकेवा' रही ॥  
 धापहि धाप धीर नहीं कोई । हियेँ खु बुझ बुना' तंग होई ॥  
 हियरा' कुषा उमंग होइ रहा । मन बैराब रहिट' होइ बहा' ॥  
 सुरत मात' मखिया तेह' सरी । कोटिक बार भरै' भर डरी ॥  
 हुवा जो हीर सीप सों भरा । फिर डर नीर किमारिन परा ॥  
 सुरत ध्यान पिठ सों प्रपुरागी । बाँट करे बिरह बैरामी ॥  
 पीठम सुरत करसि क्यों' न मोरी । सब जन छाड़ि भई हौं तोरी ॥  
 प्रब जयि बिरह बान में सहे । रोमहि रोम पंठि' तन' रहे ॥  
 प्रब सार्न सो बाब पर सग । जिठ प्रकुसाइ बहे तन त्याग ॥

बोहा—अबपि भीड़ तन त्यागि कै बेन' मिसै चोहि बाइ' ।

वै मन बाब' कि तन प्रसूत भीड़ तो माहि समाइ ॥१३५॥

पिठ जिठ तू ता' सुन कल' नाही । माहि जिठ को संसा' कछु नाही ॥  
 यह जब सब छोड़ोँ निज रहा । प्रबहुँ मनमिज बाइ न कहा ॥  
 निज जिय बाम प्रतन तन तोरा । यह' मन भूस कहीं जिउ' मोरा ॥  
 तिन कारण बिनती हौं करी । हा हा बाइ सीस मुई परी ॥  
 तन होहि जगि बहुत पुन पाबा । रूप रंग रस सबहि नवाबा ॥  
 बिरह प्रगिन तरनी तन बाघ । मुख मुख रहा हीर चारा' ॥  
 रहा न रक्त न मास न मनकी । हाक भुराइ रहे हीर किनकी ॥  
 नवें सो पेंठ छाप होइ नई । तेऊ' प्रब दू' कर' भई ॥  
 बिरह राग घर बहुत बढ़ावा । ताहूँ वै पिठ' करै सजावा ॥

बोहा—मीठम जिउ' तू' तन प्रसम वरा रहे बुझ पास ।

बिरह नास' बुझ तन सहे, सोइ बाइ निरास ॥१३६॥

बोहा—१३५—१—बुझ (का) । २—एक ठाँ (का) । ३—बुझा (स०) ।

४—छोई (स०) । ५—हिय को हन उमंग भर (स) । ६—छूत (स) । ७—मया (का०) । ८—गाम (का०) । ९—से बरी (का) । १०—पड़ी (स) । \* जनपुर की प्रति में यह चौपाई ऊपर की चौपाई (सुरतमात मखिया) के पहले भी मिली परै है धीर कही इतना उतर यह इत प्रकार है—'भर कर नीर मयापर पर' । ११—किन (स) । १२—बहे (स०) । १३—होइ (स) । १४—नैक (का०) । १५—बाइ (स) । १६—बाऊ (का) ।

बोहा—१३६—१—जोसों (का० स) । २—सबबाही (का०) । ३—सांसा (स०) । ४—तिहि (का) । ५—भई (स०) । ६—मम (स०) । ७—नारा (का) । ८—माघ (स) । ९—है छोऊ (स) । १०—गर (का) । ११—मीठि करै सो पाबा (का०) । १२—जो (का०), क्यों (स०) । १३—जो (का०) । १४—निरास (स०) ।

पिड है सबन बिनी मुन सोरी । तो बिज बनति मुकति कन मोरी ॥  
 उन' मुह' पर मन फिर' ॥ प्रकाश । रँप ज्यों मुरल बोरि है घामा ॥  
 प्रति ब्याकुल तन तरलै परा । ज्यों पंथी जइरै अनु विर ॥  
 ना बिज निकम जाइ न रहै । बीबा बीबी महं तन दहै ॥  
 बहनि तोर बिज मो पाहै । राग दिवस चितबी तिहि माहा ॥  
 बंधियां तो तावों बिरमाऊं । मन बंधन धारै न उहाऊं ॥  
 सो तोरे बिज मूरछ चाहै । प्राप रहै धी तन कं दाहै ॥  
 जिय' निज तन' कप कर मुना । तिहि कर बिज निवाहन क्का ॥  
 यह जानै यह बिज न' जीऊ । जिय' को जीऊ प्रात तो पीऊ ॥

दोहा—जिउ' ब्याकुल प्रीतम बिनी, मन' दुख मन' प्रकनाइ ।  
 सो' इन दुख बोनी नरै पीठ विरै फिर' राइ ॥११७॥

प्रीतम बनि धगार दुख तोर । उठै सहर पर सहर हिसोर ॥  
 तन बौहिन का बज्रर घामा । राग राम दुख मोर मयामा ॥  
 जघनि रिग' उतिचहि होइ मोश । उऊ मो मोर' हाइ नहि रीता ॥  
 रम मगाइ बूबन' पर घामा । नहि ताहि बिन काउ सीर तगाबा ॥  
 को धर बनि पौन होइ घामा । पडि धकाम न नीर लगाबनि ॥  
 ती बार्ध नाहिन तिहि' घामा । धोर जनत उरुय न उरामा ॥  
 प्रीतम काठ परे मुक कीरै' । काठि कास मुक सों मरहि सीरै ॥  
 पिड तन मन जोबन जिय ताप । या धन में कसु नाहिन मोर ॥  
 धरनी बरु घाप किन सहू । काय पटाइ कीन्ह कम देऊ ॥†

दोहा—प्रीतम तू मित तरुनि सगि परी प्रम बनि माहि ।  
 प्रम उमटै बूबन सयी तरी हाइ ही नाहि ॥११८॥

दोहा—११७-१-जिपट निजट मनि (का०) । २-निज में (म०) । ३-मने  
 (न) । ४-प्रबिबुत (म०) । ५-धार्यो (का०) । ६-मरमाऊं (म०) । ७-बहाऊं  
 (का०) । ८-मन (स) । ९-जा (का०) । १०-निज (का०) । ११-बिजाऊं (का०) ।  
 १२-श्री कर त्रैबन (का०) । १३-मम (का०) । १४-मन (का०) । १५-मन (का०) । १६-जिहि पाहि (का०) । १७-नव (म०) ।  
 दोहा—११८-१-जिय (म०) । २-नक (का०) । ३-बूबन (का०) ।  
 ४-बोहि (का०) । ५-बोहि (म०) । ६-गीरै (म) । ७-यह बीगई (म०) प्रति  
 में नहीं है । † इनके परचाप न० प्रति में यह बीगई है—“निज बिज कीन पार  
 अनुपारै । घामा बीन बी बीन निवारै ।” ७-श्री तेरी ही (का०) ।